तित्तरीय

Colophon

This document was typeset using $X_{\underline{1}}M_{\underline{1}}X$, and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several $M_{\underline{1}}X$ macros designed by H. L. Prasād. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma.

See also http://stotrasamhita.github.io/about/

For Personal Use Only
Not For Commercial Printing/Distribution

| अनुऋमणिका | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | i |
|------------------|---|--|---|--|---|---|---|---|---|--|--|---|---|--|---|---|---|---|---|--|-----|
| अनुऋमणिका | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | |
| अष्टकम् १ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 26 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 43 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 64 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 87 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 108 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 133 |
| अष्टमः प्रश्नः | • | | • | | • | • | • | • | • | | | • | • | | • | • | • | • | • | | 155 |
| अष्टकम् २ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 168 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 168 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 187 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 211 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 229 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 255 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | _ | | | | | | | | 272 |

306

329

358

358

सप्तमः प्रश्नः

अष्टमः प्रश्नः

प्रथमः प्रश्नः

अष्टकम् ३

| अनुक्रमणिका | ii |
|---------------------------------------|-----|
| द्वितीयः प्रश्नः | 82 |
| · · · · · · · · · · · · · · · · · · · | 411 |
| चतुर्थः प्रश्नः | 37 |
| पञ्चमः प्रश्नः | 43 |
| षष्ठमः प्रश्नः | 54 |
| सप्तमः प्रश्नः | 171 |
| अष्टमः प्रश्नः | 514 |
| नवमः प्रश्नः | 48 |
| तैत्तिरीय आरण्यकम् 5 | 79 |
| | 79 |
| 6.6 | 22 |
| तृतीयः प्रश्नः | 40 |
| चतुर्थः प्रश्नः | 57 |
| पञ्चमः प्रश्नः | 88 |
| षष्ठः प्रश्नः | 24 |
| सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली | 741 |
| अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली | 48 |
| नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली | 54 |
| दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत् 7 | 60 |
| कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम् 8 | 05 |
| | 05 |
| द्वितीयः प्रश्नः | 321 |
| | |

॥ अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षूत्रश्र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष्श्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। ऊर्जुश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टिश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृजाश्र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्रून्थ्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोऽिस् जनंधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणयन्तु॥१॥

सुवीरौः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोचिषा। स्तुतोऽसि जनधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोचिषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्॥२॥

व्यान र सन्धंत्तं तं में जिन्वतम्। चक्षुः सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। मनः सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। वाच् र सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। आयुंः स्थ आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञायं धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थः प्राणं में धत्तम्। प्राणं यज्ञायं धत्तम्॥३॥

प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थ्रश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञायं धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रंं स्थः श्रोत्रंं मे धत्तम्। श्रोत्रंं यज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रंं यज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कल्पयंतं दैवीर्विशंः। कल्पयंतं मानुंषीः॥४॥

इष्मूर्जंम्स्मास् धत्तम्। प्राणान्पृशुषुं। प्रजां मियं च् यजंमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनुत्तौ शण्डामर्को सहामुनां। शुक्रस्यं स्मिदंसि। मृन्थिनः स्मिदंसि। स प्रंथमः सङ्कृतिर्विश्वकंमा। स प्रंथमो मित्रो वरुणो अग्निः। स प्रंथमो बृह्स्पतिंश्चिकित्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुंहोमि॥५॥

न्यन्त्वपानः सन्धेत्तं तं में जिन्वतं प्राणं यज्ञायं धत्तं मानुषीर्गिर्द्वे चं॥ (ब्रह्मं क्षुत्रं तिष्पूर्व्वर्णन्यः रियं पृष्टिं प्रजां तां पृश्नन्तान्थ्सन्धेत्तं तत्प्राणमंपानं व्यानं तं चक्षुः श्रोत्रं मन्स्तद्वाचं ताम्। इषादिपश्चेके वाचं तां में पृश्नन्थ्सन्धेत्तं तान्में प्राणादित्रितंये तं मेऽन्यत्र तन्में)॥.[१]

कृत्तिंकास्वग्निमादंधीत। पृतद्वा अग्नेर्नक्षेत्रम्। यत्कृत्तिंकाः। स्वायांमैवैनं देवतांयामाधायं। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतन्नक्षंत्राणाम्। यत्कृत्तिंकाः। यः कृत्तिंकास्वग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्षत्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमंसृजता तं देवा रोहिण्यामादंधता ततो वै ते सर्वान्नोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमांधत्ते। ऋभ्नोत्येव। सर्वान्नोहांन्नोहित। देवा वै भद्राः सन्तोऽग्निमाधिथ्सन्त॥७॥

तेषामनाहितोऽग्निरासींत्। अथैंभ्यो वामं वस्वपाँकामत्। ते पुनर्वस्वोरादेधता ततो वै तान् वामं वसूपावंर्तता यः पुराऽभुद्रः सन्पापीयान्थस्यात्। स पुनर्वस्वोर्ग्निमादंधीत। पुनर्वेवनं वामं वसूपावंर्तते। भुद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकांमा मे प्रजाः स्युरितिं। स पूर्वयोः फल्गुंन्योरग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमेति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयेत भगी स्यामिति। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यदुत्तंरे फल्गुंनी। भृग्येव भंवति। कालकञ्जा वै नामास्र्रा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वतः। पुरुष इष्टंकामुपांदधात्-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौ ब्राह्मणो ब्रुवाण इष्टंकामुपांधत्तः। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्तः। येऽवाकीर्यन्तः। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्थ्स्यात्। स चित्रायांमुग्निमादंधीत। अवकीर्येव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौंऽग्निमादंधीत। वसन्तो व ब्रौह्मणस्युर्तुः। स्व पुवैनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवैनं प्रजातमाधत्ते। ग्रीष्मे रांजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै रांजन्यंस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। श्रदि वैश्य आदंधीत। श्रद्धे वैश्यंस्युर्तुः॥१२॥

स्व एवैनंमृतावाधायं। पृशुमान्भंवति। न पूर्वयोः फल्गुन्योरुग्निमादधीत। एषा वै जघन्यां रात्रिः संवथ्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। एषा वै प्रंथमा रात्रिः संवथ्सरस्यं। यदुत्तंरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमेत्। अथादंधीत। सैवास्यर्द्धिः॥१३॥

खल्वांधिथ्सन्त फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीतासन्नपततामृतूनां वैश्यंस्युर्त्कत्तेरे फल्गुंनी षद्वं॥——[२]

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवाँक्षिति शान्त्यैं। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेर्वेश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवं रुन्धे। ऊषां निवंपति। पृष्टि्वा एषा प्रजननम्। यद्षाः॥१४॥

पृष्ट्यांमेव प्रजनंनेऽग्निमाधंते। अथों संज्ञानं एव। संज्ञान्ड् ह्येतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्ताम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौं सह यज्ञियमितिं। यद्मुष्यां यज्ञियमासीत्। तदस्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥

यदस्या यज्ञियमासीत्। तद्मुष्यांमदधात्। तद्दश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांन्निवपंत्रदो ध्यांयेत्। द्यावांपृथिव्योरेव यज्ञिये-ऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलांयत। आखू रूपं कृत्वा। स पृथिवीं प्राविशत्। स ऊतीः कुर्वाणः पृथिवीमनु समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे। ऊर्जं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिंहन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा सम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवं रुन्थे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्रङ् ह्येतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकः॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तासामन्नमुपाक्षीयत। ताभ्यः सूदमुपुप्राभिनत्। ततो वै तासामन्नं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽन्नं क्षीयते। आपो वा इदमग्रें सिक्लिमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिमदि स्यादिति। सोऽपश्यत्पुष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीति। स वेराहो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृथिवीम्ध आँर्च्छत्। तस्यां उपहत्योदमञ्जत्। तत्पुष्करपूर्णेऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥ तत्पृथिव्यै पृथिवित्वम्। अभूद्वा इदमितिं। तद्भूम्यै भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ताः शर्कराभिरद्दःहत्। शं वै नोऽभूदितिं। तच्छर्कराणाः शर्कर्त्वम्। यद्वराहविंहतः सम्भारो भवंति। अस्यामेवा-छम्बद्वारमुग्निमाधंत्ते। शर्करा भवन्ति धृत्यै॥२०॥

अथो शन्त्वायं। सरेता अग्निर्धिय इत्यांहुः। आपो वरुणस्य पत्नय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यद्धिरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंते। पुरुष इन्नै स्वाद्रेतंसो बीभथ्सत इत्यांहुः॥२१॥

उत्तर्त उपाँस्यत्यबींभथ्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जुं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावं रुन्धे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयुत्र्याऽहंरत्। तस्यं प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् १)

पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्णृत्वम्॥२३॥

यस्यं पर्णमयः सम्भारो भवंति। सोमपीथमेवावं रुन्धे। देवा वै ब्रह्मन्नवदन्त। तत्पूर्ण उपांश्रणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंर्णमयः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। प्रजापंतिरग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्र मां धक्ष्यतीतिं। त॰ शम्यांऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रंदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छंत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्धे। सहंदयो-ऽग्निराधेय इत्यांहुः। मुरुतोऽद्भिरिग्नमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हदंयमाच्छिन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शिनिहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊषां अभवन्नभवद्वल्मीकौऽश्राम्यदप्रंथयद्भृत्ये बीभथ्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णत्वमंशमयदच्छिन्द्र्स्नीणिं

च॥----[३]

द्वादशसुं विकामेष्वग्निमा देधीत। द्वादेश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेवैनंमवरुद्धा धंत्ते। यद्वांदशसुं विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंर्निमित् आदेधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इतिं। परिमितं चैवापंरिमितं चावं रुन्धे। अनृंतं वै वाचा वंदति। अनृतं मनंसा ध्यायति॥२६॥

चक्षुर्वे स्त्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्मितिं। तथ्सत्यम्। यश्चक्षुंर्निमितेऽग्निमांधत्ते। सत्य पुवैन्मा धंते। तस्मादाहिताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। सत्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥

आग्नेयाः प्रावंः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति। प्रशूनेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अधींदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भंविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मान्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथान्वाहार्यपचनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्येषा्ड् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्यन्तीतिं॥२९॥

यस्यैवम्ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा परांभवति। साऽशृंणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंऽन्वाहार्युपचंनुमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनीयम्। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषाड् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंष्यन्ति। प्रजां तु न वेंष्यन्तु इति। यस्यैवमुग्निराधीयतें। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा सुंवर्गं लोकमेति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जनिष्यसें॥३१॥

प्रत्यस्मिँ होके स्थास्यसि। अभि सुंवर्गं लोकं जेष्यसीति। गार्हपत्यमग्र आदेधात्। गार्हपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजायन्ते। गार्हपत्येनैवास्मैं प्रजां पृश्नम्प्राजनयत्। अथौन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिङ्किंव वा अयं लोकः। अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रत्यंतिष्ठत्। अथोऽऽहवनीयम्। तेनैव सुंवर्गं लोकम्भ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम्ग्निरांधीयतें। प्र प्रजयां पृशुभिंमिथुनैर्जायते। प्रत्यस्मिं श्लोके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जयति। यस्य वा अयंथादेवतम्ग्निरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३३॥ भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीतिं भृग्वङ्गिरसा-मादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामी-त्यन्यासां ब्राह्मणीनां प्रजानांम्। वरुणस्य त्वा राज्ञां व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञां। इन्द्रंस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य। मनौस्त्वा ग्राम्ण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतमग्निराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

ध्यायति वै रात्रिश्चावं रुन्धे भविष्युन्तीत्यंब्रवीञ्चनिष्यसेंऽजयद्वसीयान्भवति नवं च॥——[४]

प्रजापंतिर्वाचः स्त्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स आंर्फ्रोत्। भूर्भुवः सुव्रित्यांह। एतद्वै वाचः स्त्यम्। य एतेनाग्निमाध्ते। ऋभ्रोत्येव। अथों स्त्यप्रांशूरेव भंवति। अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। सुव्रित्यांह। सुव्र्ग एव लोके प्रतिं तिष्ठति। त्रिभर्क्षर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। सर्वैः पश्चिमिराहवनीयम्॥३६॥

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मै लोके वाचः सत्य सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा देधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यन्तीः प्रजा अभि समावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्। ज्योतिरेव पश्यन्तीः प्रजा यजमानम्भि समावर्तन्ते। प्रजापंतरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वोऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पुष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्प्रजापंतिरनूदेति। वृज्री वा एषः। यदश्वंः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। पुन्रा वर्तयति॥३९॥

ज्निष्यमाणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्गूत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्मम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभंक्ति- रेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौं कुरुते॥४०॥

यदुपर्युंपिर् शिरो हरेंत्। प्राणान् विच्छिंन्द्यात्। अधोऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रें हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। प्रजापंतिरग्निमंसृजत। सोऽिबभेत्प्र मा धक्ष्यतीति॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रंदाहाय। यत्रेधाऽग्निरांधीयतें। महिमानंमेवास्य तद्यूहिति। शान्त्या अप्रंदाहाय। पुन्रा वंर्तयति। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृशुर्वा एषः। यदर्श्वः। एष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य पृदेंऽग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं पृशूनिपंदध्यात्। अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यन्नाकृमयेंत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पृर्श्वत आक्रमयेत्। यथाऽऽहितस्याग्नेरङ्गारा अभ्यव्वर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिदधाति॥४३॥

त्रीणि ह्वी १षि निर्वपति। विराजं एव विक्रान्तं यजमानोऽनु विक्रमते। अग्नये पर्वमानाय। अग्नये पावकार्य। अग्नये शुचेये। यद्ग्रये पर्वमानाय निर्वपित। पुनात्येवैनम्। यद्ग्रये पावकार्य। पूत एवास्मिन्नन्नार्छं दधाति। यद्ग्रये शुचेये। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नुपरिष्टाद्दधाति॥४४॥

पुन्माह्वनीयं धत्तेऽश्वत्वं वंतियति कुरुत् इति रुद्रो दंधाति यद्षये श्वंय एकं चा-[५] देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुप्यन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तद्ग्रिनींथ्सहंमशक्रोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतींयम्। अपसु तृतींयम्। आदित्ये तृतींयम्॥४५॥

तद्देवा विजित्यं। पुन्रवांरुरुथ्सन्त। तेंऽग्नये पवंमानाय पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। पृशवो वा अग्निः पवंमानः। यदेव पृशुष्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत। तेंऽग्नयें पावकायं। आपो वा अग्निः पांवकः। यदेवापस्वासींत्। तत्तेनावांरुन्धत॥४६॥

तैंऽग्रये शुचंये। असौ वा आंदित्यौंऽग्निः शुचिः। यदेवाऽऽदित्य आसींत्। तत्तेनावांरुन्धत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टाकंपालोऽग्र्याधेयमिति। यत्तं निर्वपैंत्। नैतानि। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥

नाङ्गांनि। ताहगेव तत्। यदेतानि निर्वपेता न तम्।

यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। ताहगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्याणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यौंऽग्निमांधृत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालमनु निर्वपेत्। आदित्यं चरुम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयांतयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ताभ्यांमेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्थे। आदित्यो भवति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुहंस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावं रुन्धे। घृते भंवति। यज्ञस्यालूक्षान्तत्वाय। चत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। पृशवो वा पृतानि ह्वी १षि। पृष रुद्रः। यद्ग्निः॥५०॥

यथ्सद्य एतानि ह्वी १ षि निर्वपेत्। रुद्रायं पृश्नि पि दध्यात्। अपृश्यजंमानः स्यात्। यन्नानुं निर्वपेत्। अनं वरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। द्वादृशसु रात्रीष्वनु निर्वपेत्। संवथ्सरप्रतिमा व द्वादंश रात्रयः। संवथ्सरेणैवास्मै रुद्र १ शमियत्वा। पृश्नवं रुन्थे। यदेकंमेकमेतानि ह्वी १ षि निर्वपेंत्॥५१॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूरयेंत्। ताहक्तत्। न प्रजनंनमुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समस्येत्। तृतीयंमेवास्में
लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु
प्रजायते। अथो य्ज्ञस्यैवैषाऽभिक्रांन्तिः। रथ्चकं प्रवर्तयति।
मनुष्यर्थेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३) मिति। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यत्र जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधं ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्त्न्ग्रीणाति। उपबर्हणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धै। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं प्वावं रुन्धे। अनुङ्वाहंमध्वर्यवें। विह्नवी अनुङ्वान्। विह्नेरध्वर्युः॥५४॥

वहिंनैव वहिं युज्ञस्यावं रुन्धे। मिथुनौ गावौं ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासों ददाति। सुर्वुदेवृत्यंं वै वासंः। सर्वां एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यों ददाति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति। कामंमूर्ध्वं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धै॥५५॥

आदित्ये तृतीयम्पस्वासीत्तत्तेनावांरुन्यत् स्यादांप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानिं हुवी १ वि

निर्वपैत्प्रत्यवंरोहित ददात्यध्वर्युर्देयमेकं च॥_____[ह]

घर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पृश्भिंभ्वत्। छुर्दिस्तोकाय तनयाय यच्छ। वातः प्राणस्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पृश्भिंभ्वत्। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं पंच। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निभंवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभांहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे॥५६॥

अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्भिर्भुवत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनूः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन् त्वाऽऽदंधे। अग्निनाऽग्ने ब्रह्मणा। आन्शे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तृनवौँ। विराद्वं स्वराद्वं। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये तें अग्ने शिवे तुन्वौं। सुम्राद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते

मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तनुवौँ। विभूश्चं परिभूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तनुवौँ। प्रभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्तें अग्ने शिवास्तनुवंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्तें अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ॥५८॥

इमे वा पृते लोका अग्नयंः। ते यदव्यांवृत्ता आधीयेरन्। शोचयेयुर्यजमानम्। घृमः शिर् इति गार्हंपत्यमा देधाति। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपचनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंत्यति। तथा न शोचयन्ति यजमानम्। रथन्तरमभिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा

अयं लोकः॥५९॥

चतुंष्पदे जिन्वतां तुनुवस्त्रीणिं च॥=

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धत्ते। वामदेव्यम्भिगायत उद्धियमाणे। अन्तरिक्षं वै वामदेव्यम्। अन्तरिक्ष एवैन् प्रतिष्ठितमाधत्ते। अथो शान्तिर्वे वामदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्व्यमुद्धरते। बृहद्भिगायत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रति-ष्ठितमाधत्ते। प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत॥६०॥ सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङेत्। तं वांरवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतृत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमिभ् गायंते। वार्यित्वैवैनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुंरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशींर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥

उपैनमुत्तरो यज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आधीयमान ईश्वरो यज्ञंमानस्य पृशून् हि॰सितोः। सम्प्रियः पृशुभिभुविदित्यांह। पृशुभिरेवैन्॰ सम्प्रियं करोति। पृशूनामहि॰सायै। छुर्दिस्तोकाय तनयाय युच्छेत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। वातंः प्राण इत्यंन्वाहार्यपर्चनम्॥६२॥

सप्राणमेवेनमा धंत्ते। स्वदितं तोकाय तनंयाय पितुं प्रचेत्यांह। अन्नमेवास्मैं स्वदयति। प्राचीमन् प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभिक्तिरेवेनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवेनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्यद इत्यांह। आ-मेवेतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। अर्को वे देवानामन्नम्॥६३॥

अन्नमेवावं रुन्धे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। समिन्ध एवैनम्।

आनुशे व्यांनश् इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्। वीङ्गितमप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्येवाधायांभिमन्त्रियः। अवीङ्गितमेवैनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। विराद्घं स्वराद्घं यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंधं इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरेवैन् समंध्यति। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गच्छेति ब्र्याद्यं द्विष्यात्। ताभिरेवैनं पर्राभावयति॥६४॥

लोकोंऽसृजतैनुमार्थत्तेऽन्वाहार्युपर्चनं देवानामन्नमेनुं प्रतिष्ठितुमार्थत्ते पर्श्व च॥————[८]

श्मीगुर्भाद्गिं मंन्थति। एषा वा अग्नेर्यज्ञियां तृनूः। तामेवास्में जनयति। अदिंतिः पुत्रकांमा। साध्येभ्यों देवेभ्यों ब्रह्मौद्नमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यै धाता चाँर्यमा चांजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यें मित्रश्च वर्रुणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥ तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या इन्द्रेश्च विवस्वाङ्श्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्नंन्ति ब्राह्मणा ओद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं समिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतों-ऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यथ्मिमधंः। एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्यंन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

पुतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। अथो तेजंसा। गायत्रीभिर्न्नाह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा वै ब्राँह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै रांजन्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥ जगंतीभिर्वेश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। तश् संवथ्सरं गोपायेत्। संवथ्सरश् हि रेतों हितं वर्धते। यद्यंनश् संवथ्सरे नोपनमेंत्। स्मिधः पुन्रादंध्यात्। रेतं पुव तिद्धतं वर्धमानमेति। न माश्समंश्जीयात्। न स्त्रियमुपंयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्जीयात्। यिश्वयं मुप्यात्। निर्वीर्यः स्यात्। नैनं मृग्निरुपं नमेत्। श्व आंधास्यमानो ब्रह्मौद्नं पंचति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवर्गं लोकमांयन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। एते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। योंऽस्मै प्रजां पृशून्प्रंजनयतीति। शल्कैस्ता १रात्रिंमग्निपिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्षभायं वाशिता न्यांविच्छायति। ताद्दग्व तत्। अपोदृह्य भस्माग्निं मन्थति॥७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तितिः। तं मिथित्वा प्राश्चमुद्धरित। संवथ्सरमेव तद्रेतों हितं प्रजनयित। अनाहितस्तस्याग्नि- रित्यांहुः। यः स्मिधोऽनांधायाग्निमांधृत्त इतिं। ताः संवथ्सरे पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरादेवैनंमव्रुध्याधंत्ते। यदि संवथ्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वाद्श्यां पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरप्रतिमा व द्वादंश रात्रयः। संवथ्सरमेवास्याहिता भवन्ति। यदि द्वाद्श्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्। आहिता एवास्यं भवन्ति॥७४॥

द्वितीयंमपच चतुर्थमंपच दितेते रेतों ऽधत्त सम्मिता घृतवंतीभि्रादंधाति राज्ञन्यः स्वस्य छन्दंसः प्रत्यय नुस्त्वायेयाद्गच्छिति मन्थित् रात्रयश्चत्वारि च॥———[γ]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिरिचानोऽमन्यत। स तपोऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्माथ्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सो ऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम् वा एषा॥७५॥

व्यंगृह्णतः। सोंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम् वा एषा॥७५॥ दोहां एव युष्माक्मितिं। सा ततः प्राच्युदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथंवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्य प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। स्थं पृजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शङ्स्यं पृशून्में गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रथ स्मां में गोपायेति। सा पंश्चममुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्निय मत्रं मे गोपायेति। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथो पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राँह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निरांधीयतें। तस्मदितावंन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कं वा इद सर्वम्। पाङ्केनैव पाङ्कः स्पृणोति। अर्थवं पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति। शक्स्यं पुश्नमें गोपायेत्यांह॥७८॥

पृश्नेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ स्मां में गोपायेत्यांह। स्मामेवैतेनं न्द्रिय स्पृणोति। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपायेत्यांह। मन्नमेवेतेन श्रिय स्पृणोति। यदंन्वाहार्यपर्चने- उन्वाहार्यं पर्चन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यद्गर्हं पत्य आज्यंमधिश्रयंन्ति सम्पत्नीं यां जयंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यदांहवनीये जुह्वंति॥७९॥ तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यथ्सभायां विजयंन्ते।

तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्न् हरंन्ति। तेन् सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा आधीयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवमुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। तादगेव तत्। पुनंरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्। रोहिण्यामृग्निमादंधीत। स्व पृवेनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते। ऋधोत्येनेन॥८०॥

एषा पृश्न्में गोपायेति प्रविष्टा पृश्न्में गोपायेत्यांहु जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥———[१०]

ब्रह्म सन्धंत्तं कृत्तिंका्सूढंन्ति द्वाद्शस्ं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्निर्नोद्धर्मः शिरं इमे वे शंमीग्रभांत्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥ ब्रह्म सन्धंत्तं तौ दिव्यावथों शुन्त्वाय प्राच्येषां यदुपर्युपरि यथ्सद्यः सोऽश्वोऽवारों भूत्वा जगंतीभिरशींतिः॥८०॥

ब्रह्म सन्धंत्तमृध्नोत्येंनेन॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अमेध्यम्। अपं पाप्मानं यर्जमानस्य हन्तु। शिवा नः सन्तु प्रदिश्श्वतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकंसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीत्यें। शं योर्भि स्नंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्नसां। स्योनमा विशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवतुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयौर्यज्ञिय-मार्गमिष्ठाः। ऊतीः कुर्वाणो यत्पृथिवीमचंरः। गुहाकारंमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसंमाभरंन्तः। शतं जीवेम श्ररदेः पुरूचीः॥२॥

वम्रीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यवंधिरा भवामः। प्रजापंतिसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपंहत्ये सुवितं नो अस्तु। उप प्रभिन्नमिष्मूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रस्माभरामि। यस्यं रूपं विश्रदिमामविन्दत्। गुह्य प्रविष्टा सिर्रस्य मध्ये। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अछंम्बद्धारम्स्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यथ्सिर्रस्य मध्यै। उर्वीमपंश्यञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्यायतंनाद्धि जातम्। पणं पृंथिव्याः प्रथंन १ हरामि। याभिरद १ हुज्जगंतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीमिमां विश्वजनस्यं भूत्रीम्। ता नेः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र १ हिरंण्यम्। अन्धः सम्भूतम्मृतं प्रजास्। तथ्सम्भरंन्नुत्तर्तो निधायं॥४॥

अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वीं रूपं कृत्वा यदंश्वत्थे-ऽतिष्ठः। संवथ्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वनस्पते शृतवंल्शो विरोह। त्वयां वयमिष्मूर्जं मदंन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया ह्रियमाणस्य यत्तै॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽधिं। सोंऽयं पूर्णः सोंमपूर्णाद्धि जातः। ततों हरामि सोमपीयस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोंऽसि। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्च्सम्। तथ्सम्भर्ङ्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रदाहाय॥६॥ श्रमी १ शान्त्यें हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतुं भा आँच्छंज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरुं नों लोकमनु प्रभाहि। यत्तें तान्तस्य हृदंयमाच्छिंन्दञ्जातवेदः। मुरुतोऽद्भिस्तंमयित्वा। पृतत्ते तदंशनेः सम्भंरामि। सात्मां अग्ने सहृदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थाथ्सम्भृता बृहृत्यः॥७॥

शरीरम्भि सङ्स्कृंताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मिताः। तिस्रस्त्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजांत्ये। अश्वत्थाद्धेव्य-वाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तनूं यज्ञियाः सम्भेरामि। शान्तयोनि शमीग्र्भम्। अग्नये प्रजनियतवें। यो अश्वत्थः शमीग्र्भः। आरुरोह त्वे सर्चां। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

य्जियैं केतुभिं सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृंतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुंनेषि विद्वान्। प्रवेधसें क्वये मेध्याय। वचीं वन्दारुं वृष्माय वृष्णें। यतों भ्यमभंयं तन्नों अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुंवस्यत॥९॥

घृतैर्बोधयतातिंथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मंतीः। घृताचींर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिंरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामसि। बृहच्छोंचा यविष्ठा। सृमिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। समृक्तुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केंशो घृतिनिर्णिक्पाव्कः। सुयज्ञो अग्निर्युज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतैः सिमंद्धो घृतम्स्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा स्रितो वहन्ति। घृतं पिबन्थ्सुयजां यक्षि देवान्। आयुर्दा अंग्ने ह्विषो जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥

त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंक्तिरे हव्यवाहम्ं। उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुंतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोदयन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रयारंसि पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्ं। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋंअते॥१२॥

इन्धांनो अक्रो विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंर्णामुद्धं नो यश्सते धियम्। प्रजा अंग्रे संवांसय। आशांश्च पृशुभिः सह। गृष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासंन्थ्सिवतुः स्वे। मृही विश्पत्नी सदेने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वेत्री जन्यं जातवेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दुशत् शक्तरीर्ममं। ऋतेनां मु आयुंषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवन्त उत्तरामृत्तरा समाम। दर्शमहं पूर्णमां सं यज्ञं यथा यजैं। ऋत्वियवती स्थो अग्निरेतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं देवे। तथ्सत्यं यद्वीरं बिभृथः। वीरं जनियुष्यर्थः। ते मत्रातः प्रजनिष्येथे। ते मा प्रजाते प्रजनियुष्यर्थः॥१४॥

प्रजयां प्शुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृंताथ्सत्य-मुपैमि। मानुषाद्दैव्यमुपैमि। देवीं वाचें यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिन्यानः। उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जातंवदो भुवनस्य रेतः। इह सिश्च तपंसो यज्ञनिष्यते॥१५॥

अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्ं। श्वामीगुर्भाञ्चनयन् यो मंयोभूः। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया रियम्। अपेत वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अर्क्षन्तिमं पितरो लोकमंस्मै॥१६॥ अग्नेर्भस्मांस्यग्नेः पुरीषमिस। संज्ञानंमिस काम्धरणम्। मियं ते काम्धरणं भूयात्। संवंः सृजािम् हृदंयािन। स॰सृष्टं मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुन्वंः। सं प्रिया हृदंयािन वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सिम्प्रियास्तुनुवो ममं॥१७॥

कल्पंतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप ओषंधीः। कल्पंन्तामुग्नयः पृथंक्। मम् ज्यैष्ठमांय सर्वताः। येंऽग्नयः समनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्ना॥१८॥

अन्तरिक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादंधे। अजीजनन्नमृतं मर्त्यासः। अस्रेमाणं तरिणं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्श्सं जातम्भि सर्श्यन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेण् मह्यम्। दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। श्तर श्रद्य आयुंषे वर्चसे॥१९॥

जीवात्वै पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं हुव्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककुञ्जातवेदः। प्राणे त्वाऽमृत्मादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यैं। सुगार्हपत्यो विदहन्नरातीः। उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

अग्नें स्पत्नार्ं अप बाधंमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जंम्स्मासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलांय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायायुंषे वर्चसे। सपत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमाण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पृशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमाण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अंग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भाहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वग्निरुषसामग्रंमख्यत्। अन्वहांनि प्रथमो जातवंदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चं रुश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महा १ असि। वेदिषन्मानुषेभ्यः। त्रिषु लोकेषु जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवर्तुः॥२३॥

तयोः पृष्ठे सींदतु जातवेदाः। शम्भूः प्रजाभ्यंस्तुनवें स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ दंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गृप्त्यै। यत्तं शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुन्। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिहि तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनाऽग्ने ब्रह्मणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्यं प्रजां में गोपाय। अमृतत्वायं जीवसैं। जातां जिन्ष्यमाणां च। अमृते सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अर्थवं पितुं में गोपाय। रसमन्निम्हायुंषे। अदंब्यायोऽशीततनो। अविषन्नः पितुं कृण्। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्पदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहं बुध्निय मत्रं मे गोपाय। यमृषंयस्त्रैविदा विदुः। ऋचः सामानि यजूरंषि। सा हि श्रीरुमृतां सताम्॥२६॥ चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका भुवनस्य मध्यें। मुमृज्यमाना महृते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजमानाय कामान्। इहैव सन्तत्रं स्तो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनसा बिभिम। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वान्रेणोपंतिष्ठे। पुश्रुधाऽग्नीन्व्यंक्तामत्। विराद्थ्सृष्टा प्रजापंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥ विशन्तु नः पुक्षवीर्विधेम निधाय यत्तेऽप्रंदाहाय वृहृत्यौ ब्रह्मणा द्वस्यत विश्ववार इममृंअते परोगां प्रजनिय्ययो जिन्ध्यतेंऽस्मै ममं मिहृमा वर्षसे दर्धस्वगों भाहि सम्बभ्वतुरायुर्व्यानशे चतुंष्यदः स्तां प्रजापंतेंई चं॥——[१]

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहाँन्युप्यन्ति। नवस्वेव तथ्सुंवर्गेषुं लोकेषुं स्त्रिणः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इति। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्। उक्थ्यां एव संप्तद्शाः परंः सामानः कार्याः॥२८॥

प्शवो वा उक्थानिं। पुशूनामवंरुद्धौ। विश्वजिद्दिभिजितां-विग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिंरिच्येते। एकया गौरतिंरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवुर्गो वै लोको ज्योतिंः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर् राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीये। वैरूपं तृतीये। वैराजं चंतुर्थे। शाक्करं पंश्रमे। रैवत १ षष्ठे। तद्ं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्थ्सन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजंमाना अवंरुन्धते। बृहत्पृष्ठं भंवति। बृहद्वे सुंवर्गो लोकः। बृह्तैव सुंवर्गं लोकं यंन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम् सामं। माध्यं दिने पर्वमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रि श्रष्टे देवताः। देवतां पृवावंकन्धते। ये वा इतः परांश्व संवध्सरमुंपयन्ति। न हैंनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ् येऽमृतोऽर्वाश्चमुपयन्ति। ते हैंन स्वस्ति समंश्जुवते। युतद्वा अमृतोऽर्वाश्चमुपयन्ति। यदेवम्। यो ह् खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रः। तदुं देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥ कार्या विराहृंबन्ते पर्वमाने भवतीन्द्र एकं चा [२]

सन्तंतिर्वा एते ग्रहाँः। यत्परंः सामानः। विष्वान्दिवा-कीर्त्यम्। यथा शालायै पक्षंसी। एव संवध्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विष्वी संवध्सरस्य पक्षंसी व्यवंस्र स्याताम्। आर्तिमार्च्छंयः। यदेते गृह्यन्तै। यथा शालायै पक्षंसी मध्यमं व शम्भि संमायच्छंति॥३३॥ एव संवध्सरस्य पक्षंसी दिवाकीर्त्यम्भि सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छंन्ति। एकवि श्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते।

नार्तिमार्च्छंन्ति। एकविश्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्य्ये सयत्वायं। सौर्यं एतदहंः पृशुरालंभ्यते। सौर्यो-ऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बुलिर्ह्हियते। स्प्तैतदहंरितग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥ स्प्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। असावांदित्यः शिरंः

स्प्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। असावादित्यः शिरः प्रजानाम्। शीर्षत्रेव प्रजानां प्राणान्देधाति। तस्माध्सप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रो वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ ह्यो कान्भ्यं जयत्। तस्यासौ लोको ऽनंभि जित आसीत्। तं विश्वकंमा भूत्वा ऽभ्यं जयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥ ३५॥ स्वर्गस्यं लोकस्याभि जित्ये। प्रवा पृते ऽस्मा ह्यो काच्यं वन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्यते॥ आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः।

अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। अन्यौन्यो गृह्येते। विश्वौन्येवान्येन् कर्माणि कुर्वाणा येन्ति। अस्यामन्येन् प्रतिं तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्धार्थ्यंवथ्सरस्यान्यौन्यो गृह्येते। तावुभौ सह महाब्रते गृह्येते। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। उभयौर्लोकयोः प्रतिं तिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्थं भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥३६॥

स्मायच्छंत्यतिग्राह्यां गृह्यते गृह्यते संवध्सरस्यान्योंन्यो गृह्येते पश्चं चा [३]

एकविश्श एष भेवति। एतेन् वै देवा एकविश्शेने।

आदित्यमित उत्तमश् सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा एष

इत एकविश्शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दशं परस्तांत्।

स वा एष विराज्यंभयतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष उभयतः प्रतिष्ठितः। तस्मादन्त्रेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषुं लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥

देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचो-ऽतिपादादंबिभयुः। तं छन्दोभिरदृश्हं धृत्यैं। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवाचोऽवपादादंबिभयुः। तं पृश्चभीं रुश्मिभिरुदंवयन्। तस्मादेकविश्शेऽहृन्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रुश्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गायत्रे। ते गायत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्यक् होतुंः पृष्ठम्। विकुणं ब्रह्मसामम्। भासो ऽग्निष्टोमः। अथैतानि पर्राणि। परैर्वे देवा आंदित्यक् सुंवर्गं लोकमंपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां पर्त्वम्। पारयन्त्येनं पर्राणि। य पृवं वेदं। अथैतानि स्पर्राणि। स्परैर्वे देवा आंदित्यक् सुंवर्गं लोकमंस्पारयन्। यदस्पारयन्। तथ्स्पराणाः स्पर्त्वम्। स्पारयन्त्येन्कुं स्पराणि। य पृवं वेदं॥३९॥

पुति पर्वमानयोः स्परिंणि पर्श्वं च॥———[४] अप्रतिष्ठां वा एते गच्छन्ति। येषा र्रं संवथ्सरेऽनाप्तेऽथं। एकाद्शिन्याप्यतें। वैष्णावं वामनमालंभन्ते। युज्ञो वै विष्णुंः।

यज्ञमेवार्लभन्ते प्रतिष्ठित्यै। ऐन्द्राग्नमार्लभन्ते। इन्द्राग्नी वै देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयातयाम्नी। ते एवार्लभन्ते॥४०॥

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्थते। द्यावापृथिव्यां धेनुमालंभन्ते। द्यावापृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायव्यं वथ्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यों यथाऽऽयत्नाद्देवता अवं रुन्थे। आदित्यामविं वशामालंभन्ते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव युज्ञस्य स्विष्ट शमयन्ति। वर्रुणेन् दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूंपरं महाव्रत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यो गृह्यते। अहंरेव रूपेण् समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बिलिर्ह्हियते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्ये। अज्येत्वान् वा एते पूर्वैर्मासैरवं रुन्धते। यदेते गृव्याः पृशवं आल्भ्यन्तें। उभयेषां पश्नामवंरुद्धे॥४२॥

यदितिरिक्तामेकादृशिनीमालभैरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्द्वौ द्वौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यंतिरिच्यंते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥ ते पृवालंभन्ते मैत्रावरुणीमालंभन्तेऽवंरुखे सुप्त चं॥———[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूतानाः रसं तेजः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववृतीतिं। तन्महावतस्यं महावतत्वम्। महद्भतमितिं। तन्महावतस्यं

तन्मंहाब्रुतस्यं महाब्रुत्त्वम्। मृह्ब्रुतमितिं। तन्मंहाब्रुतस्यं महाब्रुत्त्वम्। मृह्ब्रुतमितिं। तन्मंहाब्रुतस्यं महाब्रुत्त्वम्। पञ्चवि शः स्तोमों भवति॥४४॥

चतुंर्वि शत्यर्धमासः संवथ्सरः। यद्वा एतस्मिन्थ्संवथ्सरेऽधि प्राजायत। तदन्नं पश्चिव श्चिमंभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमिश्चितं धिनोति। अथो मध्यत एव प्रजानाम्गर्धीयते। अथ् यद्वा इदमन्ततः क्रियते। तस्मादुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजननायैव। त्रिवृच्छिरो भवति॥४५॥

त्रेधाविहित है हि शिरं। लोमं छ्वीरस्थिं। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तथ्महग्वे। न मेद्यतोऽन्ं मेद्यति। न कृश्यतोऽन्ं कृश्यति। पृश्चद्रशौंऽन्यः पृक्षो भंवति। सृप्तद्रशौं-ऽन्यः। तस्माद्वया इंस्यन्यत्रम्धम्भि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रतो हि तद्गरीयः क्रियते॥४६॥

पृश्चविष्ण आत्मा भेवति। तस्मौन्मध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। एकविष्णं पुच्छम्। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण सह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्यौत्मनाऽऽत्मन्वी। सहोत्पतंन्ति। एकैकामुच्छिष्णन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गोनि बद्धानि। न वा एतेन् सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि द्तो नुखान्। पुरिमादंः क्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धै। यस्यं तल्पुसद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवाना स् साम्यंक्षे। तल्पुसद्यंमुभिजयानीति तल्पंमा्रुह्योद्गायेत्। तल्पसद्यंमेवाभि जंयति॥४८॥

यस्यं तल्प्सद्यंम्भिजित् स्यात्। स देवाना स् साम्यक्षे। तल्प्सद्यं मा परांजेषीति तल्पंमारुह्योद्गायेत्। न तंल्प्सद्यं परांजयते। प्रेङ्के शर्सति। महो वे प्रेङ्कः। महंस एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकृतं व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णौ ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमेंऽराध्सुरिमे सुंभूतमंऋत्रित्यंन्यत्रो ब्रूयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुर्भूतमंऋत्रित्यंन्यत्रः। यदेवैषां सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोंऽभि श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽराद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयति। अमुमेवाऽऽदित्यं भ्रातृंव्यस्य संविन्दन्ते॥५०॥ भवति भवति क्रियते पुरुषे जयत्यजयअय्यव्यकं च॥——[६]

उद्धन्यमानुं नवैतानि सन्तंतिरेकविष्श पृषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षट्॥६॥

उद्धन्यमान शोचिष्केशोऽग्नें सुपन्नानित्रग्राह्मां वैश्वदेवमालभन्ते पञ्चाशत्॥५०॥ उद्धन्यमान संविन्दन्ते॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नीषोमयोस्तेज्ञस्विनींस्तुनः सन्न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तेनाुग्नीषोमावपांक्रामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैच्छन्। तैंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूथ्मंत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेज्ञस्विनींस्तुन्र्रवांरुन्थत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्नन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं तन्त्र्यंगृह्णत्त। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनर्ाधेयं कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनर्ाधेयं कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनौग्नेयं वा एतिक्रियते। यथ्समिधस्तनूनपातिमिडो बर्हिर्यंजिति। उभावौग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनौज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावौग्नेयावन्वश्चावितिं। अग्नये पर्वमानायोत्तरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाऽऽज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याऽऽज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनाँग्नेय सर्वं भवति। एकधा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्भृतसम्भार इत्यांहः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खलुं। सम्भृत्यां एव संम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धौ। तेनोपाष्शु प्रचंरति। एष्यं इव् वा एषः। यत्पुंनराधेयः। यथोपाष्शु नृष्टमिच्छति॥५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृत्मुथ्सृंजिति। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राह्मयमिति। ताहगेव तत्। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनमिश्वरा प्रदह् इति। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभिक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्यातांम्। एवं पेत्रीसंयाजाः॥६॥

तद्वैश्वान्रवंत्प्रजनंनवत्तर्मुपैतीतिं। तदांहुः। व्यृंद्धं वा

पुतत्। अनाँग्नेयं वा पुतित्क्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रथमं विभक्तीनां यजति। अग्निम्तमं पंत्रीसंयाजानाँम्। तेनाँग्नेयम्। तेन् समृद्धं क्रियत् इतिं॥७॥

अरु-धृतैव तद्भंवित सम्भृंतसम्भार इत्यांहरिच्छतिं पत्नीसंयाजा नवं च॥_____[१]

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। योंऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाज्येयंमपश्यन्। ते। अन्योंऽन्यस्मै नातिष्ठन्त। अहम्नेनं यजा इति। तेंऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेति॥८॥

तस्मिन्नाजिमधावन्। तं बृह्स्पित्रिह्यंजयत्। तेनायजत। स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रौंऽब्रवीत्। माम्नेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्यत्। अगच्छ्थस्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मै ज्यैष्ठाय॥९॥

य एवं विद्वान् वांजिपेयेन् यजिते। गच्छेति स्वारांज्यम्। अग्रर्थं समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा एष ब्राह्मणस्यं चैव रांजन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वांजिपेय इत्यांहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाज् क् ह्येतेनं देवा ऐफ्सन्। सोमो वै वांजिपेयः। यो वै सोमं वाजिपेयं वेदं॥१०॥ वाज्येवैनं पीत्वा भविति। आऽस्यं वाजी जांयते। अत्रं वै वाजपेयः। य पुवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जांयते। ब्रह्म वै वाजपेयः। य पुवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्म जांयते॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदे। क्रोतिं वाचा वीर्यम्। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापितिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्वांज्येयंमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांजपेयंः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पृता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता वा एता उन्नितयो व्याख्यांयन्ते। यृज्ञस्यं सर्वृत्वायं। देवतांनामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मंणुश्चान्नंस्य च् शमंलुमपांघ्रन्। यद्वह्मंणुः शमंलुमासीत्। सा गाथां नाराशुङ्स्यंभवत्। यदन्नंस्य। सा सुरां॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शमंलुं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्नौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंहति। याऽफ्सु यौषंधीषु या वन्स्पतिषु। तस्मौद्वाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचो-ऽवंरुद्धाः॥१४॥

धावामेति ज्यैष्ठांय वेदं ब्रह्मा जांयते वाज्पेयः सुराऽऽर्त्विजीन् एकं च॥———[२]

देवा वै यद्न्यैग्रीहैं य्व्ञस्य नावारंन्थत। तदंतिग्राह्यैरित्-गृह्यावांरुन्थत। तदंतिग्राह्यांणामितग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैग्रीहैं य्व्वस्य नावं रुन्थे। तदेव तैरंतिगृह्यावं रुन्थे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कों य्ज्ञः। यावांनेव य्ज्ञः। तमास्वाऽवं रुन्थे॥१५॥

सर्व ऐन्द्रा भेवन्ति। एक्धैव यजंमान इन्द्रियं देधित। सप्तदेश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धैव यजंमाने वीर्यं दधाति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। एतद्वे देवानां परममन्नम्। यथ्सोमं:॥१६॥

पुतन्मंनुष्यांणाम्। यथ्सुराँ। पुरमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंर-मृन्नाद्यमवं रुन्धे। सोम्ग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मणो वा पुतत्तेजः। यथ्सोमः। ब्रह्मण पुव तेजस्मा तेजो यजमाने दधाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नस्य वा पुतच्छमेलम्। यथ्सुराँ॥१७॥ अन्नस्यैव शमेलेन् शमेलं यर्जमानादपेहन्ति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। पुमान् वे सोमंः। स्त्री सुराँ। तन्मिंथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। आत्मानंमेव सोमग्रहैः स्पृंणोति। जाया १ सुंराग्रहैः। तस्माद्वाजपेययाज्यं मुष्मिं ह्योके स्त्रिय १ सम्भविति। वाजपेयांभिजित इद्यंस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपेरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षश् सोमग्रहान्थ्सांदयति। पृश्चादक्षश् सुराग्रहान्। पाप्वस्यसस्य विधृंत्ये। एष वै यजंमानः। यथ्सोमः। अन्नश् सुरा। सोमग्रहाङ्श्चं सुराग्रहाङ्श्च व्यतिषजित। अन्नाद्येनैवैनं व्यतिषजित॥१९॥

सम्पृचेः स्थ् सं मां भ्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रं वै भ्रम्। अन्नाद्येनैवेन् स्स्मृंजिति। अन्नस्य वा एतच्छमंलम्। यथ्सुरां। पाप्मेव खलु वै शमंलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमंलेन व्यतिषजिति। यथ्सोमग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं व्यतिषजिति। विपृचेः स्थ् वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवेन् शमंलेन व्यावर्तयित॥२०॥ तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यो दक्षिण्यः। प्राङुद्वेवित सोमग्रहेः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहेः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहेः। यावदेव सत्यम्। तेनं सूयते। वाज्रसृद्धः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृतेनैव विश् स् संस्मृजिति। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाति। मध्यो-ऽसानीति। एकधा ब्रह्मण् उपं हरित। एकधेव यजंमान् आयुस्तेजो दधाति॥२१॥

आस्वाऽवं रुन्धे सोमः शर्मलं यथ्स्रा ह्यंस्थेनं व्यतिषजित् व्यावंतियति स्जिति च्त्वारि च॥[३] ब्रह्मवादिनो वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोड्शी नातिरात्रः। अथ् कस्माद्वाज्येये सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्त

इति। पशुभिरिति ब्रूयात्। आग्नेयं पशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावं रुन्धे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनः स्तोत्रम्। सार्स्वत्याऽतिरात्रम्॥२२॥

मा्रुत्या बृंह्तः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञऋतवंः। तान्पशुभिरेवावं रुन्थे। आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वाचंमतिरात्रेणं। प्रजां बृंह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥ सुवर्गं लोक श्षींडशिनंः स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पृथ आरोहत्यतिरात्रेणं। नाक श्रे रोहित बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृश्नां। ओजो बलंमेन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाच श्रे सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं च मनुष्यलोकं चाभिजंयित मारुत्या वृशयां। सप्तदंश प्राजापृत्यान्पृशूनालंभते। सप्तद्शः प्रजापंतिः॥२४॥

प्रजापंतेरास्यै। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एविमेव् हि प्रजापंतिः समृद्धे। तान्पर्यग्निकृतानुथ्मृंजिति। मुरुतों यज्ञमंजिघा स्मन्य्रजापंतेः। तेभ्यं पृतां मारुतीं वृशामालंभत। तयैवैनांनशमयत्। मारुत्या प्रचर्य। पृतान्थ्संज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमियत्वा॥२५॥

पुतेः प्रचरित। यज्ञस्याघाताय। पुक्धा व्पा जुहोति। पुक्देवत्यां हि। पुते। अथों पुक्धेव यजमाने वीर्यं दधाति। नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचरित। पुतत्पुरोडाशा ह्यंते। अथों पशूनामेव छिद्रमिपदधाति। सार्स्वत्योत्तमया प्रचरित। वाग्वे सर्स्वती। तस्मात्प्राणानां वार्गुत्तमा। अथौं प्रजापंतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयति। प्रजापंतिर्हि वाक्। अपंत्रदती भवति। तस्मौन्मनुष्यौः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥

अतिरात्रमुन्तरिक्षमुक्थ्येन प्रजापितः शमयित्वोत्तमया प्रचरित षट् चं॥———[४]

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तांत्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजपेयंस्य पूर्वं यदपंरमितिं। स्वितृप्रंसूत एव यंथापूर्वं कर्माणि करोति। सर्वनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तथ्सेतुं यजंमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धि। वाचस्पतिर्वाचंम्द्य स्वंदाति न इत्यांह। वाग्वे देवानां पुराऽन्नंमासीत्। वाचमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। वाजंस्य नु प्रंसवे मातरं महीमित्यांह। यच्चैवेयम्। यच्चास्यामिषं। तदेवावं रुन्थे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभि-षिच्यते। अपस्वंन्तर्मृतंमुपसु भेषुजमित्यश्वांन्यल्पूलयित। अपसु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्न्ववंष्लवते। यद्पसु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्यापसु प्रविष्टम्। तदेवावं रुन्थे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपंगच्छति। यद्पसु पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवै-नांन्करोति। वायुर्वां त्वा मनुंर्वा त्वेत्यांह। पृता वा पृतं देवता अग्रे अश्वंमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान् युनक्ति। स्वस्योज्जिंत्यै। यजुंषा युनक्ति व्यावृंत्त्यै॥२९॥

अपाँत्रपादाशुहेम्त्रिति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनाँन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजिः संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्योकान्भिजंयति। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्को न्यङ्काव्भितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनाँत्ये। अशंमरथं भावुकोऽस्य रथों भवति। य एवं वेदं॥३०॥

स्वद्यति पुल्पूलयंति व्यावृत्त्या अनौत्र्यै द्वे चं॥-------[५]

देवस्याहर संवितः प्रंसवे बृह्स्पतिंना वाज्जिता वाजं जेषिमत्याह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मु यति। देवस्याहर संवितः प्रंसवे बृह्स्पतिंना वाज्जिता वर्षिष्टं नाकरं रुहेयमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्टं नाकरं रोहति। चात्वांले रथच्कं निर्मितर रोहति। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। आवेष्टयति। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयति॥३१॥

वाजिना ५ साम गायते। अत्रं वै वार्जः। अत्रं मेवावं रुन्धे।

वाचो वर्ष्म देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वनस्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वनस्पतिंषु वदति। या दुंन्दुभौ। तस्माँ हुन्दुभिः सर्वा वाचो-ऽतिंवदति। दुन्दुभीन्थ्समाघ्नंन्ति। पुरुमा वा एषा वाक्॥३२॥

ऽतिवदिति। दुन्दुभीन्थ्स्माघ्नीन्ते। प्रमा वा एषा वाक्॥३२॥ या दुन्दुभी। प्रमयेव वाचाऽवरां वाचमंव रुन्धे। अथो वाच एव वर्ष्म् यजमानोऽवं रुन्धे। इन्द्रांय वाचं वदतेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजमजियदित्यांह। एष वा प्तर्हीन्द्रंः। यो यजंते। यजमान एव वाजमुञ्जंयित। स्प्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। स्प्तद्शः स्तोत्रं भंवित। स्प्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापतेराप्त्यै। अवांऽसि सप्तिंरसि वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा अर्वा। वायुः सप्तिः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मे देवतांभिर्देवर्थं युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मे युनक्ति॥३४॥

वार्जिनो वार्जं धावत कार्षां गच्छतेत्यांह। सुवर्गो वे लोकः काष्ठां। सुवर्गमेव लोकं यंन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यंन्ति। य आजिं धावंन्ति। प्राश्चों धावन्ति। प्राङिंव हि सुवर्गो लोकः। चृत्सृभिरनुं मन्नयते। चृत्वारि छन्दार्शसे। छन्दोभिरेवैनाँन्थ्सुवर्गं लोकं गंमयति॥३५॥

प्र वा एतें ऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वे वार्जः। अन्नमेवावं रुन्थे। यथालोकं वा एत उन्नंयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्यसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिक्रीयावं रुन्धे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयः। ता बृह्स्पतिरुदंजयत्। स नीवारान्निरंवृणीत। तन्नीवारांणां नीवार्त्वम्। नैवारश्चरुमंवति॥३७॥

पुतद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावरम्नाद्यमवं रुन्थे। सप्तदंशशरावो भवति। सप्तदंशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरात्ये। क्षीरे भंवति। रुचमेवास्मिन्दधाति। सपिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा एष देवतंया॥३८॥

यो वांज्येयेन् यजंते। बार्हस्पत्य एष चरुः। अश्वांन्थ्सरिष्यतः सस्रुषश्चावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तमेवावं रुन्थे। अजींजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विम्च्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विम्श्चिति। यमेव ते वाजं लोकमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयंन्ति। तमेवावं रुन्थे॥३९॥

अभिजंयित वा एषा वाग्दीयन्तेऽस्मै युनिक्त गमयित य आजिं धावन्ति भवित देवतंयाऽष्टौ

तार्प्यं यजमानं परिधापयति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। प्वित्रं

वै दर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुथ्सते। यो वाजपर्यन् यजंते। ओषंधयः खलु वै वाजंः। यद्दर्भमयं परिधापयंति॥४०॥

वाज्स्यावंरुद्धै। जाय एहि सुवो रोहावेत्यांह। पित्नंया एवेष यज्ञस्यांन्वार्म्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारित्वर्यूपो भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यै। तूपरश्चतुंरिश्नर्भवति। गौधूमं चृषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥ एविमेव हि प्रजापंतिः समृद्धै। अथो अमुमेवास्मै लोकमन्नंवन्तं करोति। वासोंभिर्वेष्टयति। एष वै यर्जमानः। यद्यूपंः। सूर्वेदेवृत्यं वासंः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिः समर्धयति। अथो आक्रमणमेव तथ्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्ये। द्वादंश वाजप्रस्वीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वादंश मासाः संवथ्यरः। संवथ्यरमेव प्रीणाति। अथो संवथ्यरमेवास्मा उपंदधाति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रो। दशिमः कल्पं रोहति। नव व पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यंथास्थानं कल्पयित्वा। सुवर्गं लोकमेति। एतावृद्धे पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्र्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवाः अंग्नमेत्यांह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतंमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अंभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नैतिं॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मयाँ प्रजेत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। आसपुटैर्घन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्येनैवैन् समर्धयन्ति। ऊषैर्घन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवैनंमन्नाद्येन समर्धयन्ति। पुरस्तौत्यृत्यश्चै घ्रन्ति॥४५॥

अमृतं एव स्वं लोके प्रतिं तिष्ठति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पृष्ट्ये वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवथ्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनमध्यवं रोहति। पृष्ट्यांमेव प्रजनंने प्रतिं तिष्ठति॥४७॥

पुरिधापर्यति गोधूमां जुहोति स्वं नैतिं प्रत्यश्चं प्रन्ति लोको नवं च॥———[७]

स्प्तान्नहोमाञ्जहोति। स्प्त वा अन्नांनि। यावंन्त्येवान्नांनि। तान्येवावं रुन्थे। स्प्त ग्राम्या ओषंधयः। स्प्तार्ण्याः। उभयीषामवंरुद्धे। अन्नंस्यान्नस्य जुहोति। अन्नंस्यान्नस्या-वंरुद्धे। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याश्जीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन व्यृंद्धोत। सर्वंस्य समवदायं जुहोति।

अन्नस्यानस्यावंरुद्धै॥४९॥

त्यांह॥५०॥

पुरस्तांत्प्रत्यश्रंमभिषिश्चित। पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंमद्यतें। शीर्ष्वतोऽभिषिश्चित। शीर्ष्वतो ह्यन्नंमद्यतें। आ मुखांद्न्ववं-स्नावयित। मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंमभिषिश्चिति। इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामी-

अनंवरुद्धस्यावंरुद्धै। औदुंम्बरेण सुवेणं जुहोति।

ऊर्ग्वा अन्नेमुदुम्बरंः। ऊर्ज पुवान्नाद्यस्यावंरुद्धै।

देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसव इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवैनं

ब्रह्मणा देवतांभिरभिषिंश्वति। अन्नंस्यान्नस्याभिषिंश्वति।

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्रांज्येनाभि-विश्वामीत्याह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिंः। ब्रह्मणैवैनंमभि-विश्वति। सोम्ग्रहा इश्वांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहा इश्वांनवदानीयानिं च वाज्यसूद्धाः। इममेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। अथों उभयींष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुर्वते वाज्यसृतः॥५१॥ इन्द्रियस्यावंरुद्धौ। अनिरुक्ताभिः प्रातः सवने स्तुंवते। अनिरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यैं। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अत्रं वे वाजंः। अन्नमेवावं रुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसवने। युज्ञो वे विष्णुंः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रतिं तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तमेवैन ई श्रिये गंमयति॥५२॥

अर्श्जीयादत्रंस्यात्रस्यावंरुद्धा इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह वाजुसृतः शिपिस्रीणिं

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नॄन्। प्रजानांमेवैतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वे द्रु। वनस्पतींनामेवैतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वे वसींयान्भवंति। भुवनमगृन्निति वे तमांहुः। भुवनमेवैतेनं गच्छति॥५३॥

अपसुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवेतेनं घृतस्यं सूयते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वे वसीयान्भवंति। व्योमागृन्निति वे तमांहुः। व्योमैवेतेनं गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। पृषामेवेतेनं लोकानारं सूयते। तस्माद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतांनार सूयते॥५४॥

गुच्छुति सूयते नवं च॥

नाक्सद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। नाकंमगृत्निति वै तमाहुः। नाकंमेवेतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्ञनीना इत्यांह। पश्चज्ञनानांमेवेतेनं सूयते। अपार रसमुद्वंयस्मि-त्यांह। अपामेवेतेन रसंस्य सूयते। सूर्यरिश्मर स्मार्भृतमित्यांह सशुक्रत्वायं॥५५॥

इन्द्रों वृत्र ह्त्वा। असुंरान्पराभाव्यं। सोऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञों-

प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितॄन् यज्ञों-ऽगच्छत्। तं देवाः पुनंरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनंरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं वः पुनंदिस्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः क्रियाता इति॥५६॥

तमेंभ्यः पुनंरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः करोति। पितृभ्यं पुव तद्यज्ञं निष्क्रीय यजमानः प्रतन्ते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम् इत्याह। पितुरेवाधि सोमपीथमवं रुन्धे। न हि पिता प्रमीयमाण आहैष सोमपीथ इति। इन्द्रियं व सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयां

जायामभ्यंश्जुते॥५७॥

पृतद्वै ब्राह्मणं पुरा वाजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत। य पृवं वेदे। अभि द्वितीयाँ जायामंश्जुते। अग्नये कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्याह। य पृव पितृणाम्गिः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। तूष्णीं मेक्षंणमादंधाति। अस्तिं वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वे पितॄन्प्रीतान्। मृनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्ग्रीणाति। तान्ग्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। सकृदाच्छिन्नं बर्हिर्भवति। सकृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। पराङावर्तते॥६०॥

ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौ व्यावृत् उपौस्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रुह्मवादिनो वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मितिं। यत्प्रौश्जीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्रांश्ञीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृंश्चेत। अवघ्रेयंमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितरंः प्रयन्तो हरन्ति। वीरं वां ददति। द्शां छिनत्ति। हरणभागा हि पितरंः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तर् आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाः होतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नृमुस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवाय। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मृन्यवे। नमों वः पितरो घोराय। पितरो नमों वः। य एतस्मिं होके स्थ॥६३॥

युष्मा इस्ते ऽन्। यें ऽस्मिं छोके। मां ते ऽन्। य एतस्मिं छोके स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। यें ऽस्मिं छोके। अहं तेषां विसेष्ठो भूयास्ति। यें ऽस्मिं छोके। अहं तेषां विसेष्ठो भूयास्ति। यें एवं विद्वान्पितृभ्यः करोति। एष वे मनुष्याणां युज्ञः॥६४॥

देवानां वा इतरे युज्ञाः। तेन वा एतत्पितृलोके चरित। यत्पितृभ्यः करोतिं। स ईश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययुर्चा पुनुरैतिं। युज्ञो वै प्रजापितिः। युज्ञेनैव सह पुनुरैतिं। न प्रमायुंको भवति। पितृलोके वा एतद्यजंमानश्चरति। यित्पृतृभ्यंः क्रोति। स ईश्वर आर्तिमार्तोः। प्रजापंतिस्त्वावैनं तत् उन्नेतुमर्हृतीत्यांहुः। यत्प्रांजापृत्ययुर्चा पुन्रेति। प्रजापंतिरेवैनं तत् उन्नयित। नार्तिमार्च्छति यजंमानः॥६५॥ इत्यंश्वृते पद्यन्ते पद्यन्ते पद्म ऋतवो वर्तिऽहंविः स्यान्नेदीयः स्थ यज्ञो यजंमानश्चरित् यित्वतृभ्यः क्रोति पश्चं च॥——[१०]

देवासुरा अग्नीषोमयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वै यदन्यैर्ग्रहैंब्रह्मवादिनो नाग्निंष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं तार्प्यं स्प्तान्नहोमान्नृषदं त्वेन्द्रों वृत्र हत्वा दर्शा॥१०॥ देवासुरा वाज्येंवैनं तस्माँद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंरुद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्लीका हि पितरः पश्चंषष्टिः॥६५॥

देवासुरा यजंमानः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा पृते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें उन्य इमें उन्य इति। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्प्वित्रंणापुनात्। तान्प्रस्तौत्प्वित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा एता यर्जमानस्य गृहे गृंह्यन्ते। यद्ग्रहाँः। विदुर्रनं देवाः। यस्यैवं विदुषं एते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपार्शः। सोमेन देवाङ्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपार्शुं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाङ्स्तंपयति। यद्गहाँ जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यचंम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण यजंमानः सुवृगं लोकमेति। किं न्वेतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥ तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति।

व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकमभिजंयति। यानिं मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वायव्याः सोमग्रहंणीरितिं। देवा वै पृश्ञिंमदुह्नन्॥४॥ तस्यां एते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्चिंः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद एव तयां पशून् यजंमान इमां दुंहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यर्जमान इमां दुंहे। तां विश्वे देवा औग्रयणस्थाल्योर्जमदुह्नन्। यदौग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां मंनुष्याँ ध्रुवस्थाल्याऽऽयुंरदुह्नन्। यद्धुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजंमान इमां दुंहे। स्थाल्या गृह्णातिं। वायव्येन जुहोति। तस्मांदन्येन पात्रेण पृशून्दुहन्तिं। अन्येन प्रतिगृह्णन्ति। अथौं व्यावृतमेव तद्यजंमानो गच्छति॥६॥

युव र सुराममिश्विना। नमुंचावासुरे सर्चां। विपिपाना

शुंभस्पती। इन्द्रं कर्मं स्वावतम्। पुत्रिमंव पितरांविश्विनोभा। इन्द्रावंतं कर्मणा दुर्सनांभिः। यथ्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः। सर्रस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने ह्विरास्येते। सुचीवं घृतं चुमू इंव सोमंः॥७॥

वाज्यसिन १ रियम्समे सुवीरम्। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋष्भासं उक्षणंः। वृशा मेषा अवसृष्टास् आहुंताः। कीलालपे सोमंपृष्टाय वेधसें। हृदा मृतिं जंनय चारुं मृग्नयें। नाना हि वां देवहिंत १ सदो मितम्। मा स॰ सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसे शुष्मिणी सोमं पृषः। मा मां हि॰ सीः स्वां योनिमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्ट रिसनः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचीभिः। अहं तदंस्य मनसा शिवनं। सोम् राजानिम्ह भंक्षयामि। द्वे स्तुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंन् समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायत्रछंन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे॥९॥ यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छंन्दाः पाशः। तं तं पृतेनावं यजे।

यस्ते देव वरुण जगतीछन्दाः पार्शः। तं तं एतेनावं यजे।

सोमो वा एतस्यं राज्यमादंत्ते। यो राजा सन्नाज्यो वा सोमेन यजंते। देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त एवास्मै स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पुनः स्वन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

सोमं आविशन यंजे राज्यायैकं च॥———[२] उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुंर्य्ज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा

अंग्निहोत्री। इयं वा पृतस्य निषींदति। यस्याँग्निहोत्री निषीदंति। तामुत्थांपयेत्। उदस्थाद्देव्यदिंतिरितिं। इयं वै देव्यदिंतिः॥११॥

ड्मामेवास्मा उत्थापयति। आयुर्यज्ञपंतावधादित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय् वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अवंर्तिं वा एषेतस्य पाप्मानं प्रतिख्याय निषींदति। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदंति। तां दुग्ध्वा ब्रांह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंर्तिमेवास्मिन्पाप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्ध्वा देदाति। न ह्यदेष्टा दक्षिणा दीयते। पृथिवीं वा पुतस्य पयः प्रविंशति। यस्यांग्निहोत्रं दुह्यमांनु इस्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीर्प्यसंर्द्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वृथ्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पये एवाऽऽत्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजिति॥१३॥

अद्भिरेवैनंदाप्नोति। यो वै यृज्ञस्यार्ते नानौर्तर सर्मुजिते। उमे वै ते तर्ह्याच्छेतः। आच्छेति खलु वा एतदंग्निहोत्रम्। यद्द्व्यमान् इ स्कन्दंति। यदंभिदुह्यात्। आर्ते नानौर्तं यृज्ञस्य सर्मुजेत्। तदेव यादक्षीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। अनौर्तेनैवार्तं यृज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥ यद्यद्वंतस्य स्कन्देत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनंर्यात्। यृज्ञं विच्छंन्द्यात्। यत्र स्कन्देत्। तिन्नुषद्य पुनंर्गृह्णीयात्।

विच्छिन्द्यात्। यत्र स्कन्दैत्। तन्निषद्य पुनर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दिति। ततं एवेनृत्पुनर्गृह्णाति। तदेव यादकीदक्षे होत्व्यम्। अथान्यां दुग्ध्वा पुनर्रहोत्व्यम्। अनार्तिनैवार्तं यज्ञस्य निष्करोति॥१५॥

वि वा एतस्यं यज्ञश्छिंद्यते। यस्याँग्निहोत्रेंऽधिश्रिंते श्वा-ऽन्तरा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्ग्निः। यद्गमंन्वत्या वर्तयेत्। रुद्रायं पृशूनिपं दध्यात्। अपृशुर्यजमानः स्यात्। यद्पौऽन्वतिषिश्चेत्। अनाद्यमुग्नेरापंः। अनाद्यमौभ्यामिपं दध्यात्। गार्हंपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णव्यर्चाऽऽहंवनीयाँद्ध्वर्सयन्नुद्रंवेत्। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञेनैव युज्ञर सन्तंनोति। भस्मंना पुदमपिं वपति शान्त्याँ॥१६॥

वै देव्यदितिर्मुश्चित सृजित करोति करोत्याभ्यामपि दथ्यात् पश्चं च॥———[३]
नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते।

निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत सूर्योऽभि निम्नोचंति। दुर्भेण हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तांद्धरेत्। अथाग्निम्। अथाग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवेनं पश्यन्नुद्धंरति। यद्ग्निं पूर्व हरत्यथाग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेंनैवेनं प्रणंयति। ब्राह्मण आंर्षेय उद्धेरेत्। ब्राह्मणो वे सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवेनं देवतांभिरुद्धंरित। अग्निहोत्रम्पुसाद्यातिमंतोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभि निम्नोचंति॥१८॥

पुनः समन्यं जुहोति। अन्तेंनैवान्तं युज्ञस्य निष्कंरोति।

वर्रणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निर्वपत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तांद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवेनं धाम्ना समर्धयति। यद्ग्निं पूर्वेष् हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवेनं प्रणयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो व सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्युच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेतिं। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देविभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्कषद्याज्येन जुहुयात्। प्रतीचींमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंप्साद्यातिमितोरासीत। व्रतमेव हृतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनों गच्छिति॥२१॥ यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् स्यांऽभ्युंदेतिं। पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तंनैवान्तं यज्ञस्य

निष्कंरोति। मित्रो वा एतस्यं यूज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् क् सूर्योऽभ्युंदेतिं। मैत्रं चुरुं निर्वपेत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रीणीते। यस्यांऽऽहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्वार्यंत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थैंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मे जनयेत्। यद्वे यज्ञस्यं वास्त्व्यं ऋियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरित। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्त्व्यंमुग्निमुपांसीत। रुद्रौंऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिषं जातवेदाः। स गांयत्रिया त्रिष्टुभा जगत्या। देवेभ्यों हृव्यं वहतु प्रजानन्निति। छन्दोभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयति। गार्हंपत्यं मन्थति। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं क्रामन्ति। इषे र्य्यै रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। पृशवो वै र्यिः। पृशूनेवास्मैं रमयति। सार्स्वतौ त्वोथ्सौ समिन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुथ्सौं। ऋख्सामाभ्यांमेवैन्र् सिमंन्थे। सम्राडंसि विराडसीत्यांह। रथन्तरं वै सम्राट्। बृहद्विराट्॥२५॥

ताभ्यांमेवेन् सिन्धे। वज्रो वै चुक्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्त्राऽग्नी याति। आह्वनीयंमुद्धाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृंतं पदश् हि तें। सूर्यस्य रश्मीनन्वांत्तानं। तत्रं रियष्ठामनु सं भेरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वार्जवत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणेवास्यं युज्ञेनं युज्ञमनु सन्तंनोति। त्वमंग्ने सप्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेव युज्ञश् सन्तंनोति। अग्नयं पिथृकृतं पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपत्। अग्निमेव पिथृकृत् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं युज्ञियं पन्थामपि नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वही ह्येष समृद्धे॥२७॥

हर्त्यथाँग्निहोत्रं निम्नोचंति हरेद्देवतां गच्छत्युद्वार्थंन्मन्थेद्रमस्व बृहद्विराडिति नवं च (नि वै पूर्वं त्रीणिं निम्नोचंति दुर्भेण् यद्धिरंण्यमग्निहोत्रं पुनुर्वरुणो वारुणं नि वा एतस्याभ्युंदेतिं चतुर्गृहीतमाज्यं यदाज्यं पराँच्युषाः पुनर्मित्रो मैत्रं यस्यांऽऽहव्नीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्यो यद्वै मंन्थेदुद्धरेत्॥॥———[४]

यस्यं प्रातः सव्ने सोमोंऽति्रिच्यंते। माध्यं दिन् सवंनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौर्धयति मुरुता्मिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा एतत्। यथ्सवंनस्याति्रिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सुन्धेः शान्त्यै। गायत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनै्व प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

मुरुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनाथ्सवनान्नयंन्ति। होतुश्चमसमनूत्रयन्ते। होताऽनुं शश्सिति। मध्यत एव यज्ञश् समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सर्वने सोमोऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृतीयसवनं कामयमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीतश् सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यथ्सवनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिरिक्तस्य शान्त्यै। बण्महा असि सूर्येति कुर्वन्ति। यस्यैवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवैनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत साम भवति। तेनैव मार्ध्यं दिनाथ्सवनान्नयंन्ति। सप्तद्शः स्तोमंः। तेनैव तृंतीयसवनान्नयंन्ति। होतुंश्चमसमनून्नयन्ते। होताऽनुं श॰सति॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ स्मादंधाति। यस्यं तृतीयसव्ने सोमोंऽतिरिच्यंत। उक्थं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽतिरिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽतिरिच्यंत। तत्त्वे दुंष्प्रज्ञानम्। यज्ञंमानं वा एतत्प्शवं आसाह्ययन्ति। बृहथ्सामं भवति। बृहद्वा इमाँ ह्योकान्दांधार। बार्ह्ताः पृशवंः। बृहतेवास्में पृश्चन्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वे देवानां पृष्टम्। पृष्ट्येवेन् समर्धयन्ति। होतुंश्चम्समनून्नंयन्ते। होताऽनुंश स्सति। मध्यत एव यज्ञ स्मादंधाति॥३१॥ यन्ति। सवनस्याविरिच्यंते शस्सति वाधार्षः चं॥———[५]

एकं को वै जनतांयामिन्द्रंः। एकं वा एताविन्द्रंमिमे सश्सुंनुतः। यौ द्वौ सश्सुनुतः। प्रजापंतिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावांणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सश्सुन्वतोर्निर्वप्सति। पूर्वेणोप्सृत्यां देवता इत्यांहः। पूर्वोप्सृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिंवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्यै॥३२॥

मुरुत्वंतीः प्रतिपदंः। मुरुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः।

इयं वाव रंथन्त्रम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवैनंमुन्तरंति। वाचश्च मनंसश्च। प्राणाचापानाच। दिवश्चं पृथिव्याश्च॥३३॥

सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्यात्। अभिवर्तो ब्रह्मसामं भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्ये। अभिजिद्भवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। विश्वजिद्भवति। विश्वंस्य जित्यै। यस्य भूयार्श्सो यज्ञऋतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्कः इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः परस्ताथ्स्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञुक्रतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स सर्सुन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दार्सस् वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दार्सस्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

ड्रष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽष्टुः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योमां पात्मित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणांपानौ मा मां हासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयुः। कूर्कृतांमिवेषां लोकः स्यात्। आहंर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥ तं दक्षिणतो वेद्यै निधाये। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवैनं परिंददित। व्यृंद्धं तदित्यांहुः। यथ्स्तुतमनंनुशस्तमिति। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मार्जालीयं परींयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोर्वैनं लोकयोः परिंददित॥३७॥

अथो धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मै हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यो धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयूर्षेष पवस् इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्त्रसामेषा्र सोमः स्यात्। आयुरेवाऽऽत्मन्दंधते। अथो पाप्मानंमेव विजहंतो यन्ति॥३८॥

अभिजिंत्यै पृथिव्याश्च स्यादंध्वर्युर्बूयाल्लोकयोः परिंददित कुर्वीर्ङ्स्लीणिं च॥———[६]

असुर्यं वा एतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पशून् वीर्यं यच्छति। नास्मात्पशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानांमग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहवनीयं उद्घायंत्। यत्तं मन्थंत्। विच्छंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मे जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायेत्। आग्नींद्धादुद्धं-रेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायेत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायेत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निर्लयते। यत्र खलु वै निर्लीनमृत्तमं पश्यंन्ति। तदेनमिच्छन्ति। यस्माद्दारों रुद्वार्यंत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुर्मुकमिपं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तृनूः। यत्क्रुं मुकः। प्रिययैवैनं तृनुवा समर्धयति। गार्हं पत्यं मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योतिः। स्वादेवैनं योनैर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षेऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयादन्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अभिष्यमाणस्य प्रिया तनूरुदंक्रामत्॥४२॥

तथ्सुवर्ण् हरेण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् हरेण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवैनं तनुवा समर्धयन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपृहरेयुः। क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यस्यं क्रीतमंपहरंयः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यश् सोममाहंरत्। तस्य योऽश्ंशुः पराऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्रमंहन्। तस्यं वृत्कः परां-ऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो व फाल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजां। यदांदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोममेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रींणीयात्। दथ्ना मध्यं दिने॥४४॥

नीत्मिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमः स्याद्रथन्तर-सामा। य एवर्त्विजों वृताः स्युः। त एनं याजयेयुः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं एव। पुनः सोमं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। सर्वाभ्यो वा एष देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मानमागुरते। यः स्त्रायांगुरते। एतावान्खलु व पुरुषः। यावंदस्य वित्तम्। सर्ववेदसेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्य एव देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

उद्वार्यति मन्थेन्मन्थत्यक्रामत्प्राऽपंतन्मुध्यन्दिन आगुरते पश्चं च॥————[७]

पर्वमानः सुवर्जनंः। प्वित्रेण विचंर्षणिः। यः पोता स प्नातु मा। पुनन्तुं मा देवज्नाः। पुनन्तु मनेवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयवंः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रेण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीद्यंत्। अग्ने कत्वा कतूर् रनुं॥४६॥

यत्ते प्वित्रंम्चिषि। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। प्वित्रंण स्वेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वैश्वदेवी पुंन्ती देव्यागांत्। यस्यैं बह्वीस्तनुवों वीतपृष्ठाः। तया मदन्तः सधमाद्येषु। वयः स्यांम पतंयो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वानरो रिश्मिर्मिमा पुनातु। वातः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावापृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावरी यज्ञियं मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवितस्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कर्शः। तेनं दिव्येन ब्रह्मणा॥४८॥

ड्दं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृत्रं रसम्। सर्वरं स पूतमंश्ञाति। स्वृद्तिं मांतरिश्वंना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिंभिः सम्भृत्रं रसम्। तस्मै सर्रस्वती दुहे। क्षीरं स्पर्पिर्मधूंदकम्। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः॥४९॥

सुद्धा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसंः। ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथीं अमुम्। कामान्थ्समध्यन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुद्धा हि घृतश्चतः। ऋषिभिः सम्भृतो रसः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृतरं हितम्। येनं देवाः पवित्रेण। आत्मानं पुनते सदाँ। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं पवित्रम्। श्रतोद्यांमर् हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदों वयम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमंः स्वस्त्या वर्रुणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥

अर्नु रयीणां ब्रह्मंणा स्वस्त्ययंनीः सुदुघा हि घृंतृश्चुत् ऋषिंभिः सम्भृंतो रसंः पुनातु त्रीणिं

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अजुंह्वतीः। देवा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमं- जुहवुः। तेनाधमास ऊर्जमवांरुन्थतः। तस्मादर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्जमवांरुन्थतः।

तस्मान्मासि पितृभ्यः क्रियते। मृनुष्यां अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं इस्वधाम्॥५२॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं द्वयीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नां मनुष्येम्य उपहियते। प्रातश्चं सायं चं। प्रश्वोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्त-मंजुहवुः। तेनं त्रयीमूर्ज्मवारुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः पृशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तमुपोदंतिष्ठ्नतमंजुहवुः। तेनं संवथ्सर ऊर्ज्मवांरुन्धत। ते देवा अमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्ययः स्म इतिं। त एतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवैषां तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥५४॥

यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुंन्यत। तान्तेनावं रुन्थे। यत्पितृभ्यः कुरोतिं। यामेव पितर् ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यदांवस्थेऽत्रूष्ट् हरेन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥ यामेव पशव ऊर्जम्वारुंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे।

यचौतुर्मास्यैर्यजंते। यामेवासंग् ऊर्जम्वारंन्धत। तान्तेनावं रुन्धे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंव्यो भवति। वि्राजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचौतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवेनास्मिँ श्लोके प्रत्यंतिष्ठत्। व्रुणप्रघासेर्न्तिरक्षे। साक्रमेधेरमुष्मिँ श्लोके। एष ह त्वावेतथ्सर्वं भवति। य एवं विद्वाङ्श्चांतुर्मास्यैर्यजंते॥ ५६॥ मनुष्यं अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधामसंग अपश्यश्रम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधामसंग द्वांत्यतिष्ठवृत्वारि च॥———[९]

अग्निर्वाव संवथ्सरः। आदित्यः परिवथ्सरः। चन्द्रमां इदावथ्सरः। वायुरंनुवथ्सरः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। अग्निमेव तथ्संवथ्सरमाप्नोति। तस्माद्वैश्वदेवेन् यजंमानः। संवथ्सरीणाई स्वस्तिमाशास्त इत्याशांसीत। यद्वेरुण-प्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्परिवथ्सरमाप्नोति॥५७॥

तस्मौद्वरुणप्रघासैर्यजंमानः। परिवृथ्सरीणाई स्वस्तिमा-शौस्त इत्याशांसीत। यथ्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तदिदावथ्सरमाप्नोति। तस्मौथ्साकमेधेर्यजंमानः। इदा-वृथ्सरीणाई स्वस्तिमाशौस्त इत्याशांसीत। यत्पितृयुज्ञेन यजंते। देवानेव तदन्ववंस्यति। अथवा अस्य वायुश्चांनु- वथ्सरश्चाप्रीतावुच्छिष्येते। यच्छुंनासीरीयेण यजंते॥५८॥ वायुमेव तदंनुवथ्सरमाप्नोति। तस्मांच्छुनासीरीयेण यजंमानः। अनुवथ्सरीणाई स्वस्तिमाशांस्त इत्याशांसीत। संवथ्सरं वा एष ईंफ्सतीत्यांहः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह त्वै संवथ्सरमाप्नोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंत। विश्वे देवाः समयजन्त। तेंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवन् यजते। एतमेव लोकं जयित। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुंज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवन् यजते। अर्थ संवथ्सरस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवथ्सरस्यं गृहपंतिमाप्नोतिं। अर्थ सहस्रयाजिनमाप्नोति। यदा सहस्रयाजिनमाप्नोतिं॥६०॥

अर्थ गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृहमेधिनंमाप्नोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्रां। एतद्वा एतेषांमवमम्। अतोतो वा उत्तंराणि श्रेया १सि भवन्ति। यद्विश्वं देवाः समयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥ चतुर्थः प्रश्नः (अष्टकम् १) अथांऽऽदित्यो वर्रुण राजानं वरुणप्रघासैरंयजत। स

एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वंरुणप्रघासैर्यजीते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुंज्यमुपैति। यदांदित्यो वर्रुण् राजानं वरुणप्रघासै-रयंजत। तद्वंरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ सोमो राजा छन्दा रेसि साकमेधेरंयजत॥६२॥ स एतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभातिं। यथ्मांकमें धैर्यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मि ईश्चन्द्रमां विभातिं। चन्द्रमंस एव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चुन्द्रमाः। एष ह त्वे साक्षाथ्सोमं भक्षयति। य एवं विद्वान्थ्यांकमेधैर्यजेते। यथ्योमश्च राजा छन्दा ५सि च समैधंन्त॥६३॥

तथ्सांकमेधाना ५ साकमेधत्वम्। अथर्तवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृयज्ञेनांयजन्त। त एतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवंः। यत्पितृयज्ञेन यजित। एतमेव लोकं जियति। यस्मिन्नृतवंः। ऋतूनामेव सायुंज्यमुपैति। यदतवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरंं पितृयज्ञेनायंजन्त। तत्पंतृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेम्हीतिं। ततो वै ता अप्रथन्त। य एवं विद्वा इस्त्र्यंम्बकैर्यजेते। प्रथंते प्रजयां पृश्विः। अथं वायुः पंरमेष्ठिन इश्वासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमींयता (३) इतिं। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तौ प्रमीयंते। वसन्तो भंवति। यदिं ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदिं वर्षासुं वर्षाः। यदिं श्रिदें श्रत्। यदि हेमंन् हेम्न्तः। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमप्येति। संवथ्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥६६॥

परिवृथ्सरमाँप्रोति शुनासीरीयेण् यजंतेऽजयन्थ्सहस्रयाजिनंमाप्रोतिं वैश्वदेवृत्वः सांकमेधेरंयजत समैधंन्त पितृयज्ञ्वत्वं जंयति यस्मिन्वायुर्हंमृन्तस्त्रीणिं च॥————[१०]

उभये युवर सुराम्मुदंस्थान्नि वे यस्यं प्रातः सव्न एकैकोऽसुर्यं पर्वमानः प्रजा वे स्त्रमांसताग्निर्वाव संवथ्सरो दर्श॥१०॥

उभये वा उदस्थाथ्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्राह्मणेष्वर्थं गृहमेधिन् षद्ध्यंष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥ हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिकाः। शुक्रं प्रस्ताञ्चोतिर्वस्तात्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तात्। सोमस्येन्वका वितंतानि। प्रस्ताद्वयन्तोऽवस्तात्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्ताद्विक्षारोऽवस्तात्। अदित्ये पुनर्वसू। वातः परस्तादाईमवस्तात्॥१॥

बृह्स्पतेंस्तिष्यः। जुह्नेतः प्रस्ताद्यजंमाना अवस्तांत्। सपाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तांदभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तांत्। पितृणां मघाः। रुदन्तः प्रस्तांदपश्रश्शोऽवस्तांत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तांदषभोऽवस्तांत्। भगस्योत्तरे। बृह्तवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तांत्॥२॥

देवस्यं सवितुर्हस्तः। प्रस्तः प्रस्तांथ्यनिर्वस्तांत्। इन्द्रंस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांथ्यत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ट्यां व्रतिः। प्रस्तादसिंद्धिर्वस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानिं प्रस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्प्रस्तांद्भ्यारूढम्वस्तांत्॥३॥

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्पुरस्तांत्प्रतिशृणद्वस्तांत्। निर्ऋंत्ये मूलवर्हेणी। प्रतिभञ्जन्तंः परस्तांतप्रतिशृणन्तो-ऽवस्तात्। अपां पूर्वां अषाढाः। वर्चः पुरस्ताथ्सिमितिर्वस्तात्। विश्वेषां देवानामुत्तराः। अभिजयंत्परस्तांदभिजितम्वस्तांत्। विष्णोः श्रोणा पृच्छमानाः। पुरस्तात्पन्थां अवस्तांत्॥४॥ वसूना 💐 श्रविष्ठाः। भूतं पुरस्ताद्भृतिरुवस्तात्। इन्द्रस्य शतभिषक्। विश्वव्यंचाः पुरस्तांद्विश्वक्षितिर्वस्तांत्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वान्रं पुरस्ताँद्वैश्वावस्वम्-वस्तांत्। अहें बुंध्रियस्योत्तरे। अभिष्श्रिन्तः पुरस्तांदभि-षुण्वन्तोऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गार्वः पुरस्तांद्वथ्सा . अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामंः पुरस्ताथ्सेनाऽवस्तात्। यमस्यापभरंणीः। अपकर्षन्तः परस्तांदपवहन्तोऽवस्तांत्। पूर्णा पश्चाद्यत्ते देवा अदेधुः॥५॥

आर्द्रम् वस्ताद्वहं माना अवस्तांदुभ्यारूं ढम् वस्तात्पन्थां अवस्तांद्वथ्सा अवस्तात्पश्चं च॥——[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्वंर्वीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेतिं। अथ् नक्षंत्रं नैतिं। यावंति तत्र सूर्यो गच्छैंत्। यत्रं जघुन्यं पश्येंत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते। एव॰ हु वै युज्ञेषुं च शृतद्युंम्नं च माथ्स्यो निरवसाययां चंकार॥६॥

यो वै नेक्ष्तियें प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयोंर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तंः। चित्रा शिरंः। निष्ठ्या हृदंयम्। ऊरू विशांखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्तियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयोर्विदुः॥७॥

अस्मिङ्श्चामुष्मिङ्श्च। यां कामयेत दुहितरंं प्रिया स्यादितिं। तां निष्टांयां दद्यात्। प्रियेव भवति। नेव तु पुनरागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायैं। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितोंऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानप-ज्य्यं जंयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्य्यमेव जयित। पापपंराजितिमव् तु। प्रजापंतिः प्शूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावंन्त प्वाभंवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्मौद्रेवत्यौं पशूनां कुंवीत।

यत्किं चौर्वाचीन् सोमौत्। प्रैव भवन्ति। स्ि्रिलं वा इदमेन्त्रासीत्। यदत्रंरन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजते। अमु स लोकं नक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानिं पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मादश्चीलनांमङ्श्चित्रे। नावंस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुंरुते। ताहगेव तत्। देवनृक्षत्राणि वा अन्यानि॥११॥

युम्नक्षत्राण्यन्यानि। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानि देवनक्षत्राणि। अनूराधाः प्रथमम्। अपभरंणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षत्राणि। यानि देवनक्षत्राणि। तानि दक्षिणेन् परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥

तान्युत्तरेण। अन्वेषामराथ्स्मेति। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषामवधिष्मेति। तज्ञ्येष्ठघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेति। तन्मूंल्वर्हंणी। यन्नासंहन्त। तदंषाढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्शणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्रतभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपुभरणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्षत्राणि। यान्येव देवनक्षत्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चुकारैवं वेदोभयोरेनं लोकयोविंदुरजयन्नेवतीमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमुन्यानि यानिं यमनक्षत्राण्यश्लोणद्यम-

देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रस्वः प्राणः। वरुणस्य सायमांस्वों-ऽपानः। यत्प्रंतीचीनं प्रातस्तनात्। प्राचीन र सङ्गवात्। ततों देवा अग्निष्टोमं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्ञस्व्यहंः। तस्मात्तर्हिं पृशवंः सुमायंन्ति। यत्प्रंतीचीन र सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेजस्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपित। यत्प्रंतीचीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोड्शिनं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः॥१६॥

भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहः। तस्मादपराह्ने कुंमार्यो भगंमिच्छमानाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्नात्। प्राचीनर्ं सायात्। ततों देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वरुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नार्नृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविश्षो नक्षेत्राणाम्। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानि। तानि नवं। यच्चं प्रस्तान्नक्षेत्राणां यच्चावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांदशः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानिं। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांद्शः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरित। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति॥१८॥

सङ्गवाथ्योंड्शिनं निरंमिमत् तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गो वंदेद्भवति समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि

नक्षंत्राण्युष्टी चं॥——[३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कित् पात्रांणि युज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोदशितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन् इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाई-श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥ व्यानादुंपा १शुसवंनम्। वाच ऐन्द्रवायवम्। दक्षकृत्भ्यां मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्विनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौं। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गेभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंब्लीयत। स पृतान्य्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यज्ञमप्यवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। यज्ञस्य धृत्या असंब्लयाय॥२०॥

उपार्श्वन्तर्यामौ निरंमिमीतामिमीत् षद्वं॥————[४]

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शृग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घर्मः पूर्यवंतियत्। अन्तांन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान् रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन् पिरं वर्तये। तपंसाऽस्यानं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्द्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥ यो अस्याः पृथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रांन्तमुष्णिहां।

ओर्जसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रीं मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेर्जसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन् परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥ एकं मासमुदंसृजत्। प्रमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनांभ्यो मह

तद्वृत तच्छकयम्। तन शकय तन राध्यासम्॥२३॥
एकं मास्मुदंसृजत्। प्र्मेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभ्यो मह्
आवंहत्। अमृतं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तद् ते
मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवंः परिवथ्सराः।
येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवंत्यन्। तेनाहमस्य
ब्रह्मणा। निवंत्यामि जीवसें। अग्निस्त्रिग्मेनं शोचिषां।
तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वान्रस्य

तेर्ज्ञसा। ऋतेनाँस्य नि वंतिये। सृत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनाँस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सृत्यम्। तद्वृतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

परिवर्तये स्हाभिवर्तय उष्णिहां राध्यास्ं न्यवर्तयृत्रुपंवर्तये चृत्वारिं च। (ऋतमेव षोडेश। यद्घुर्मो यो अस्याः सप्तदेशसप्तदश। एकं मास्ं चतुंर्वि शितः)॥————[५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुंर्वत। तदसुंरा अकुर्वत। तेऽसुंरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवाश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भेवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथ् केशान्। तत्स्तें-ऽभवन्। सुवर्गं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवंत्यात्मनां। अथो सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेंऽवपत। अथोपपृक्षौ। अथ् केशान्। ततो वै स प्राजायत प्रजयां पृशुभिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां पृशुभिंर्मिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवथ्सरे व्यायंच्छन्त। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवनं चतुरों मासोऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावर्तयन्त परि च। वरुणप्रघासेश्चतुरों मासोऽवृञ्जत् वरुणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावर्तयन्त परि च। साक्रमेधेश्चतुरों मासोऽवृञ्जत सोमंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावर्तयन्त परि च। या संवथ्सर उंपजीवाऽऽसीत्। तामेषामवृञ्जत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥२८॥

य एवं विद्वा इश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृंव्यस्यैव मासो वृक्ता। शीर्षं नि चं वर्तयंते परिं च। यैषा संवथ्सर उंपजीवा। वृक्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः परां भवति। लोहितायसेन नि वंतयते। यद्वा इमामग्निर्ऋतावागंते निवर्तयति। एतदेवैना र्रं रूपं कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवंन्त्येति॥२९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ होहितायुसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं कृत्वा नि वर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवंन्नेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानांमृद्धानि। त्रीणि छन्दा १सि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्यं एषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्य-याज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतियेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च। देवतां एवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पश्निमे मन्यते॥३१॥

पुत्येत्ययुञ्जतासुरा एति लोका मन्यते॥———[६]

आयुंषः प्राणः सन्तंनु। प्राणादंपानः सन्तंनु। अपानाद्यानः सन्तंनु। व्यानाचक्षुः सन्तंनु। चक्षुंषः श्रोत्रः सन्तंनु। श्रोत्रान्मनः सन्तंनु। मनसो वाच् सन्तंनु। वाच आत्मान् सन्तंनु। आत्मनंः पृथिवीः सन्तंनु। पृथिव्या अन्तरिक्षः सन्तंनु। अन्तरिक्षाद्दिवः सन्तंनु। दिवः सुवः सन्तंनु॥३२॥

इन्द्रों दधीचो अस्थिभः। वृत्राण्यप्रतिष्कुतः। ज्रुघानं

बृहचास्तृंतः॥

नवतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनो बृहत्॥३३॥

इन्द्रंमकेंभिर्किणंः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सर्चा। सम्मिश्च आवंचो युजां। इन्द्रों वृज्री हिर्ण्ययंः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर्थ रोहयद्विव। वि गोभिरद्रिमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिंक्तिभिः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओर्जिष्टः स बलें हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबेलो अनंपच्युतः। वृवृक्षुरुग्रो अस्तृतः॥३५॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्हं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनमसुरा बलीया स्सोऽहन्त्रिति। प्रह्लादों हु वै कायाध्वः। विरोचन् स्वं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनं देवा अहन्त्रिति। ते देवाः प्रजापंतिमुपस्मेत्योचः। नाराजकस्य युद्धमस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेति। तं यंज्ञक्रतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥ तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छन्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दन्। तदिष्टींनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नाम्। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तस्मां एतमांग्रावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तम्व कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंम्भि स्मारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छुय्यंन्त उपांनयन्। ते तदंन्तम्व कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि स्मारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तानिडांन्त उपांनयन्। ते तदंन्तम्व कृत्वोदंद्रवन्। तस्मांदेता एतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पुव हे देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुंविन्दन्ति। उपा शूप्सदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुंवेथ्स्यन्तीर्ति। त उपा शूप्सदंमतन्वत। तिस्र एव सांमिधेनीर्नूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्य। तिस्रः परांचीराहंतीर्हुत्वा।

स्रुवेणोप्सदं जुह्वां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी स्वाहेतिं। अश्नन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एत ह् वाव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिष्निरे। तथो एवैतदेवंविद्यर्जमानः। तिस्र एव सांमिधेनीरनूच्यं। स्रुवेणांघारमाघार्य॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणोप्सदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी्र् स्वाहेति। अशन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजमानोऽपं हते। तेऽभिनीयैवाहंः पशुमाऽलंभन्त। अहं एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्राचरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। त्राची्यानं मृत्युमपंजिघ्नरे। त्राची्यानं मृत्युमपंजिधिराहरे। प्राप्मानं मृत्युमपंजिधिराहरे।

रात्रिया पुव तद्द्वा अवात पाप्मान मृत्युमपजाध्नरा ४१॥
तस्मादिभिनीयैवाहंः पृशुमा लंभेत। अहं पुव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनाभिनीयेव रात्रेः
प्रचंरेत्। रात्रिया पुव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं
नुदते। स पुष उंपवस्थीयेऽहं द्विदेवृत्यः पृशुरा लंभ्यते। द्वयं
वा अस्मिँ ह्लोके यर्जमानः। अस्थिं च मा ५ सं चं। अस्थिं

चैव तेनं मार्सं च यजमानः सङ्स्कुरुते। ता वा एताः पश्चं देवताः। अग्नीषोमांवग्निर्मित्रावरुणौ॥४२॥

पृश्रपृश्ची वै यजंमानः। त्वङ्गार्स स्मावाऽस्थिं मृज्ञा। एतमेव तत्पंश्चधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मंश्चिति। भेषजतांयै निर्वरुणत्वायं। तर सप्तिभृष्ठन्दोभिः प्रातरंह्वयन्। तस्मांथ्सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दार्ससे प्रातरनुवाकेऽनूंच्यन्ते। तमेतयोपस्मेत्योपांसीदन्। उपांस्मे गायता नर् इतिं। तस्मांदेतयां बहिष्पवमान उंपसद्यः॥४३॥

ऐच्छुत्रन्यङ्सित्ष्ठन्तेऽनूच्यानूच्यं स्रुवेणांघारमाघार्यं रात्रिया एव तद्देवा अवंर्तिं पाप्मानं मृत्युमपंजिष्ठरे मित्रावरुंणौ नवं च (देवा यजंमानो देवा देवा यजंमानो यजंमानः प्राचंरं प्रचेरेदालंभुन्तालंभेत मृत्युमपंजिष्ठिरे आतृंव्यान्॥)॥———[२]

स संमुद्र उंत्तर्तः प्राज्वंलद्भृम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वांलः। एष उंवेव स भूम्यन्तः। यद्वेंद्यन्तः। तदेतित्रिंश्लं त्रिंपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिंवित्स्तं खंनिन्ति। स सुंवर्णरज्ताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत आसीत्। तं यद्स्या अध्यजनेयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ यथ्सुंवर्णरज्ताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसींत्।

साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रदशेनाहंरन्। यावंती पश्रदशस्य मात्रां॥४५॥

तं संप्तद्रशेनामि प्रास्तुंवत। तं संप्तद्रशेनादंदत। तः संप्तद्रशेनाहं रन्। यावंती सप्तद्रशस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्रशेनं हियमांणस्य तेजो हरों ऽपतत्। तमें कवि दृशेनामि प्रास्तुंवत। तमें कवि दृशेनाहं रन्। यावंत्येकवि दृशस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतं॥ ४६॥

त्रिवृतैव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतैव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्राँ। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावृद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्राँ। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ् यत्पंश्चद्शेनं स्तुवतें। पृश्चद्शेनैव तद्यजंमान्मादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनैव हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्राँ। चन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रश्यामंपक्षीयतें। पृश्चद्रश्यामांपूर्यतें। चन्द्रमंस एवेनं तत्। मात्रा १ सायुंज्य १ सलोकतांं गमयन्ति। अथ् यथ्संप्तद्शेनं स्तुवतें। स्प्तद्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। त॰ संप्तदशेनेव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्शः। प्रजापंतिरेवेनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यदंकवि शोनं स्तुवतें। एकवि शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तमेंकवि शोनेव हंरन्ति। यावंत्येक-वि शस्य मात्रां। असौ वा आंदित्य एंकवि शशः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सार्युज्य सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौ। व्यंप्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव सुवर्णां ऽभवत्। रज्ता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तथ्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ यदंस्तमेतिं। एतामेव तद्रंजतां कुशीमनुसंविशति। प्रह्लादों हु वे कांयाध्वः। विरोचंन् इं स्वं पुत्रमुदौस्यत्। स प्रंद्रों ऽभवत्। तस्मौत्प्रद्रादुंद्कं नाचांमेत्॥५०॥

ये वै चत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती १षि। य एतस्य स्तोमा इतिं। त्रिवृत्पंश्चद्रशः संप्तद्रश एंकवि १शः॥५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाः। सोंऽब्रवीत्। सप्तद्शेनं ह्रियमाणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमुश्विनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कंर्म्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयुस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यदिश्वभ्यां धानाः। पूष्णः कंरम्भः। भारंत्ये परिवापः। मित्रावर्रुणयोः पयस्याऽथं। कस्मदितेषा हिविषामिन्द्रमेव यंजन्तीतिं। एता ह्यंनं देवता इतिं ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भि-रिभषज्य इस्तस्मादितिं। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सवने-ऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन् मार्ध्यं दिने सवने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सब्ने कुर्यात्। एकांदश-कपालान्मार्ध्यं दिने सर्वने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसब्ने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सवने कुंर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सवने। एकांदशकपालाङ्स्तृतीयसवने। यज्ञस्यं सलोमृत्वायं। तदांहुः। यद्वसूनां प्रातः सवनम्। रुद्राणां माध्यं दिन् रू सवनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसवनम्। अथ कस्मादेतेषा र हिवषामिन्द्रमेव यंजन्तीति। एता ह्यंनं देवता इति ब्रूयात्। एतेर्ह्विभूरिभिषज्यङ्स्तस्मादिति॥५४॥

पृक्षिक्ष आंहुस्तृतीयसव्ने प्रांतः सव्नं पर्श्वं च॥————[११]
तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तम्तेषुं स्प्तस् छन्दंः
स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्।
यदवारयन्। तद्वारवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच
पृवावंपादादंबिभयुः। तस्मां पृतानिं स्प्त चंतुरुत्तराणि
छन्दाङ्स्युपादधुः। तेषामित् त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदंभवन्॥५५॥

स बृह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षराँभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिंष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृह्ती॥५६॥ यस्यान्तत्प्रत्यतिष्ठदितिं। यानिं च छन्दा ईस्यत्यरिच्यन्त। यानिं च नोदर्भवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वृह्ती। मामेव भूत्वा। मामुप सङ्श्रंयतेतिं। चतुर्भिरक्षरैरनुष्टुग्बृंह्तीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैः पङ्किर्बृह्तीः मत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानिं चत्वार्यक्षराण्यपच्छिद्यां-दधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-रक्षरैरुष्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैष्ग्रिष्टुग्बृंह्तीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वाद्शभिरक्षरैर्गायत्री बृह्तीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिरक्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंहती एव भूत्वा। बृहतीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दा १सि रथों मे भवत। युष्माभिंरहमेतमध्वांनमनु सश्चंराणीतिं। तस्यं गायत्री च जगंती च पृक्षावंभवताम्। उष्णिकं त्रिष्ठुप्च प्रष्ट्यौं। अनुष्ठुप्चं पृङ्किश्च धुर्यौं। बृहत्येवोद्धिरंभवत्। स एतं छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानमनु समंचरत्। एतः ह् वै छंन्दोर्थमास्थायं। एतमध्वानमनु सश्चरित। येनैष एतथ्सश्चरित। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यर्जते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अभव-वाव सा देवाक्षंरा बृह्त्यंदधाद्वादंशाक्षरांण्यपच्छिद्यांदधादास्थाय पद्वं॥———[१२]

अग्नेः कृत्तिंका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्ब्रह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंषः प्राणिमन्द्रों दर्धीचो देवासुराः स प्रजापितिः स संमुद्रो ये वै चृत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥

अग्नेः कृत्तिका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिस्रः परांचीर्ये वै चत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥ अग्नेः कृत्तिका य उं चैनमेवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः॥

अन्मत्यै पुरोडाशंमष्टाकंपालं निर्वपति। ये प्रत्यश्चः शम्याया अवशीयंन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुमितिः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन् पूर्वेण् प्रचरित। पाप्मानमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एकधैव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ई्युः॥१॥ रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्यं च यजमानं च हन्यात्। वीहि स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्यांह। आहुंत्यैवैन ५ शमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युर्न यजमानः। एको्ल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋंत्यै भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋंत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै निर्ऋंत्या आयतंनम्। स्व एवायतंने निर्ऋतिं निरवंदयते। एष तें निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमे्वोपावंतिते। मुश्चेमम॰हंस् इत्यांह। अर्हंस एवैनं मुश्चति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूषं दक्षिणा। एतद्वै निर्ऋत्यै रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रंतीक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हित्यै। स्वाह्य नमो य इदं चकारेति पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावंर्तन्ते। आनुमतेन प्रचंरति। इयं वा अनुमितिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमन् मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयीष्वेव प्रजास्वभिषिंच्यते। दैवीषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्यः समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवताँश्चेव यज्ञं चावं रुन्धे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँग्नेयः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमाँभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमंहृन्नितिं। यदंग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति॥६॥ वार्त्रघ्रमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धै। इन्द्रों वृत्र हत्वा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्यार्ध्यत। स एतमैंन्द्राग्रमेकांदशकपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। तेन् वै स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्ध। यदैंन्द्राग्रमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनैन्द्रियं च यजमानोऽवं रुन्धे। ऋष्भो वही दक्षिणा॥७॥

यहुही। तेनाँग्रेयः। यहंष्भः। तेनैन्द्रः समृद्धौ। आग्नेयमृष्टाकंपालं निर्वपति। ऐन्द्रं दिधे। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। यृज्ञमुखमेवर्द्धं पुरस्ताँद्धत्ते। यदैन्द्रं दिधे॥८॥

ड्रन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋष्भो वृही दक्षिणा। यद्वही। तेनांग्नेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृद्धै। यावंतीर्वे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्जन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानुस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता ईन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैंन्द्राग्नो भवृत्युज्जित्यै। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवथ्मरः। संवथ्मरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। वैश्वदेव-श्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्। अन्नमेवास्मै स्वदयति॥१०॥

प्रथमजो वृथ्सो दक्षिणा समृद्धौ। सौम्य श्र्यांमाकं चुरुं निर्वपति। सोमो वा अंकृष्टपच्यस्य राजाँ। अकृष्टपच्यमेवास्मैं स्वदयति। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवतंया वासः समृद्धौ। सरंस्वत्यै चुरुं निर्वपति। सरंस्वते चुरुम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। एति वा एष यंज्ञमुखाद्दध्याः। योंऽग्नेर्देवतांया एतिं। अष्टावेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखाद्दध्यां अग्नेर्देवतांयै नैतिं॥११॥

र्ड्युर्निरवंदयतेऽङ्गुष्ठाभ्यां जुहोत्यनुंमितर्देवतां निर्वपंति वही दक्षिणा यदैन्द्रं दध्यपंराभावाय स्वदयति गावौ दक्षिणा समृंद्धौ पद्वं॥————[१]

वैश्वदेवन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहिम्माः प्रजनयेयमिति। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजािम्च्छमानः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनिक्त यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजािम्च्छमानौ। तास्विग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥ सोमो रेतोंऽदधात्। स्विता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोंषयत्। ते वा एते त्रिः संवथ्सरस्य प्रयुंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिंपतयः। स्वथ्सरो वै प्रजापंतिः। स्वथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता म्रुतोंंऽघ्नन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतेतिं॥१३॥

स एतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मारुतो निरुप्यते। यज्ञस्य क्रुप्त्यै। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गुणुश पुवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मं आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्युदंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षां। यद्युद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां भवति। वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयति। वाजिनमानयति। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतों दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजांता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परिं गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रे यजत। मया मुखेनासुंराञ्जेष्यथेति। मां द्वितीयमिति सोमोंऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेति। मां तृतीयमिति सविता। मया प्रसूता जेष्यथेति। मां चंतुर्थीमिति सरंस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धांस्यामीति। मां पंश्रममिति पूषा। मयां प्रतिष्ठयां जेष्यथेति॥१७॥

तें'ऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रंतिष्ठाऽऽसींत्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी॰षिं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तंरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव् ह्यंतर्हिं पृशवंः॥१८॥

पुंदित्यंशोचद्युद्धरंत्यब्रवीत्प्रतिष्ठयां जेष्य्थेत्येतर्हि पृशवंः॥-----[२]

त्रिवृद्धर्हिर्भविति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। एकधा पुनः सन्नेद्धं भवति। एकं इव ह्यंयं लोकः॥१९॥

अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रतिं तिष्ठति। प्रस्वों भवन्ति। प्रथमजामेव पृष्टिमवं रुन्धे। प्रथमजो वृथ्सो दक्षिणा समृद्धै। पृषदाज्यं गृंह्णाति। पृशवो वै पृषदाज्यम्। पृश्नेवावं रुन्धे। पृश्रगृहीतं भवति। पाङ्गा हि पृशवः। बहुरूपं भवति॥२०॥

बहुरूपा हि प्शवः समृद्धै। अग्निं मंन्थन्ति। अग्निमुंखा वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थंन्ति। अग्निमुंखा एव तत्प्रजा यजंमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवांनूयाजाः। अष्टौ ह्वी॰िषं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शथ्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराज्ञैवान्नाद्यमवं रुन्धे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्धयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृशुभिः समर्धयति। यदल्पंमानयेत्। अल्पां एनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्बह्वांनयेत्। बहवं एनं पृशवोऽभुञ्जन्त उपंतिष्ठेरन्। बृह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बृहवं एवैनं पृशवों भुञ्जन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यजंमान्स्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुंवृगी लोकः। हुत्वाऽभि जुहोति। यजंमानमेव सुंवृगी लोकं गंमियत्वा। तेजंसा समर्थयति। यजंमानो वा एकंकपालः। सुवृगी लोक आंहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाश्लोकाद्यजंमानमवं-विध्येत्। स्रुचा जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रो। यत्प्राङ्घवेत। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्देक्षिणा पिंतृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा रेसि युज्ञ र हेन्युः। यदुदङ्कं। मनुष्यलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वै प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रति तिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवः। ऋतून् युज्ञः। युज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥ वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनः। तानेव तद्यंजिति। अथो खल्वांहुः। छन्दा १ सि वै वाजिन इतिं। तान्येव तद्यंजिति। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरी सोम्पानौं। तयौः परि्धयं आधानम्। वाजिनं भाग्धेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहत्यं परिधीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छति। बर्हिषि विषिश्चन्वाजिनमा नंयति। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतो दधाति। समुपहूयं भक्षयन्ति। पृतथ्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतो दधते। यजमान उत्तमो भंक्षयति। पृशवो वै वाजिनम्। यजमान एव पृश्न्यतिष्ठापयन्ति॥२८॥

लोको बंहुरूपं भंवत्याज्यंभागौ पृशव आज्यंमवद्येदांहवनीयः प्रत्यक्तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यों भागुधेयंमेते चत्वारिं च॥————[3]

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा असृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अस्मादपाँक्रामन्। ता वरुणो भूत्वा प्रजा वरुणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वरुणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रुपांधावन्नाथिम्ब्छमांनाः। स एतान्य्रजापंतिर्वरुण-प्रघासानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स प्रजा वंरुणपाशादंमुञ्जत्। यद्वंरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यंक्र आसींत्। स्व्यः प्रसृंतः। स पृतां द्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वे स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजंमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्मांचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं ल्लोक उभयाबांहः। यज्ञाभिंजितः

तस्माचातुमास्ययाज्यमुष्पिश्चाक उम्याबाहुः। युज्ञा। ह्यस्य। पृथमात्राद्वेदी असंस्मिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्यश्सौं। उत्तरस्यां वेद्यांमृत्तरवेदिमुपं वपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृशूनेवावं रुन्धे। अथों यज्ञप्रषोऽनंन्तरित्ये। पृतद्वौह्मणान्येव पश्चं ह्वीश्षिं। अथेष ऐन्द्राम्नो भंवति। प्राणापानौ वा पृतौ देवानौम्। यदिन्द्राम्नी। यदैन्द्राम्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा पृतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति। ओजो बलमेवावं रुन्धे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मंश्चति। लोमशौ भवतो मेध्यत्वायं॥३२॥ श्मीपूर्णान्युपं वपित। घासमेवाभ्यामिपं यच्छति। प्रजापितमृत्राद्यं नोपानमत्। स एतेनं श्तेध्मेन हिविषा-ऽन्नाद्यमवारुन्थ। यत्परः श्तानिं शमीपूर्णानि भवंन्ति। अन्नाद्यस्यावरुद्धे। सौम्यानि वै क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयित। यत्करीरांणि भवंन्ति। सौम्ययैवाहुंत्या दिवो वृष्टिमवं रुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। एक्मितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति॥३३॥

निरुप्यन्ते भवतो भवंति मेध्यत्वायं रुन्धे षद्गं॥------[४]

उत्तरस्यां वेद्यांमन्यानि ह्वी १ षि सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अप्धुरमेवेनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं हरति। तस्माद्धह्मणश्च क्षत्राच्च विशोऽन्यतोऽपकृमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचरित। अनृतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वर्रणमवं यजते। यदेवाध्वर्यः करोतिं॥३४॥ तत्प्रंतिप्रस्थाता करोति। तस्माद्यच्छ्रेयांन्करोति। तत्पापीयान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवेनां करोति।

अथो तपं एवैनामुपं नयति। यञ्जार सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञाति र रुन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्यैवैनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयित। अह्वंतैवैनाम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वीर्यो यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्या रं सवीर्यत्वायं। यद्गामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रणमवं यजते। यजमानदेवत्यों वा आंहवनीर्यः॥३६॥

भातृव्यदेवत्यो दक्षिणः। यदांहवनीये जुहुयात्। यजमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वरुणपाशेनं ग्राहयति। शूर्पण जुहोति। अन्यमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रेध निधायं जुहोति। शीर्षत एव वर्रणमवं यजते। प्रत्यिङ्गिष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केष वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत् इत्याह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदाह। वरुणगृहीतं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्यजुंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषैश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वरुंणगृहीतेनै्व वरुंणमवंयजते। अपों-ऽवभृथमवैति॥३८॥

अपसु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुणमवंयजते। प्रति-युतो वर्रुणस्य पाश इत्यांह। वरुणपाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतिक्षमा यन्ति। वर्रुणस्यान्तर्हित्यै। एधौं उस्येधिषीमही-त्यांह। समिधैवाग्निं नमस्यन्तं उपायंन्ति। तेजों ऽसि तेजो मियं धेहीत्यांह। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते॥३९॥

कुरोतिं ग्राहयत्याहवुनीयस्तिष्ठं जुहोत्युपोंऽवभृथमवैति धत्ते॥—————[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनींक-वती तुनूः। तां प्रीणीत। अथासुंरानुभि भंविष्यथेतिं। ते देवा अग्नयेऽनींकवते पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकान्य-जनयत। ततों देवा अभंवन्। पराऽसुंराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनींकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानींकवन्त्र स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीणाति। सौंऽग्निरनींकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेंन प्रीतः। चतुर्धाऽनींकानि जनयते। असौ वा आंदित्यौंऽग्निरनींकवान्। तस्यं रुश्मयो- ऽनींकानि। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनींकानि जनयति। तेऽसुंराः परांजिता यन्तः। द्यावापृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तपुनेभ्यंश्चरं निरंवपन्। तान्द्यावांपृथिवीभ्यांमेवोभयतः समंतपन्। यन्मुरुद्धाः सान्तपुनेभ्यंश्चरं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तद्भ्यतो यजमानो भ्रातृंव्यान्थ्यन्तंपति। मुध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्ठं तपंति। चुरुर्भविति। सूर्वतं पुवैनान्थ्यन्तंपति। ते देवाः श्वोविज्यिनः सन्तंः। सर्वासां दुग्धे गृहमेधीयं चुरुं निरंवपन्॥४२॥

आशिता पुवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भवितेति। स शृतोऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्वन्। न हि देवा अहुंतस्याश्वन्ति। तैंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इति। मुरुद्धों गृहमेधिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धो गृहमेधिभ्यो-ऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाकुत्रा ऋियतें। पृशुव्यं तत्। पाकुत्रा वा पुतिक्रियते। यन्नेध्माबुर्हिर्भवंति। न सामिधेनीर्न्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तैं। नानूयाजाः। य एवं वेदं। पृशुमान्भवित। आज्यंभागौ यजित। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरेति। मुरुतों गृहमे्धिनों यजित। भाग्धेयेनैवैनान्थ्समंध-यित। अग्निइस्विष्टकृतं यजित प्रतिष्ठित्यै। इडान्तो भवित। पृशवो वा इडाँ। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥४५॥

असुंरा अश्रयन्गृहमे्धीयं च्रुं निरंवपन्नजुहवुर्-वाहेडाँन्तो भवति द्वे चं॥———[६]

यत्पत्नीं गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृहमेध्येव स्याँत्। वि त्वंस्य युज्ञ ऋध्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं युज्ञो व्यृंद्धोत। प्रतिंवेशं पचेयुः। तस्याँश्जीयात्। गृहुमेध्येव भेवति। नास्यं यज्ञो व्यृंद्धाते॥४६॥

ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आश्वेताभ्येश्वत। अनुं वृथ्सानंवासयन्। तेभ्योऽसुंगः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुंग्न्युनंरगच्छत्। गृह्मेधीयेनेष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आश्वेतेऽभ्यंश्वते॥४७॥

अनुं वृथ्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानुः क्षुधं

प्रहिणोति। ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ठा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तता। गृह्मेधीयेंनेष्ठा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहिंतभाग उपावर्तते। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनेवेन् समर्धयित। ऋषभमाह्वयित। वृषद्भार प्वास्य सः। अथो इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमानो भातृव्यंस्य वृङ्के। इन्द्रों वृत्र हत्वा। पर्गं परावतंमगच्छत्। अपाराधिमिति मन्यंमानः। सौंऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीति। तैंऽब्रुवन्मुरुतो वरं वृणामहै॥४९॥

अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिविर्निरुप्याता इति। त एंनमध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनांं क्रीडित्वम्। यन्मरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिविर्निरुप्यते विजित्ये। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वे लोक इन्द्रों वृत्रमहन्थ्समृद्धौ। एतद्वाह्मणान्येव पश्चं ह्वी धिं। एतद्वाह्मण ऐन्द्राग्नः। अथैष ऐन्द्रश्चरुर्भवति॥५०॥ उद्धारं वा एतमिन्द्र उदंहरत। वृत्र हत्वा। अन्यासुं देवतास्वर्धि। यदेष ऐन्द्रश्चरुर्भवंति। उद्धारमेव तं यजंमान् उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्वर्धि। वैश्वकर्मण एकंकपालो भवति। विश्वान्येव तेन कर्माणि यजंमानोऽवं रुन्धे॥५१॥

ऋद्ध्वेऽभ्यं अते जुहोति वृणामहै भवत्यृष्टौ चं॥——[७] वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुण-

प्रघासैर्वरुणपाशादंमुश्चत्। साकुमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवादयत्। पितृयज्ञेनं सुवृगं लोकमंगमयत्। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मंश्चति। साकुमेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवंदयते॥५२॥

पितृयज्ञेनं सुव्रंगं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदृत्य तत्। उत्तर्त एवोपवीय निर्वपत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। अथो यदेव दक्षिणार्थेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृत्। सोमांय पितृमतें पुरोडाश्र् षद्वंपालं निर्वपति। संव्थ्सरो वै सोमंः पितृमान्॥५३॥

संवथ्सरमेव प्रीणाति। पितृभ्यो बर्हिषद्यो धानाः। मासा

वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं श्लोके भंवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पितृभ्योंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरोंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥

अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भवति। सा हि पितृदेवत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्यर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपंमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एकयोपंमन्थति॥५५॥

एका हि पितृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनार्भ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धंन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तै। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मृध्यतोंऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भेवित व्यावृत्त्ये। परिश्रयति। अन्तर्हितो हि पितृलोको मंनुष्यलोकात्। यत्परुषि दिनम्। तद्देवानांम्। यदंन्तरा। तन्मंनुष्यांणाम्॥५७॥

यथ्समूलम्। तत्पितृणाम्। समूलं ब्रहिर्भवित् व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रींणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षङ्घा ऋतवेः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रंस्त्रं यज्ञुंषा गृह्णीयात्। प्रमायुंको यजमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायुंको भवंति। नानायतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिदध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न पंरिद्ध्यात्। रक्षारंसि यज्ञः हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिदधाति। रक्षंसामपंहत्ये। अथो मृत्योरेव यजंमानम्भ्र्यंजिति। यत्रीणि त्रीणि ह्वीङ्घ्यंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषाः साकं प्रमीयरन्। एकैकमनूचीनांन्युदाहंरन्ति। एकैक पृवैषांमन्वश्रः प्रमीयते। कृशिपं कशिप्व्यांय। उपबर्हणम्पबर्हण्यांय। आञ्जंनमाञ्चन्यांय। अभ्यञ्जंनमभ्यञ्जन्यांय। यथाभागमे-वैनांन्प्रीणाति॥६०॥

निरवंदयते पितृमानंग्निष्वात्ता एक्योपं मन्थत्यखांता भवति मनुष्यांणां पद्यन्ते परिद्ध्यान्मीयते

पर्श्व च॥**_____**[८]

अग्नये देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायान् ब्रूहीत्याह। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्ते। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघांरयति। यज्ञपुरुषोरनंन्तरित्ये। नार्षेयं वृंणीते। न होतांरम्॥६१॥

यदार्षेयं वृंणीत। यद्धोतारम्। प्रमायुंको यजमानः स्यात्। प्रमायुंको होता। तस्मान्न वृंणीते। यजमानस्य होतुंर्गोपीथाय। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजति। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजति। आज्यंभागौ यजति॥६२॥

यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित। पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्ये। याज्यां देवतां वषद्गारः। ता एव प्रींणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्यै। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अह्नं एवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽत्यानंयति। रात्रिये द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतों-ऽवदायं। उदङ्कतिं ऋामति व्यावृत्त्ये॥६४॥

आ स्वधेत्याश्रांवयति। अस्तुं स्वधेतिं प्रत्याश्रांवयति। स्वधा नम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पितृणाम्। सोम्मग्रें यजति। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमंं पितृमन्तं यजति। संवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्। संवथ्सरमेव तद्यंजति। पितृन्बंहिषदों यजति॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदंः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजित। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनंः। ते पितरौंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य पुव पितृणाम्गिः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। ताहगेव तत्। एतते तत् ये च त्वामन्विति तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तैं। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्रो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तिदृशमनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥ आहुवनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्यंवास्मै तद्भुंवते। यथ्मत्यांहवनीयैं।

अथान्यत्र चरंन्ति। आतिमंतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृत्रिरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमंतोरुप तिष्ठंन्ते। सुसन्दर्शं त्वा व्यमित्यांह॥६८॥

प्राणो वै सुंसन्दक्। प्राणमेवाऽऽत्मन्दंधते। योजा न्विन्द्र ते हरी इत्यांह। प्राणमेव पुनरयुक्त। अक्षन्नमींमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमींमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमींमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमींमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह् इति वावैतदांह। अपः परिषिश्चति। मार्जयंत्येवैनान्॥६९॥

अथों तर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावनूयाजौ यंजति। प्रजा वै बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजति। चतुरंः प्रयाजान् यंजति। द्वावंनूयाजौ। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयाजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यथ्संयाजयेयुः। प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयाजयन्ति। पत्निये गोपीथायं॥७०॥

होतांरमाज्यंभागौ यजित सन्तंतमवंद्यति व्यावृत्त्यै बर्हिषदों यजित तमेव तद्यंजृत्यनु

निष्क्रांमन्त्याहैनानृतवो नवं च॥

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपति। जाता एव प्रजा

रुद्रान्निरवेदयते। एकमितंरिक्तम्। जनिष्यमांणा एव प्रजा रुद्रान्निरवंदयते। एकंकपाला भवन्ति। एकधैव रुद्रं निरवंदयते। नाभिघांरयति। यदंभिघारयेंत्। अन्तरवचारिण ई रुद्रं कुर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति रुद्रस्यं भागधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अपशुकांया आहुंत्यै नातिष्ठत। असौ तें पशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आृखुस्तें पशुरितिं ब्र्यात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्ति। नारण्यान्। चतुष्पथे जुंहोति। एष वा अंग्रीनां पड्वींशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेनं पर्णेनं जुहोति। सुग्ध्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होतव्यम्। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

एष तें रुद्र भागः सह स्वस्राऽम्बिंकयेत्यांह। शुरद्वा अस्याम्बिका स्वसां। तया वा एष हिनस्ति। य हिनस्ति।

तयैवैन १ सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावंन्त एव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषुजं कंरोति। अवाम्ब रुद्रमंदिमहीत्यांह। आमेवैतामा शास्ते॥७४॥

त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगंस्य लीफ्सन्ते। मूतेंकृत्वा-ऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतेंऽव्सं क्रोतिं। ताहगेव तत्। एष तें रुद्र भाग इत्यांह निर्वत्त्ये। अप्रतिक्षमा यन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा एतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरन्ति। आदित्यं च्रं पुन्रेत्य निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

युन्ति ब्रूयान्निरवंदयते शास्ते सिश्चित् षद्वं॥————[१०]

अनुमत्यै वैश्वदेवेन् ताः सृष्टास्त्रिवृत्प्रजापंतिः सिवृतोत्तंरस्यान्देवासुराः सौंऽग्निर्यत्पत्नीं वैश्वदेवेन् ता वंरुणप्रघासैर्ग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दर्श॥१०॥

अर्नुमत्यै प्रथम्जो वृथ्सो बंहुरूपा हि पृशवृस्तस्मांत्पृथमात्रं यद्ग्रयेऽनींकवत उद्धारं वा अग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पश्चंसप्ततिः॥७५॥

अनुंमत्यै प्रतिं तिष्ठन्ति॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पुतद्वाँह्मणान्येव पश्चं हवी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। वायव्यं पयो भवति। वायुर्वे वृष्ट्यै प्रदापयिता। स पुवास्मै वृष्टिं प्रदापयति। सौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिँ होके वृष्टिं धृता। स एवास्मै वृष्टिं नियंच्छति॥१॥ द्वादशगुव सीरं दक्षिणा समृद्धौ। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुरानिभनंवामेतिं। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकेरिष्य इतिं। स त्रेधा-ऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सौंऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रौं-ऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समंसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभंवत्। तदिन्द्र-तुरीयस्थैन्द्रतुरीयृत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्यै॥३॥

वृहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यह्नहिनीं। तेनांग्नेयी। यद्गैः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यथ्ब्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी समृद्धै। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत॥४॥

त १ सृष्ट १ रक्षा १ स्यजिघा १ सन्। स पृताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निरंमिमीत। ताभिवें स दिग्भ्यो रक्षा १ सि प्राणंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोति। दिग्भ्य पृव तद्यजंमानो रक्षा १ सि प्रणंदते। समूंढ १ रक्षः सन्दंग्ध १ रक्ष इत्यांह। रक्षा १ स्येव सन्दंहति। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य पृव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दक्षिणा समृंद्धै॥ ५॥

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नार्लभत। तर शच्यांऽगृह्णात्। तौ समंलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरोऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सुन्धार सन्दंधावहै। अथ् त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्केण् नार्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमिति। स एतम्पां फेनमिसिश्चत्। न वा एष

शुष्को नार्द्रो व्युंष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा एतद्दिवा न नक्तम्। तस्यैतस्मिं ह्योके। अपां फेनेंन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेनमन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगिति॥७॥

स पुतानंपामार्गानंजनयत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स रक्षाङ्स्यपाहत। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। पुकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध रक्षंसां भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। पृषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षाः सि हन्ति॥८॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै रक्षंसामायतनंम्। स्व एवायतंने रक्षा रेसि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वै पूर्णः। ब्रह्मणेव रक्षा रेसि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एव रक्षा रेसि हन्ति। हृत र रक्षो-ऽवंधिष्म रक्ष इत्यांह। रक्षंसा रूप्तत्यें। यद्वस्ते तद्दक्षिणा नि्रवंत्ये। अप्रंतीक्ष्मायंन्ति। रक्षंसाम्न्तर्हित्ये॥९॥

युच्छुति वर्रुणं तृतीयं विजित्या असृजत् समृंद्धौ हनो मित्रंद्रुगितिं हन्ति स्तृत्यै त्रीणिं च॥[१]

धात्रे पुरोडाश्ं द्वादेशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वै धाता। संवथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयति। अन्वेवास्मा अनुंमितर्मन्यते। राते राका। प्र सिंनीवाली जंनयित। प्रजास्वेव प्रजांतासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपति। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्णवं त्रिंकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यमिन्द्रः। वीर्यं विष्णुः। प्रजा एव प्रजाता वीर्यं प्रतिष्ठापयति। तस्मात्प्रजा वीर्यावतीः। वामन ऋष्मो वही दक्षिणा। यह्नही। तेनांग्रेयः। यद्वेषभः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृद्धै। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं
चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनियता।
वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं प्रवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥
अग्निः प्रजां प्रजनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति।
बभुर्दक्षिणा समृद्धै। सोमापौष्णं चरुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं
चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता।
वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं प्रवास्मै रेतो दर्धाति। पूषा
पश्नप्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुभंवति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा अग्निवैश्वान्रः। संवथ्सरेणैवैन ई स्वदयति। हिरंण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवैनम्। बहु वै राजन्योऽनृंतं करोति। उपं जाम्ये हरते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वद्त्यनृंतम्। अनृंते खलु वै ऋियमांणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं येवमयं च्रं निर्वपति। वरुणपाशादेवैनं मुश्रति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवत्याऽश्वः समृंद्धे॥१५॥

ऐन्द्रावैष्ण्वमेकांदशकपालुं यदंषुभो दर्धाति पूषा पृश्न्त्रजंनयति हिरंण्युं दक्षिणा दक्षिणैकं

राज्यां प्रतिनांमेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारः। एतेऽपादातारः। य एव राष्ट्रस्यं प्रदातारः। येऽपादातारः।

पृतेऽपादातारंः। य पुव राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। येऽपादातारंः। त पुवास्मै राष्ट्रं प्रयेच्छन्ति। राष्ट्रमेव भवति। यथ्समाहृत्यं निर्वपैत्। अरंबिनः स्यः। यथायथं निर्वपति रिवत्वायं॥१६॥ यथ्सद्यो निर्वपैत्। यावंतीमेकेन हिवषाऽऽशिषंमव रुन्थे। तावंतीमवंरुन्धीत। अन्वहिन्नवंपित। भूयंसीमेवाशिषमवं रुन्धे। भूयंसी यज्ञकृत्नुपैति। बार्हस्पत्यं च्रं निर्वपिति ब्रह्मणों गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

पुन्द्रमेकांदशकपाल र राज्ञन्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋष्भो दक्षिणा समृद्धे। आदित्यं चरुं महिष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृद्धे। भगाय चरुं वावातांये गृहे। भगमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चरुं परिवृत्त्यें गृहे कृष्णानांं ब्रीहीणां न्खिनिर्भिन्नम्। पाप्नानंमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कूटा दक्षिणा समृंद्धौ। आग्नेयमृष्टाकंपाल स् सेनान्यों गृहे। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। हिरंण्यं दक्षिणा समृंद्धौ। वारुणं दश्वंकपाल स् सूतस्यं गृहे। वरुणसवमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृंद्धौ। मारुत स् सप्तकंपालं ग्रामण्यों गृहे॥१९॥ अन्नं वै मरुतंः। अन्नंमेवावं रुन्थे। पृश्चिदक्षिणा समृंद्धौ।

सावित्रं द्वादेशकपालं क्षत्तुर्गृहे प्रसूत्यै। उपध्वस्तो दक्षिणा

समृंद्धे। आश्विनं द्विंकपालः संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं कंरोति। सवात्यौं दक्षिणा समृंद्धे। पौष्णं चुरुं भागदुघस्यं गृहे॥२०॥

अत्रं वै पूषा। अत्रंमेवावं रुन्थे। श्यामो दक्षिणा समृद्धे। रौद्रं गांवीधुकं चरुमक्षावापस्यं गृहे। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते। शबल उद्घारो दक्षिणा समृद्धे। द्वादंशैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मैं राष्ट्रमवं रुन्थे। राष्ट्रमेव भवति॥२१॥

यन्न प्रंति निर्वपंत्। रिव्ननं आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रितिनिर्वपति। इन्द्रांय सुत्राम्णं पुरोडाश्ममेकांदशकपालम्। इन्द्रांया होमुर्चे। आशिषं पृवावं रुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आमेवेतामा शास्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भंवति। श्वेतायैं श्वेतवंथ्साये दुग्धे॥२२॥

बार्ह्स्पत्ये मैत्रमपिं दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्ह्स्पत्येन् पूर्वेण प्रचंरति। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रम्न्वारंम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं बुर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजिंत्यै। तस्माद्राज्ञामरंण्यमभिजिंतम्। सैव श्वेता श्वेतवंथ्सा दक्षिंणा समृंद्धौ॥२३॥

र्ितृत्वाय समृं द्ये पष्टौही दक्षिणा समृं द्ये ग्रामण्यों गृहे भागदुघस्यं गृहे भवित दुर्ग्धेऽभिजिंत्ये

देवसुवामेतानि हवी १ षे भवन्ति। एतावन्तो वै देवाना ५ स्वाः। त एवास्में स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एंन स्वन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना स् सुवते। सोमो वनस्पतींनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृहस्पतिर्वाचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानौम्। मित्रः सत्यानांम्॥२४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। सविता त्वां प्रसवाना र सुवतामिति हस्तं गृह्णाति प्रस्त्ये। ये देवा देवः सुवः स्थेत्याह। यथायजुरेवैतत्। मृह्ते क्षुत्रायं महत आधिपत्याय महते जानंराज्यायेत्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। एष वों भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना । राजेत्याह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिद्धाति। स्वां तनुवं वर्रणो अशिश्रेदित्यांह। वरुणस्वमेवावं रुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवैनं व्रत्यं करोति। अमन्मिह महुत ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवैनम्। सर्वे व्राता वर्रणस्याभूवित्रित्यांह। सर्वव्रातमेवैनं करोति। वि मित्र एवैररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमैवेनं तारयति। असूंषुदन्त युज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवेनम्। व्यं त्रितो जंिर्माणं न आन्डित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चं ह्विषांमृग्नयें स्विष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवेनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुकृमान्क्रमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्लोकान्भि- जंयति॥२७॥

स्त्यानांमधायीत्यांहातारीदित्यांह क्रमत एकं च॥————[४]

अर्थेतः स्थेति जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथो ह्विष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपा॰ राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्मैं गृह्णाति। अथो श्रियंमेवेनंम्भिवंहन्ति। अपां पतिर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकः। वृषांऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवैनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। ब्रजिक्षितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अन्नं वै मरुतंः। अन्नमेवावं रुन्धे। सूर्यवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वेर्चस्व्यंकः। सूर्यत्वचसः स्थेत्यांह। सृत्यं वा एतत्। यद्वर्षति। अनृतं यदातपंति वर्षति। सृत्यानृते एवावं रुन्थे। नैन र् सत्यानृते उंदिते हि इस्तः। य एवं वेदं। मान्दाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्यांह। पृशवो वै शक्वंरीः। पृशूनेवावं रुन्धे। विश्वभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव पंयुस्व्यंकः। जनुभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्यांह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेजस्व्यंकः। अपामोषंधीनाः रसः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। एषा वा अपां पृष्ठम्। यथ्सरंस्वती। पृष्ठमेवैनः समानानां करोति। षोड्शभिंगृह्णाति। षोडंशकलो वै पुर्रुषः। यावांनेव पुर्रुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शभिंर्जुहोतिं षोड्शभिंगृह्णाति। द्वात्रिर्शृथ्सम्पंद्यन्ते। द्वात्रिर्श्शदक्षरा-ऽनुष्टुक्। वागंनुष्टुफ्सर्वाणि छन्दार्श्स। वाचैवैन्श् सर्वेभिश्छन्दोंभिर्भिषिंश्चति॥३२॥

ऊर्मिरित्यांहु सूर्यंवर्चसुः स्थेत्यांह ब्रह्मवर्चस्यंकस्तेजुस्याः स्थेत्यांहैव पुरुषः षट् चं॥ $--[\,arkappa]$

देवीरापः सं मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्विमित्यांह। ब्रह्मणैवेनाः स॰सृंजित। अनाधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मणैवेनाः सादयित। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु॰सिनश्च सादयित। आग्नेयो व होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु॰सी। तेजंसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतां राष्ट्रं पिरंगृह्णाति। हिरंण्येनोत्पुंनाति। आहुंत्ये हि प्वित्रांभ्यामृत्पुनन्ति व्यावृंत्त्ये॥३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। अनिंभृष्टम्सीत्यांह। अनिंभृष्ट्र् ह्यंतत्। वाचो बन्धुरित्यांह। वाचो ह्यंष बन्धुंः। तुपोजा इत्यांह। तुपोजा ह्यंतत्। सोमंस्य दात्रम्सीत्यांह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पंनामीत्यांह। शुक्रा

ह्यापंः। शुक्र १ हिरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र हिरंण्यम्। अमृतां अमृत्वेनेत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृत हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्सूयायेत्यांह। राज्सूयांय ह्यंना उत्पुनातिं।
स्थमादों द्युम्निनीरूर्ज एता इतिं वारुण्यर्चा गृह्णाति।
वरुणस्वमेवावं रुन्थे। एकंया गृह्णाति। एक्धेव यर्जमाने
वीर्यं दधाति। क्ष्रत्रस्योल्बंमिस क्ष्रत्रस्य योनिर्सीतिं तार्यं
चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुश्चीलेः
पंवयति। शृतायुर्वे पुरुषः शृतवीर्यः। आत्मैकंशृतः॥३६॥

यावांनेव पुरुंषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। उदुम्बरंमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शष्पांण्याशयति। सुरांबलिमेवैनं करोति। आविदं एता भंवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्मिः। मित्रावर्रुणौ प्राणापानाभ्याम्। इन्द्रों वृत्राय् वज्रमुदंयच्छत्। स दिवंमिलखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आविंन्ने द्यावांपृथिवी धृतद्रते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स आभ्यामेव प्रसूत् इन्द्रों वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आविन्ने द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यजंमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरित। आवित्रा देव्यदितिर्विश्वरूपीत्यांह। इयं वे देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। आवित्रोऽयम्सावांमुष्यायणौऽस्यां विश्यंस्मित्राष्ट्र इत्यांह। विशेवैन रे राष्ट्रेण् समर्धयति। मृह्ते क्षत्रायं मह्त आधिपत्याय महते जानंराज्यायेत्यांह। आमेवैतामा शौस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजेत्यांह। तस्माथ्सोमंराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽिस वार्त्रघ इति धनुः प्रयंच्छिति विजित्यै। शृत्रुबाधनाः स्थेतीषूनं। शत्रूनेवास्यं बाधन्ते। पात मां प्रत्यश्रं पात मां तिर्यश्रंमन्वश्रं मा पातेत्यांह। तिस्रो वे शंर्व्याः। प्रतीचीं तिरश्च्यनूचीं। ताभ्यं पृवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातेत्यांह। दिग्भ्य पृवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः। पातेत्यांह। अपंरिमितादेवैनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विरोक इति त्रिष्टुभां बाहू उद्गृह्णाति। इन्द्रियं वे वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥

व्यावृंत्त्यै दात्रम्सीत्यांहामृत्र् हिरंण्यमेकश्तो गंमयुन्त्याहं ब्राह्मणा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह चुत्वारिं

च॥____

_____[ε]

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजिंत्यै। यदंनु प्रकामेंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्त माँचेत्। मन्साऽनु प्रकांमित। अभि दिशों जयित। नोन्मांचिति। स्मिध्मा तिष्ठेत्यांह। तेजं एवावं रुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। विराजमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावं रुन्धे। उदींचीमा तिष्ठेत्यांह। पृशूनेवावं रुन्धे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनूिज्ञंहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्रो॥४२॥

मारुत एष भंवति। अन्नं वै मुरुतः। अन्नंमेवावं रुन्थे। एकंविश्शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यों गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्येरेव पृशुभिरारण्यान्पृशून्परि गृह्णाति। तस्मांद्राम्यैः पृशुभिरारण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिवैन्यः। अभ्यंषिच्यत॥४३॥ स राष्ट्रं नाभवत्। स एतानि पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्।

तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानि जुहोति। राष्ट्रमेव भंवति। बार्ह्स्पृत्यं पूर्वेषामुत्तमं भंवति। ऐन्द्रमुत्तरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मै क्षत्रं च समीची दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रति-ष्ठापयति॥४४॥

षद्व्रस्तांदिभिषेकस्यं जुहोति। षड्वपरिष्टात्। द्वादंश् सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कुतंश्चनोपांव्याधो भविति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्र वै मृत्युर्जायते। यत्रंयत्रैव मृत्युर्जायते। ततं पुवैन्मवंयजते। तस्माद्वाज्सूयेनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिध निदंधाति। उभयतं एवास्मै शर्म दधाति। अवैष्टा दन्दशूका इति क्रीब॰ सीसेन विध्यति। दन्दश्कांनेवावंयजते। तस्मौत्क्लीबं दंन्दश्का द शुंकाः। निरंस्तं नमुंचेः शिरु इतिं लोहितायसं निरंस्यति। पाप्मानंमेव नमुंचिं निरवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहः॥४७॥

सोमो राजा वर्रणः। देवा धर्मसुवश्च ये। ते ते वाचर् सुवन्तां ते ते प्राण र सुवन्तामित्यांह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वानुभिषिश्चिति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेजंसाऽभिषिश्चामीतिं। तेजस्व्येव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवेत्। सोमंस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो वै देवतंया पुरुंषः॥४८॥

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिंश्वति। अग्नेस्तेजसेत्यांह। तेर्ज एवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्याह। वर्च एवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावर्रुण-योवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मरुतामोजसेत्यांह॥४९॥

ओर्ज पुवास्मिन्दधाति। क्षुत्राणां क्षत्रपंतिरसीत्यांह।

क्षत्राणांमेवेनं क्षत्रपंतिं करोति। अति दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावैतदांह। समावंवृत्रन्नधरागुदीचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो वै रुद्रः। भाग्धेयेंनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥

उदं क्विरत्याग्नीं द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते ऋयी परं नामेत्यांह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामं। तेन वा एष हिनस्ति। य॰ हिनस्ति। तेनैवैन १ सह शंमयति। तस्मै हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्यांह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यै गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भंवति। पूर्णमयेनाध्वर्युरभिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राजन्यः। ऊर्जमेवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति। आश्वंत्थेन वैश्यंः। विशंमेवास्मिन्पृष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन जन्यः। मित्राण्येवास्मे कत्पयिति। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥ भवत्याहुः पुरुष ओज्सेत्यांह निरवंदयते यजते जन्यो हे चं॥————[८]

इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजिंत्यै।

मित्रावर्रणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनं देवतांभ्यां युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्में युनक्ति। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसार्थी। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५३॥

षङ्घा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनिक्तः। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ श्लोकान्भिजंयति। यः क्षित्रियः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भंवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति॥५४॥

मुरुतां प्रस्वे जेषिमित्यांह। मुरुद्धिरेव प्रसूत उन्नयित। आप्तां मन् इत्यांह। यदेव मन्सैफ्सींत्। तदांपत्। राज्नन्यं जिनाति। अनांकान्त एवाक्रमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यो राज्नन्यं जिनातिं। सम्हिमेन्द्रियेणं वीर्येणत्यांह॥५५॥

इन्द्रियमेव वीर्यमात्मन्धंत्ते। पृशूनां मृन्युरंसि तवेव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृशूनां वा एष मृन्युः। यद्वराहः। तेनैव पंशूनां मृन्युमात्मन्धंत्ते। अभि वा इय र संषुवाणं कांमयते। तस्यैश्वरेन्द्रियं वीर्यमादांतोः। वारांही उपानहावुपंमुश्चते। अस्या पुवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानांत्यै॥ ५६॥

नमों मात्रे पृंथिव्या इत्याहाहि १ सायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्मे धेहीत्यांह। आयुर्वाऽऽत्मन्धंत्ते। ऊर्ग्स्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जम्वाऽऽत्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मिये धेहीत्यांह। वर्च एवाऽऽत्मन्धंत्ते। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजमान् आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्मां चतुर्जुहोति। यदुभौ सहावृतिष्ठंताम्। समानं लोकिमंयाताम्। सह संङ्ग्रहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवर्गादेवैनं लोकादन्तदंधाति। हुर्सः शंचिषित्यादंधाति। ब्रह्मंणैवैनं मुपावहरंति। ब्रह्मणा-ऽऽदंधाति। अतिंच्छन्द्साऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दा वे सर्वाणि छन्दार्शसे। सर्वेभिरेवैनं छन्दोभिरादंधाति। वर्ष्म वा एषा छन्दंसाम्। यदतिंच्छन्दाः। यदितंच्छन्दसा दधांति।

वर्ष्मैवैन र समानानां करोति॥५८॥

पद्यन्ते द्धाति वीर्येणेत्याहानाँत्यै प्रतिष्ठित्यै ब्रह्मणाऽऽदंधाति सप्त चं॥———[९]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रं वा अहंः। वारुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यामेवेनंमुपावंहरति। मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसीत्यांह। मैत्रो वे दक्षिणः। वारुणः सव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवेनों भाग्धेयंमुपावंहरति। समहं विश्वदेविरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। ता एवाद्याः कुरुते। क्ष्रत्रस्य नाभिरिस क्षत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वरुंणः पुस्त्यांस्वा साम्रांज्याय सुक्रतुरित्यांह। साम्रांज्यमेवैनश् सुक्रतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वश् रांजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। सवितारंमेवैनश् सृत्यसंवं करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽसि सृत्यौजा इत्यांह। इन्द्रंमेवैन १ सृत्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्माऽसिं मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। मित्रमेवैन १ सुशवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व र रांजन्ब्रह्मासि वर्रुणोऽसि स्त्यधर्मेत्यांह। वर्रुणमेवैन र् सृत्यधर्माणं करोति। स्विताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। गायत्रीमेवैतेनांभि व्याहंरित। इन्द्रोऽसि सृत्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरित॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दार्शसा। सत्यमेवावं रुन्थे। वर्रुणोऽसि सत्यधुर्मेत्यांह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते एवावं रुन्थे॥६२॥

नैन १ सत्यानृते उंदिते हि १ स्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेंणैवास्मां अवरप्र १ रेन्धयति। एव १ हि तच्छ्रेयंः। यदंस्मा एते रध्येयुः। दिशोऽभ्यंय १ राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छति। एते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवेनं करोति॥६३॥

ओदनमुद्भुंवते। पुरमेष्ठी वा एषः। यदोदनः। पुरमामेवैन्ड् श्रियं गमयति। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)- नित्यांह। आमेवेतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवनं मुश्रति। पुरः शृतं भवित। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकंवि शितकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षांया अग्नये स्वष्टकृतं समवंद्यति। देवतांभिरेवेनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। अपान्नश्रे स्वाहोर्जो नश्रे स्वाहाऽग्नये गृहपंतये स्वाहेतिं तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वंव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति॥६४॥

पुतद्वाँह्मणानि धात्रे रिव्निनाँन्देवसुवामुर्थेतो देवीर्दिशः सोमस्येन्द्रंस्य मित्रो दर्श॥१०॥ पुतद्वाँह्मणानि वैष्णुवं त्रिंकपालमन्नं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांह् दिशो व्यास्थांपयृत्युदंङ्घरेत्य ब्रह्मा(३)न्त्व॰ रांजुञ्चतुंष्यष्टिः॥६४॥

पुतद्वाँह्मणानि प्रतिं तिष्ठति॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तथ्स्र सृद्धिरन् समंसर्पत्। तथ्स्र सृपारं सरसृत्वम्। अग्निनां देवेन प्रथमेऽह्न्ननु प्रायुङ्कः। सरस्वत्या वाचा द्वितीर्यं। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीर्यं। पूष्णा प्रशुभिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मणा पश्चमे। इन्द्रेण देवेनं षष्ठे। वर्रुणेन् स्वयां देवत्या सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञाँ ऽष्ट्रमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्मे। विष्णुंना यज्ञेनाँ ऽऽप्रोत्। यथ्स १ सृप्ो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यज्ञंमान आप्नोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यंस्यावंरुख्ये। पुरस्तां दुप्सदा १ सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्त्ररा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वैष्ण्वेनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्त्रतः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

जामि वा पुतत्कुंवन्ति। यथ्सद्यो दीक्षयंन्ति सद्यः सोमं

क्रीणिन्ति। पुण्डिरिस्रजां प्रयेच्छुत्यजांमित्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तिः। अपसु दीक्षात्पसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डिरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दीक्षात्पसी अवं रुन्थे। द्शिभिविथ्सत्रैः सोमं क्रीणाति। दशौक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। मुष्करा भवन्ति

सेन्द्रत्वायं। दशपयो भवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सप्तद्रशः स्तोत्रं भवति। सप्तद्रशः प्रजापंतिः॥४॥ प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशावंध्वर्यवं ददाति। प्रकाशमेवैनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्यंवास्मै वासयति। रुकार होत्रै। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अर्थं प्रस्तोतृप्रतिहृर्तृभ्याम्। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणै। आयुरेवावं रुन्थे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छु सिनै। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्यांम्। प्वित्रे प्वास्यैते। स्थूरि यवाचितमंच्छावाकायं। अन्तत एव वरुंणमवं यजते॥६॥

अनुङ्गाहंमग्रीधं। विहुर्वा अनुङ्गान्। विहुर्ग्रीत्। विहुर्नेव विहुर्वे यज्ञस्यावं रुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतीयम्। सरंस्वती तृतीयम्। भार्ग्वो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीर्पो गृह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धे। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

विराद्वजापंतिरश्वः प्रजापंतेरास्यै यजते ब्रह्मसामं भवति सप्त चं॥————[२]

र्ड्श्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। हिवषोहिवष इष्ट्वा बांर्हस्पृत्यम्भिघांरयित। यज्मानदेवत्यों वे बृह्स्पितिः। यजमानमेव तेजंसा समर्थयित॥८॥

आदित्यां मुल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मा्रुतीं पृश्ञिं

पष्टौहीम्। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मारुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरादित्याया आश्रावयति। उपार्शु मारुत्यै। तस्मौद्राष्ट्रं विशमतिंवदति। गर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अगुर्भा मांरुती। विश्वे मुरुतः। विश्वंमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सृत्य संत्रिधायं। अनृतेनासुरानभ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाश्ं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वै ते वाचः सत्यमवारुन्धत॥१०॥

यद्श्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपंति। अनृतिनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः सत्यमवं रुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचं चरुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। स्वित्रे सत्यप्रंसवाय पुरोडाशं द्वादंशकपालं प्रसूत्ये। दूतान्प्रहिंणोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति। अथों दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्वश् शुंष्कदृतिदक्षिंणा समृंद्धे॥११॥ अर्ध्यति भ्वत्युरुन्धत् गुम्यन्ति द्वे चं॥————[३]

आग्नेयम्ष्टाकंपालं निर्वंपति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्चो यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्माद्धस्नन्तं व्यंवसायांदयन्ति। सावित्रं द्वादंशकपालम्। तस्मात्पुरस्ताद्यवांनाः सवित्रा विरुन्धते। बार्ह्स्पत्यं चुरुम्। सवित्रेव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्तरं द्वादंशकपालम्। तस्मां ज्ञघुन्यं नैदांघे प्रत्यश्चंः कुरुपश्चाला याँन्ति। सारुस्वतं चरुं निर्वपति। तस्मां त्प्रावृष्टि सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन् व्यवंस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन् विधृंता आसते। क्षेत्रपत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँ स्येतानि ह्वी १ षि निरुप्याणीत्यांहः।
तेनैवर्तून्प्रयुंङ्कः इति। अथो खल्वांहः। कः संवथ्सरं
जीविष्यतीति। षडेव पूर्वेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः।
तेनैवर्तून्प्रयुंङ्कः। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तरं
उत्तरेषाम्। संवथ्सरस्यैवान्तौ युनिक्तः। सुवर्गस्यं लोकस्य
सम्ष्रि॥१४॥

त्वाष्ट्रम्ष्टाकंपालं दधते युन्त्रधेकं च॥———[४] इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दशधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स

इन्द्रस्य सुषुवाणस्य दश्धान्द्र्य वाय पराऽपतत्। स यत्प्रथमं निरष्ठीवत्। तत्केलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदेरम्। यत्तृतीयम्। तत्कर्कन्धुं। यन्नस्तः। स सि॰हः। यदक्ष्योः॥१५॥

स शाँदूलः। यत्कर्णयोः। स वृकंः। य ऊर्धः। स सोमंः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुद्धौ। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावं रुन्धे। त्रयो ग्रहाँः। वीर्यमेवावं रुन्धे। नाम्नां दश्मी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणा इन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेविन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्धेत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पाणि क्रीणाति। न वा पृतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥

यथ्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुराँ। यथ्सौत्रामणी समृंद्धौ। स्वाद्वीन्त्वा स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनां करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्यां पच्यस्व सरंस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवताभ्यः पच्यंते। तिस्रः स॰सृष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीं क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते

परिस्नुत्मिति यजुंषा पुनाति व्यावृंत्यै। प्वित्रंण पुनाति। प्वित्रंण हि सोमं पुनन्ति। वारंण शश्वंता तनेत्यांह। वारंण हि सोमं पुनन्ति। वायुः पूतः प्वित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिप्वितस्यैतयां पुनीयात्। कुविद्क्षेत्यनिरुक्तया प्राजाप्त्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ व देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। सार्स्वतं मेषम्। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवेनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भ र सैन्द्रत्वायं॥२०॥

अक्ष्योर्लोमांनि हिरंण्यं वसति गृह्णाति भिषज्यत्येकं च॥————[५]

यित्रुषु यूपेष्वालभेत। बहिर्धाऽस्मांदिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एक्यूप आलंभते। एक्धेवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। नैतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशा ह्यंते। युवश् सुरामंमिश्वनेतिं सर्वदेवत्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। वृत्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्यै समृद्धम्। नानादेवत्याः पृशवंश्च पुरोडाशांश्च भवन्ति समृद्धौ। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये प्वास्मैं स्मीचीं दधाति। पुरस्तांदन्याजानीं पुरोडाशैः प्रचरित। पृशवो वै पुरोडाशौः। पृश्नेवावं रुन्धे। ऐन्द्रमेकांदशकपालुं निर्वपिति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालुं प्रसूत्ये। वारुणं दशंकपालम्। अन्तत एव वरुण्मवं यजते। वर्डबा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्थं सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यथ्सौँत्रामणी समृद्धे। बार्ह्स्पृत्यं पृशुं चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैव यज्ञस्य व्यृंद्धमिपं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुभंविति। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्तिं। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णाया 🕹 समवंनयति॥२४॥

श्रातायुः पुरुषः श्रातेन्द्रियः। आयुष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दक्षिणेऽग्रौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्त्रा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। श्रातमानं भवति। श्रातायुः पुरुषः श्रातेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। यत्रैव श्रातातृण्णां धारयंति॥२५॥

तन्निदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। य सोमों ऽति पवंते। पितृणां याँ ज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छंति। तदेवावं रुन्धे। तिस्भिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युरहोतां ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मैं भेषजं करोति॥२६॥

प्रीणाति प्रथमो दक्षिणा समवनयति धारयंतीन्द्रियाणि चत्वारि च॥———[६]

अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अग्निष्टोमः। यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा ऋमते। अथैषोंऽभिषेचनीयंश्चतु-स्त्रिष्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्शुद्वे देवताः। ता एवाऽऽप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्टशः। तमेवाऽऽप्नोति। सुरुशुर एष स्तोमानामयंथापूर्वम्। यद्विषंमाः स्तोमाः॥२७॥

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भंवति। वाग्वै वायुः। वाच पुवैषोऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजानाः सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतमु त्यन्दश् क्षिप् इत्यांह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्या अक्रन्॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अग्निय इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुंष्टुभो राज्ञन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भवति। सुवर्गस्यं

लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपनमित। यः सामभ्य एतिं। पापीयान्थ्सुषुवाणो भविति। एतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैर्व स्वान्नैतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैर्मुष्मिंश्लोक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैर्स्मिंश्लोक ऋंध्रोति। उभयोर्व लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकविश्शोंऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भवति। एकविश्शः केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तद्शो दंशपेयः॥३२॥

विड्वा एंकविष्शः। राष्ट्र संप्तद्शः। विश्रं एवैतन्मध्यतोंऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विश्रां प्रियः। विश्रो हि
मध्यतोंऽभिषिच्यतें। यद्वा एंनम्दो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति।
तथ्सुंवर्गं लोकम्भ्या रोहति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहैंत्।
अतिज्ञनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो
भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवरोहति। अथों अस्मिन्नेव
लोके प्रति तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥

अर्क्षत्राज्ञन्यों भवन्ति दश्पेयों माद्येत्रीणि च॥————[८]

इयं वै रंज्ता। असौ हरिणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवेनमभ्यतः परिं गृह्णाति। वर्रुणस्य वा अंभिष्च्यमांन्स्यापंः। इन्द्रियं वीर्यं निरंघ्नन्। तथ्सुवर्ण्ष्ट्रं हिरंण्यमभवत्। यद्रुक्ममंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानिर्घाताय। शतमांनो भवति शतक्षरः। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वे हिरंण्यम्। तेज्रस्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां एवैनंमभ्यतिं क्षरन्ति॥३४॥

श्तक्षंरोऽष्टो चं॥——[९]

अप्रीतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो राजसूर्येन यजंत इति। यदा वा एष एतेन द्विरात्रेण यजंते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवथ्सरमाप्नोति। यावंन्ति संवथ्सरस्यांहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंभवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥

नानैवाहोरात्रयोः प्रतिं तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंर्भवति। व्यष्टकायामुत्तंरम्। नानैवार्धमासयोः प्रतिं तिष्ठति। अमावास्यायां पूर्वमहंर्भवति। उद्दृष्ट उत्तंरम्। नानैव मासंयोः प्रतिं तिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपृक्षे पुंण्याहे स्याताम्। तयोः कार्यं प्रतिष्ठित्यै॥३६॥

अपृश्व्यो द्विरात्र इत्यांहुः। द्वे ह्यंते छन्दंसी।
गायत्रं च त्रेष्टुंभं च। जगंतीमन्तर्यन्ति। न तेन जगंती
कृतत्यांहुः। यदेनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीतिं। यदा वा
पृषाऽहीनस्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सर्वनम्। अथैव जगंती
कृता। अथं पश्व्यः। व्युंष्टिर्वा एष द्विरात्रः। य एवं
विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्येवास्मां उच्छति। अथो तमं पृवापं
हते। अग्निष्टोममंन्तृत आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः।
देवतांस्वेव प्रति तिष्ठति॥३७॥

उत्तरं प्रतिष्ठित्यै पश्वयः सप्त चं॥———[१०]

वर्रुणस्य जामि वा ईंश्वर आँग्नेयमिन्द्रंस्य यत्रिष्वंग्निष्टोममुपं त्वेयं वै रंजुताऽप्रंतिष्ठितो

दर्श॥१०॥

वर्रणस्य यदिश्विभ्यां यित्रषु तस्मादुद्वंतीः सप्तित्रिरंशत्॥३७॥

वरुंणस्य प्रतिं तिष्ठति॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृष्टिनंधर्मधुगांसीत्। सर्जीषेणांजीवत्। तेंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंऽस्या ओषंधीर्न जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासां ज्रम्बा रुप्यन्त्येत्। तें ऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रिति। वयं भागधेयंमिच्छमाना इति पितरों ऽब्रुवन्। किं वो भागधेयमिति। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वित्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भागधेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टि। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृथ्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांप्येतिं। सोंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चराणीतिं। तस्मांद्वथ्यं जातं दश रात्रीर्न दुहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चरित। वारेवृत्ड् ह्यंस्य। तस्मौद्धथ्स॰ स॰सृष्टध्य॰ रुद्रो घातुंकः। अति हि सुन्धान्धयंति॥३॥

अलिम्पन्वेद् घातुंक एकं चा------[१]
प्रजापंतिरग्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग

उपाँस्त। सोँऽस्य प्रजाभिरपाँकामत्। तमंव्रुरुंथ्समानो-ऽन्वैत्। तमंव्रुधं नाशंक्रोत्। स तपोऽतप्यत। सोँऽग्निरुपांरम्तातांपि वै स्य प्रजापंतिरितिं। स रराटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्येष्ठलक्ष्मी प्रांजापत्येत्यांहुः। यद्रराटांदुदमृष्ट। तस्मांद्रराट्रे केशा न संन्ति। तद्ग्री प्रागृंह्णात्। तद्यंचिकिथ्मत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तद्विंचिकिथ्सायै जन्मं। य एवं विद्वान् विंचिकिथ्संति॥५॥

वसीय एव चेतयते। तं वाग्भ्यंवदज्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोथ्स्वाहेतिं। तथ्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एव इस्वांहाकारस्य जन्म वेदं। क्रोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥ भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहंत्यै पुरुंषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामंसृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पृश्रृममंजुहोत्। सोऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिर्वे मांऽऽप्नोतीति। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायस्वेति। सौंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इति। तुभ्यंमेवेद हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स एतद्भांगुधेयंमुभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥ तस्मांदग्निहोत्रमुंच्यते। तद्धूयमांनमादित्यौंऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतदिति। सौंऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्यन्तीति। सायमेव तुभ्यं जुहवन्। प्रातमह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मांदग्नयं साय हूंयते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आ्रमेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्ये प्रातर्जुहुयात्। उभयमेवाग्नेय स्यात्। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। तथाऽग्नये साय हूंयते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अह्य प्रतिं तिष्ठन्ति। यथ्सायं जुहोतिं॥१०॥ प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्यं प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति। स एतदिग्निहोत्रं मिंथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो व स प्राजायत। यस्यैवं विदुष् उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेति। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौं गृहे वसंतः। यस्तयोंर्न्यश् राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृंच्छ्तीतिं। अग्निं वावा-ऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्दूरान्नक्तं दहशे। उभे हि तेर्जसी सम्पद्येते॥१२॥

उद्यन्तं वावाऽऽदित्यम्ग्निरन् स्मारोहित। तस्मौद्धूम प्वाग्नेर्दिवां दहशे। यद्ग्नयें सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यथ्सूर्याय प्रातर्जुहुयात्। आऽग्नयें वृश्चेत। देवतांभ्यः स्मदं दध्यात्। अग्निज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्येव सायश् होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योतिर्ग्निः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्यार् सायश् हूंयते॥१३॥ उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निर्ज्योति-रित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिरिग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमृत्तंरामाहंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्ये। यद्दिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्रंताय शून्यायांवस्थायांहार्यर् हरंन्ति। ताहगेव तत्। क्वाऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यथ्म न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौष्मं पंरिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥

अमृष्टु विचिकिथ्संति जुह्वंत्यजामंस्रजताग्निहोत्र॰ सूर्याय प्रातर्जुहोति जुह्वंति सम्पद्यंते हूयते स्थापयति सम्प्रति द्वे चं॥————[२]

रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। पर्नी स्थाली। यन्मध्ये-ऽग्नेरिधेश्रयेत्। रुद्राय पत्नीमपि दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽङ्गारान्निरूह्याधि श्रयति। पत्नियै गोपीथाये। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥ घुर्मो वा एषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पशुकांमस्य। शान्तिमेव हि पंश्वयम्। न प्रति-षिश्चेद्वह्मवर्च्सकांमस्य। समिद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चति॥१७॥

तत्पंश्वयम्। यञ्जुहोति। तद्वंह्मवर्चसि। उभयंमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतं देवलोकम्। यच्छृतः हिवरनंभिघारितम्। अभि द्यांतयित। अभ्येवैनंद्घारयित। अथो देवत्रैवैनंद्घारयित। अथो देवत्रैवैनंद्मयित॥१८॥

पर्यमि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यमि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्वासयेंत्। यजमान शुचाऽपंयेत्। यद्दंक्षिणा। पितृदेवत्य स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी र्रं शुचाऽपंयेत्। उदीचीन्मुद्वांसयित। एषा वै देवमनुष्याणारं शान्ता दिक्। तामेवैन्दनूद्वांसयित शान्त्यै। वर्त्मं करोति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। निष्टंपित। उपैव तथ्स्तृंणाित। चतुरुन्नंयित। चतुंष्पादः पृशवंः॥२०॥

पुशूनेवावं रुन्धे। सर्वांन्पूर्णानुन्नयित। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः।

अनूच् उन्नंयति। प्रजायां अनूचीनृत्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजा-ऽर्धुंका भवति। सम्मृंशति व्यावृंत्त्यै। नाहोंष्यनुपं सादयेत्। यदहोंष्यनुपसादयेंत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मै वृश्चेत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स एता स्मिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयो-ऽधियन्त॥२२॥

यदेन १ समयंच्छत्। तथ्समिधंः सिम्त्वम्। सिमध्मा दंधाति। समेवैनं यच्छति। आहुंतीनां धृत्यैं। अथों अग्निहोत्रमेवेध्मवंत्करोति। आहुंतीनां प्रतिष्ठित्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका १ सिमधंमाधाय द्वे आहुंती जुहोतिं। अथं कस्या १ सिमिधं द्वितीयामाहुंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्ध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्वंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। आदींप्तायां जुहोति। समिद्धमिव हि ब्रंह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेष्टि। ताृहगेव तत्। चृतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। तस्माँद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौँ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति॥२४॥

भुवृति प्रतिषिञ्चति गमयति प्रत्यक्पशवं उपनिधायाँप्रियुन्तेति तच्चत्वारि च॥——[3]

उत्तरावंतीं वै देवा आहंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थ्स्यादिति। कनीयस्तस्य पूर्व हुत्वा। उत्तरं भूयो जुहुयात्। एषा वा उत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अजुहवुः। तत्नस्तेऽभवन्॥२५॥

यस्यैवं जुह्नंति। भवंत्येव। यं कामयेत पापीयान्थस्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्व हुत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्तस्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्नंति। परैव भवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतीक्षते। अनंनुध्यायिनमेवैनं करोति। अग्निहोत्रस्य वै स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति।

यज्ञस्थाणुमेव परि वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवाह्वाऽतिं क्रामित। अवाचीन र्सायमुपंमार्ष्टि। रेतं एव तद्दंधाित। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयित॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ के द्वे आहुंती भवत इतिं। अग्नौ वैश्वान्र इतिं ब्रूयात्। एष वा अग्निवैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोतिं। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्र्यात्। यद्यजुंषा जुहोतिं। तदैन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापत्यम्॥३०॥

यन्निमार्ष्टि। तदोषंधीनाम्। यद्वितीयम्। तत्पंतृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भाणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुस्यैं। निष्टंपति स्वगाकृत्ये। उद्दिंशति। सप्तर्षीनेव प्रींणाति। दक्षिणा पूर्यावंतित। स्वमेव वीर्यमनुं पूर्यावंतित। तस्माद्दक्षिणोऽर्धं आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मनुं पूर्यावंतित। हत्वोप समिन्धे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य सिमंद्धै। न ब्र्हिरनु प्र हंरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदंग्निहोत्रम्। यदंनु प्रहरेंत्। यज्ञं विच्छिंन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहृत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अवभृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥

अभवन्भवृति जुहुयान्नयिति मार्ष्टि द्विः प्राश्नांति प्राजापृत्यमाचांमतीन्थेऽकः॥———[४]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा यज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वृथ्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सदः। अन्तरिक्षमाग्नीं द्वम्। द्योर्हं विर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो ब्रहः॥३४॥

वन्स्पतंय इध्मः। दिशः परिधर्यः। आदित्यो यूपः। यजमानः पृशुः। समुद्रोऽवभृथः। संवथ्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बहिष्यं दत्तं भेवति। यथ्मायं जुहोति। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥ अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावंन्तो वै देवा अहंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदंग्निहोत्र र सर्वस्येव समवदायां जुहवुः। तस्मांदाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृंतिमपश्यन्नितिं। यथ्सायं जुहोतिं। रात्रिंया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्धुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिंमिंथुनैर्जायते॥३७॥

ड्मामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा नंयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेज्रस्व्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वे पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्मैं पृशूनवं रुन्थे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। दुध्नेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्येव भंवति। युवाग्वां ग्रामंकामस्यौष्धा वै मंनुष्याः। भागुधेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भंवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चतुरुन्नंयित। चतुरक्षर रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरित। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्यक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तथ्सामन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योपसदो वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तरिक्षमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योपसदं:॥४१॥

य एवं वेदं। उपैंनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्कारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वंषद्कारः॥४२॥

य एवं वेदं। तस्य त्वंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्र्यावांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमागंच्छन्ति। तान् यन्न

त्प्येत्। प्रजयांऽस्य पृशुभिविं तिष्ठेरन्। यत्त्प्येत्। तृप्ता एनं प्रजयां पृशुभिंस्तप्येयुः। स्जूर्देवैः सायं यावंभिरितिं सायश्सम्मृंशति। स्जूर्देवैः प्रातर्यावंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावांनो ये चं प्रातर्यावांणः॥४३॥

तानेवोभयाईस्तर्पयित। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृशुभिस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाहर सायं प्रांत्वं अातृंव्येभ्यः प्र हंरािम। तस्मान्मत्पापीयारसो आतृंव्या इति। चतुरुन्नंयित। द्विर्जुहोति। स्मिथ्संप्तमी। स्प्तपंदा शक्वंरी। शाक्वरो वर्ज्ञः। अग्निहोत्र एव तथ्सायं प्रांत्वं यंजमानो आतृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मना। परांऽस्य आतृंव्यो भवति॥४४॥

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वन्मं जायेतेतिं। सोऽजुहोत्। तस्याँऽऽत्मन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेँऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहौषीदात्मन्वन्मं जायेतेतिं। तस्यं व्यमंजनिष्महि। जायंतान्न आत्मन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानांमग्निः। तनुवैं वायुः॥४५॥ चक्षुंष आदित्यः। तेषा हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्नमायन्। स आदित्यौंऽग्निमंब्रवीत्। यत्रो नौ जयात्। तन्नौं सहासदितिं। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानांमहिमत्यग्निः॥४६॥

त्नुवां अहमितिं वायः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अग्निहोत्रम्। य एवं वेद गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्नि समर्धयति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मिति। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्यंद्रवान्। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्रूताम्। तस्माद्यद्गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयं-म्भ्यंद्रवंति। वायुमेव तेनं प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतांनां प्रथममंसृजत। सौंऽन्यदां-लुम्भ्यंमवित्वा॥४८॥

प्रजापंतिम्भि पूर्यावंर्तत। स मृत्योरंबिभेत्।

सोऽमुमादित्यमात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा पराँङ्घर्यावंतित। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जंयति। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उतैकाहमुत द्यहं न जुह्वंति। हुतमेवास्यं भवति। असौ ह्यांदित्योंऽग्निहोत्रम्॥४९॥ व्युर्गिर्भवत्यवित्वा भवत्येकं च॥——[६]

रौद्रं गिवं। वायव्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमांनम्। सौम्यं दुग्धम्। वारुणमिधं श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। सारुस्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र॰ शरंः। धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। स्वितुः प्र क्रांन्तम्। द्यावापृथिव्य हियमाणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वा-ऽऽह्तंतिः। प्रजापंतेरुत्तंरा। ऐन्द्र॰ हुतम्॥५०॥

उद्वांसित॰ सप्त चं॥———[७]

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मृनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वौ दुह्याञ्चेष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्य। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्य। यो वा बुभूषेत्॥५१॥ न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा एतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुद्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्यम्ण उद्वास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंन्नीयमानम्। बृह्स्पतेरुन्नीतम्। स्वितुः प्रक्रौन्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्॥५२॥

ऐन्द्राग्नम्पं सादितम्। सर्वांभ्यो वा एष देवतांभ्यो जुहोति। यांऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वै धेनुं तीर्थे तर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। प्र सुंवर्गं लोकं जांनाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्ं। प्र प्रजयां पृशुभिंमिथुनैर्जायते। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्नंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

बुभूषेद्ध्रियमाणञ्जायते द्वे चं॥————[८]

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषां त्रिरेकोंऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकः। स्कृदेकः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्। यो द्विः। स यजुंषा। यः स्कृत्। स तूष्णीम्॥५४॥

यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावाँर्भुताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वां होत्व्याँ। तूष्णीमुत्तंरा। उभे एवधी अवं रुन्धे। अग्निज्यीतिज्यीतिरग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयति। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जांयते॥५५॥

यस्यौग्निहोत्रमहुंत्र सूर्योऽभ्युंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय् प्राङ्कदाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिर्मितोरासीत। स यदा ताम्यौत्। अथ भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवैनं तत् उन्नंयति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥५६॥

त्र्णां जांयते यर्जमानः॥———[१]
यदग्निमुद्धरंति। वसंवस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे
जुह्वंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। निहिंतो
धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति।
रुद्रेष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति। प्रथममिध्ममर्चिरा लेभते।
आदित्यास्तर्द्धाग्निः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्रश् हुतं भवति। सर्वं एव संवृंश इध्म आदींग्रो भवति। विश्वं देवास्तर्ह्याग्नेः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। विश्वेष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्रश्हुतं भवति। नित्रामुर्चिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्ह्याग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रं पुवास्यांग्निहोत्र हुतं भवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदेति। प्रजा-पंतिस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। ब्रह्मन्नेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। वस्षु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वेषु देवेषुं। इन्द्रे प्रजापंतौ ब्रह्मन्। अपरिवर्गमेवास्यैतास्ं देवतांसु हुतं भवति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्नंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

आदित्यास्तर्ह्याग्निरिन्द्रं एवास्याँग्निहोत्र हुतं भविति देवेषुं चत्वारिं च (यद्ग्निन्निहिंतः प्रथम सर्वं एव निंतुरामङ्गाराः शरोऽङ्गारा ब्रह्म वसुंष्वष्टौ॥)॥————[१०]

ऋतं त्वां स्त्येन परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। स्त्यं त्वर्तेन परिषिश्चामीतिं प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावांदित्यः स्त्यम्। अग्निमेव तदांदित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनां-ऽऽदित्यं प्रातः सः। यावंदहोरात्रे भवंतः। तावंदस्य लोकस्यं। नार्तिर्न रिष्टिः। नान्तो न पंर्यन्तौऽस्ति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं

जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अस्ति द्वे चं॥———[११]

अङ्गिरसः प्रजापंतिर्ग्निः रुद्र उत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रांयणा युज्ञाः प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मृन्वद्रौद्रङ्गविं दक्षिणतस्त्रयो वे यद्ग्निमृतं त्वां सृत्येनैकांदश॥११॥ अङ्गिरसः प्रैव तेनं पृश्नेव यन्निमार्ष्ट् यो वा अग्निहोत्रस्योपसदीं दक्षिणतः षृष्टिः॥६०॥ अङ्गिरसो य उंचेनदेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ द्वितीयः प्रश्नः॥

॥तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येति। स पृतं दर्शहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टा अपाँक्रामन्। ता ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रहुत्वम्। यः कामयेत् प्रजांयेयेति। स दर्शहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंतिवै दर्शहोता॥१॥

प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। मनंसा जुहोति। मनं इव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यैं। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेराप्त्यैं। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनािद्ध प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना सृष्ट्यैं॥२॥

दर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वै योनैंः प्रजापंतिः प्रजा अस्जत। यस्मादेव योनैंः प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। तस्मादेव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दंक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहों भवति। प्रजाना स् सृष्टानां धृत्यै। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वा स्सं यशो नर्च्छत्॥३॥ सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्यं। ब्राह्मणं दक्षिण्तो निषाद्यं। चतुंर्होतॄन्व्याचंक्षीत। पृतद्वै देवानां पर्मं गुह्यं ब्रह्मं। यचतुंर्होतारः। तदेव प्रंकाशं गंमयति। तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्भथ्य व्याचंष्टे॥४॥

अग्निवान् वै दर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचेष्टे। ब्राह्मणो देक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशे ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मे देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधांनो दशंहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजांतमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्भुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजांतमेवैनं ज्ञुहोति। ह्विर्निर्वपस्यं दशंहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजांतमेवैनं निर्वपति। सामिधेनीरंनुवक्ष्यं दशंहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथों युज्ञो वै दशंहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दशमी। सप्राणमेवेनमभि चरति। एतावद्वै पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चंरति। स्वकृत् इरिणे जुहोति प्रद्रे वाँ। एतद्वा अस्यै निर्ऋंतिगृहीतम्। निर्ऋंतिगृहीत एवेनं निर्ऋंत्या ग्राहयति। यद्वाचः कूरम्। तेन वषंद्वरोति। वाच एवेनं कूरेण् प्र वृंश्चति। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥

दर्शहोता सृष्ट्यां ऋच्छेद्धाचंप्टे रुन्ध पुव तंनुते निर्ऋतिगृहीतं पश्चं च॥———[१]

प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंज्येतिं। स एतं चतुर्होतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेऽजुहोत्। ततो वे स दंर्शपूर्णमासावंसृजतः। तावंस्माथ्सृष्टावपां-कामताम्। तौ ग्रहेंणागृह्णात्। तद्वहंस्य ग्रहृत्वम्। दर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुरहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-हवनीये जुहुयात्। दर्शपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥

ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयोः सृष्टयोर्धृत्यै। सोऽकामयत चातुर्मास्यानि सृजेयेति। स एतं पश्चेहोतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्याऽऽहवनीयेऽजुहोत्। ततो वै स चातुर्मास्यान्यंसृजत। तान्यंस्माथ्सृष्टान्यपाकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥ पश्चंहोतार्ं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयें जुहुयात्। चातुर्मा्स्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मा्स्यानार्थ सृष्टानां धृत्यैं। सोऽकामयत पशुब्न्धश् सृंजेयेतिं। स पृतश् षङ्कोतारमपश्यत्। तं मनंसा-ऽनुद्रुत्यांऽऽहव्नीयेऽजुहोत्। ततो वै स पंशुब्न्धमंसृजत। सोस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्॥१०॥

तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्थेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कांतारं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। पृशुब्न्थमेव सृष्ट्वा-ऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। पृशुब्न्थस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोंऽकामयत सौम्यमंध्वर स्रुंजेयेतिं। स एत स्महोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो व स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥

सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमाणः। सप्तहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-ऽऽहवनीये जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वर स्षृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याँध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवेभ्यो वै युज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावृच्छः समंभरन्॥१२॥ यथ्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों युज्ञः प्राभंवत्। यथ्संम्भारा भवंन्ति। युज्ञस्य प्रभूत्ये। आतिथ्यमासाद्य व्याचंष्टे। युज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव युज्ञ र सम्भृत्य प्र तंनुते। अयज्ञो वा एषः। योऽप्रक्रीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्रीर्व्याचंष्टे। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। उपसथ्सु व्याचंष्टे। पृतद्वै पत्रीनामायतंनम्। स्व एवेनां आयत्नेऽवंकल्पयति॥१३॥ वृत्तु आल्भंमानोऽग्रह्णदस्जनाभरआयेर्न्थ्यदं॥——[२]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेतिं। स तपोऽतप्यत। स त्रिवृत् इ स्तोमंमसृजत। तं पंश्चद्शः स्तोमों मध्यत उदंतृणत्। तौ पूर्वपृक्षश्चांपरपृक्षश्चांभवताम्। पूर्वपृक्षं देवा अन्वसृंज्यन्त। अपरपक्षमन्वसुंराः। ततो देवा अभवन्।

पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थ्स्यादितिं॥१४॥ तं पूर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भवति। यं कामयेत् पापीयान्थ्स्यादितिं। तमंपरपक्षे यांजयेत्। पापीयानेव

पापीयान्थस्यादिति। तमंपरपृक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भंवति। तस्मौत्पूर्वपृक्षोऽपरपृक्षात्कंरुण्यंतरः। प्रजापंतिर्वै दशंहोता। चतुंर्होता पश्चंहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवेः संवथ्सरः॥१५॥

प्रजाः पुशर्व इमे लोकाः। य एवं प्रजापितिं बहोर्भूया ५सं

वेदं। बुहोरेव भूयाँन्भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स

इन्द्रमपि नासृजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जनयेतिं।

सौंऽब्रवीत्। यथाऽहं युष्माङ्स्तपसाऽसृक्षि। एविमन्द्रं

जनयध्वमितिं॥१६॥ ते तपोऽतप्यन्त। त आत्मन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सोंंऽब्रवीत्। किं भांगधेयंमभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्थ्संवथ्सरम्। प्रजाः पुशून्। इमाँ श्लोकानित्यं ब्रुवन्। तं वै माऽऽहुंत्या प्र जनयतेत्यंब्रवीत्॥१७॥

तं चतुर्होत्रा प्राजनयन्। यः कामयेत वीरो म आजांयेतेतिं। स चतुंर्होतारं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजांयते। जजनदिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहेति ग्रहेंण जुहोति। आऽस्यं वीरो जांयते। वीर॰ हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। वयं पूर्वे सुवर्गं लोकिमेयाम वयं पूर्व इति॥१८॥

त आंदित्या एतं पश्चेहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्रीं ध्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवर्गं प्रांतरनुवाकादाग्रींध्रे जुहुयात्। संवथ्सरो वै पश्चंहोता। संवथ्सरः सुंवर्गो लोकः। संवथ्सर एवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुवर्गं लोकमेति। तेंऽब्रुवन्निङ्गिरस आदित्यान्॥१९॥ क्रं स्थ। क्रं वः सुद्धो हृव्यं वेक्ष्याम् इतिं। छन्दः स्वित्यंब्रुवन्। गायत्रियां त्रिष्टुभि जगंत्यामितिं। तस्माच्छन्दः

लोकमायन्। यः सुवर्गकामः स्यात्। स पश्चेहोतारं पुरा

स्वित्यंब्रुवन्। गायित्रियां त्रिष्टुभि जगत्यामितिं। तस्माच्छन्देः सु सद्ध आदित्येभ्यः। आङ्गीर्सीः प्रजा ह्व्यं वहन्ति। वहन्त्यस्मै प्रजा बिलम्। ऐनमप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। द्वादंश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एंकवि १ शः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेत १ श्रितं प्रतिष्ठितं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥२०॥ स्यादिति संवथ्सरे जनयध्वमितीत्यंब्रवीत्पृवं इत्यांदित्यानृतवः पदं॥———[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेयेति। स एतं दशंहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानं विधायं। दशंहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः स्रुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। एतावान्

यज्ञऋतुः। स चतुंर्होतारमसृजत। सोंऽनन्दत्॥२१॥ असृंक्षि वा इममितिं। तस्य सोमों ह्विरासींत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंमसृजत। अग्निहोत्रं देर्शपूर्णमासौ यजूरेषि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥ सोंऽन्तिरंक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामांनि। स तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुव्रिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वै लोकानन् प्रजाः प्रश्वृष्ठन्दार्रसे प्राजांयन्त। य एवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहंतीः प्रजांता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां प्शिभिर्मिथुनैर्जायते। स पश्चंहोतारमसृजतः। स हिवर्गविन्दतः। तस्मै सोमंस्तुनुवं प्रायंच्छत्। एततें हिवरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यतः। सोऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधतः। सोऽसुंरानसृजतः। तद्स्याप्रियमासीत्॥२४॥ तद्दुर्वर्ण् हिरंण्यमभवत्। तद्दुर्वर्ण्स्य हिरंण्यस्य जन्मं। स द्वितीयंमतप्यतः। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधतः। स देवानंसृजतः। तदंस्य प्रियमांसीत्। तथ्सुवर्ण्क् हिरंण्यमभवत्। तथ्सुवर्ण्क् हिरंण्यस्य जन्मं। य एवक् सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं। य एवक् सुवर्णस्य हिरंण्यस्य जन्मं वदं॥२५॥

सुवर्ण आत्मनां भवति। दुर्वर्णोऽस्य भ्रातृंव्यः। तस्मांथ्सुवर्ण् हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रियम्। स सप्तहोतारमसृजत। स सप्तहोत्रैव सुंवर्गं लोकमैत्। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्यो-ऽसुंरान्प्राणुंदत। त्र्यस्त्रिष्शेन प्रत्यंतिष्ठत्। एकविष्शेन रुचंमधत्त॥२६॥

स्प्तद्दशेन प्राजांयत। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। स्प्तहोत्रेव सुंवर्गं लोकमेति। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्रयुद्धिर्शेन प्रति तिष्ठति। एकविर्शेन रुचं धत्ते। स्प्तद्शेन प्र जांयते। तस्माध्सप्तद्शः स्तोमो न निर्हृत्यः। प्रजापंतिवै संप्तद्शः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धंते प्रजात्यै॥२७॥

अनुन्दद्भव इति व्याहंर्द्धेदांसी्द्धेदांधत्त प्रजांत्यै॥———[४]

देवा वै वर्रणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै दक्षिणामनयत्। तामंब्रीनात्। तेंंऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिंगृह्णाम। तथां नो दक्षिणा न ब्रेंच्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाब्रीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिंणा ब्रीनाति॥२८॥

राजां त्वा वर्रणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्रये हिरंण्यमित्यांह। आग्नेयं वै हिरंण्यम्। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। सोमाय वास् इत्यांह। सौम्यं वै वासंः। स्वयैवैनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयैवैनां देवतंया प्रति-गृह्णाति। वर्रणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अश्वंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिंगृह्णाति। प्रजापंतये पुरुषमित्यांह। प्राजापत्यो वै पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रति गृह्णाति। मनवे तत्पमित्यांह। मानवो वै तत्पः। स्वयैवैनं देवतंया प्रति गृह्णाति। उत्तानायांङ्गीरसायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आंङ्गीरसः॥३०॥

अनयैवैन्त्प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्यर्चा रथं प्रतिं गृह्णाति। वैश्वान्रो वै देवतंया रथंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। तेनांमृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतंमेवाऽऽत्मन्यंत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं पृवैनं कृत्वा। सुव्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यद्वे शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं पुवैषा परींतिः। क इदं

कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेंन हि ददांति। कामेंन प्रतिगृह्णातिं। कामों दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम र समुद्रमाविशेत्यांह। समुद्र इंव हि कामः। नेव हि कामस्यान्तोऽस्ति। न संमुद्रस्यं। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामीत्यांह। येन कामेन प्रतिगृह्णाति। स एवैनम्मुष्मिं श्लोके काम आगंच्छति। कामैतत्तं एषा ते काम दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानो-ऽमुष्मिं श्लोके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतिरे। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रति गृह्णाति॥३३॥ श्लीन्य्यंहाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवैनां प्रति गृह्णाति॥३३॥ श्लीन्य्यंहाङ्गीर्सः प्रतिग्रहीत्र इत्यांह प्रतिग्रहीत्यांह दक्षिणेत्यांह च्लारि चा—[५]

अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। दुश्मे-ऽहंन्थ्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्थते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्योऽन्नाद्यमवं रुन्थते। पृश्चिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्चि॥३४॥

अन्नमेवावं रुन्धते। मनसा प्रस्तौति। मनसोद्गायित।

मनंसा प्रतिं हरित। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। देवा वे सूर्पाः। तेषांमियः राज्ञी। यथ्संपराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचंष्टे। स्तुतमनुंशश्सित् शान्त्यैं। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानां पर्मं गृह्यं ब्रह्मं। यचतुंरहोतारः। दश्मेऽह्ध्श्चतुंर्-होतृन्व्याचंष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। प्रमं देवानां गृह्यं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रकाशं गंमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयित। वार्चं यच्छिति। यज्ञस्य धृत्यें। यज्ञमानदेवत्यं वा अहंः। भ्रातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भ्रातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यिद्ववा वार्चं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १ षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भ्रातृंव्यायोच्छि १ षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वाचं विसृंजिति। पृतावंन्तमेवास्में लोकमुच्छि १ षिति। यावंदादित्यों-ऽस्तुमेतिं॥३७॥

पृश्चिं तिष्ठन्ति गमयति शि॰षेत्पश्चं च॥————[६]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वै प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वै प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयेते॥३८॥

मित्रमेव भेवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमपि नासृजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रंं नो जन्येतिं। स आत्मन्निन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तं त्रिष्टुग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्रशो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यासुरान्भ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंव्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुवर्गं लोकमांयन्। तेंऽमुष्मिं लोके व्यंक्षुध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेति। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्प्येतिं॥४०॥

तस्य वा इयं क्रृप्तिः। यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु युज्ञः सुप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यो हुव्यं वहिति। य एवं वेदं। उपैनं युज्ञो नंमिति। सोंऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं कंमिष्यन्त इतिं। स वार्चस्पते हृदिति व्याहेरत्। तस्मात्पुत्रो हृदंयम्। तस्मादस्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कामयन्ते। पुत्रो हि हृदंयम्॥४१॥

ह्यंते अभवत्कल्प्येतीति च्त्वारि च। देवा वै चतुंरहोतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भ्रातृं व्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वा ॥ श्रुतंरहोतृभिर्य्ज्ञं तंनुते। वि पाप्मना भ्रातृं व्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मे वै लोकाय षड्ढोंता। घ्रन्ति खलु वा एतथ्सोमम्। यदंभिषुण्वन्ति॥ ४२॥

ऋजुधैवैनममुं लोकं गंमयति। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो वै चतुंर्होता। यशं पुवाऽऽत्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पशुमुपंसादयति। सुव्ग्यों वै पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। ग्रहान्गृहीत्वा सप्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वे सप्तहोता॥४३॥

इन्द्रियमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतॄननुसव्नं

त्पर्यति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नेमित। बृहिष्पुवृमाने दशहोतारं व्याचंक्षीत। मार्ध्यं दिने पर्वमाने चतुरहोतारम्। आर्भवे पर्वमाने पश्चहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कोतारम्। यज्ञायज्ञियंस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्। अनुस्वनमेवेना इंस्तर्पयिति॥ ४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नमित। देवा वै चतुंर्होतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रस्तथ्सहास्दितिं। सोम्श्चतुंर्होत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षड्ढोंत्रा॥४५॥

इन्द्रेः सप्तहोत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषा स् सोम् स् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापांकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रेषेः प्रेषंमैच्छन्। तत्प्रेषाणां प्रेषत्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तन्निविद्यांनित्रवित्त्वम्॥४६॥

आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वेव गृंहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठो- ऽभूँत्॥४७॥

तमंबिधष्म। पुनेरिम र सुंवामहा इतिं। तं छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्द्स्त्वम्। साम्रा समानंयन्। तथ्साम्नेः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशंः। य एवं विद्वान्थ्सोमंमागच्छंति। यशं एवेनंमृच्छति। तस्मादाहुः। यश्चेवं वेद यश्च न। तावुभौ सोम्मागंच्छतः। सोमो हि यशंः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छ्रतीत्यांहुः। यः सोमे सोमं प्राहेतिं। तस्माथ्सोमे सोमः प्रोच्यः। यशं एवेनंमृच्छति॥४९॥

अभिपुण्वितं स्महौता तर्पयित् पङ्गौता निवित्त्वमभूतिष्ठति प्राहेति हे चं॥———[८]

ड्दं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसंदेव सन्मनोऽकुरुत् स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्धूमोऽजायत। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मांत्तेपानाद्वग्रेरंजायत। तद्भूयोऽतप्यत॥५०॥

तस्मांत्तेपानाञ्चोतिंरजायत। तद्भूयों ऽतप्यत। तस्मांत्तेपाना-दर्चिरंजायत। तद्भूयों ऽतप्यत। तस्मांत्तेपानान्मरींचयो- ऽजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भूयोऽतप्यत। तद्भ्रमिव समहन्यत। तद्वस्तिमंभिनत्॥५१॥

स संमुद्रोऽभवत्। तस्माँथ्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजननिमव् हि मन्यंन्ते। तस्माँत्पृशोर्जायंमानादापंः पुरस्ताँद्यन्ति। तद्दशंहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। य पृवं तपंसो वीर्यं विद्वाङ्स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिललमांसीत्। सोंऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स कस्मां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्पस्वंवापंद्यत। सा पृंथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरिक्षम-भवत्। यदूर्धमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोदीत्। तद्नयो रोदस्त्वम्॥५३॥

य एवं वेदं। नास्यं गृहे रुंदन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं। य एवमेषां लोकानां जन्म वेदं। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छंति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। सौऽन्तर्वानभवत्। स ज्ञघनादसुंरानसृजत॥५४॥ तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपांहत। सा तिमस्राऽभवत्। सोऽकामयत् प्रजांयेयेति। स तपोऽतप्यत। सौन्तर्वानभवत्। स प्रजनंनादेव प्रजा अंसृजत। तस्मांदिमा भूयिष्ठाः। प्रजनंना्द्येना असृंजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्। तामपाहत। सा जोथ्म्नांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपक्षाभ्यांमेवर्तूनंसृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रें घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तनूरासींत्॥५६॥

तामपाहत। सोंऽहोरात्रयोः सन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेति। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्देवानंसृजत। तेभ्यो हरिते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासीत्। तामपाहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पुते वै प्रजापंतेर्दोहाँः। य पुवं वेदे। दुह पुव प्रजाः। दिवा वै नोऽभूदितिं। तद्देवानां देवत्वम्। य पुवं देवानां देवत्वं वेदे। देववांनेव भवति। पुतद्वा अहोरात्राणां जन्मे। य पुवमहोरात्राणां जन्म वेदे। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥ अस्तोऽधि मनोऽसृज्यत। मनंः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनंस्येव पंरमं प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चं। तदेतच्छ्वांवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तींव्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्यंच्छति। प्रजायते प्रजयां पृश्निः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्नोति। य एवं वेदं॥५९॥

अग्निरंजायत् तद्भ्योंऽतप्यताभिनदरोदीत्प्रजापंतीरोद्स्त्वमंसृज्ञतासृंजत घृतमंदुह्द्याऽस्य सा त्नूरासीदहंरभवद्दच्छित् वेदं (इदं धूमौंऽग्निज्योंतिंर्चिर्मरींचय उदारास्तद्भ्भः स ज्ञघनाथ्सा तिमस्या स प्रजनंनाथ्सा जोथ्स्या स उपपक्षाभ्याः सोऽहोरात्रयौः सन्धः स मुखात्तदहंदेववौन्मृन्मये दारुमये रज्तते हरिंते तेभ्यस्ताभ्यो द्वे तेऽत्रं पर्यो घृतः सोमम्॥॥———[९]

प्रजापंतिरिन्द्रंमसृजतानुजावरं देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेहि। एतेषां देवानामधिपतिरेधीतिं। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसं। वयं वे त्वच्छ्रेया १ सः स्मृ इतिं। सोंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं वयं वे त्वच्छ्रेया १ सः स्मृ इतिं मा देवा अंवोचन्नितिं। अथ् वा इदं तर्रहें प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥

यदस्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिर्भविष्यामीति। कोऽहः स्यामित्यंब्रवीत्। एतत्प्रदायेतिं। एतथ्स्या इत्यंब्रवीत्। यदेतद्भवीषीतिं। को हु वै नामं प्रजापंतिः। य एवं वेदं॥६१॥

विदुरेनं नाम्नां। तदंस्मे रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यत। किं किं वा अंकर्मितिं। स चन्द्रं म् आह्रेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रम्स्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥

चन्द्रवांनेव भेवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या यथां गोपायत् इतिं। तथ्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदे। नैनं दभ्नोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमिन्द्रियं प्रत्यंस्थादितिं। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदे। इन्द्रियाव्येव भेवति॥६३॥ अयं वा इदं पंरमोऽभूदितिं। तत्पंरमेष्ठिनंः परमेष्ठित्वम्।

अयं वा इदं पंरमों अर्दितिं। तत्पंरमेष्ठिनः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदं। प्रमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तांत्। रुद्रा दंक्षिण्तः। आदित्याः पश्चात्। विश्वं देवा उत्तर्तः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥ साध्याः परांश्चम्। य एवं वेदं। उपेन समानाः

संविंशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता

अंस्मै नातिष्ठन्तान्नाद्याय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः। मुखं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तर्तः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्र्यंवर्तयत।
ताः स्वंतांमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा
अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वर्तयंते नि
चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा
अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भवति॥६७॥

- - - - अासीद्वेदं चन्द्रम्स्त्वं य एवं वेदेन्द्रियाव्येव भविति प्रत्यश्चं मुर्खं दक्षिणतो मुर्खं पृक्षान्नवं

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं दशंहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्का तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स दशंहोतार् प्रयुंक्षीत। बहोरेव भूयाँ-भवति। सोंऽकामयत वीरो म् आजांयेतेतिं। स दशहोतुश्चतुंर्होतार्ं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्क॥६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोंऽजायत। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेतिं। स चतुंर्होतार् प्रयुंश्चीत। आऽस्यं वीरो जांयते। सोंऽकामयत पशुमान्थस्यामितिं। स चतुंर्होतुः पश्चंहोतार् निर्गमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्थस्यामितिं। स पश्चंहोतारं प्रयुंश्चीत॥६९॥

पशुमानेव भंवति। सोंऽकामयत्तिवों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चेहोतुः षड्ढोतारं निर्रमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंत्त्व्यृतवों-ऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्तिवों मे कल्पेर्न्नितिं। स षड्ढोतारं प्रयुंजीत। कल्पन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोऽकामयत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः सप्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति सोमपः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोमपः सोमयाज्यंजायत। यः कामयेत सोमपः सोमयाजी स्याम्। आ में सोमपः सोमयाजी जांयेतेतिं। स सप्तहोतारं प्रयुंश्चीत। सोमप एव सोमयाजी भंवति। आऽस्यं सोमपः सोमयाजी जांयते। स वा एष पशुः पंश्चधा प्रतिं तिष्ठति॥७१॥

पद्भिर्मुखेन। ते देवाः पुशून् वित्वा। सुवृगं लोकमायन्। तें ऽमुष्मिं होके व्यंक्षुध्यन्। तें ऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेति। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीरसं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं। तस्य वा इयं क्रुप्तिः॥ ७२॥

यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कल्पंतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहीता। अमुत्रं सद्भ्यो देवेभ्यो हव्यं वहिति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नमिति। यो वै चतुंर्होतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवति। अग्निहोत्रं वै दशंहोतुर्निदानम्। दर्शपूर्णमासौ चतुंर्होतुः। चातुर्मास्यानि पश्चंहोतुः। पशुबन्धः षङ्क्षोतुः। सौम्यौऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वे चतुंर्होतृणां निदानम्। य एवं वेदे। निदानवान्भवति॥७३॥ अमिमीत तं प्रायुंङ्क पश्चंहोतारं प्र युंजीत जायेतेतिं तिष्ठति क्लिविदंशंहोतुर्निदान सम

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंज्येतिं प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंज्येतिं

प्रजापंतिरकामयत निदानंवान्भवति॥

प्रजापंतिरकामयत् प्रजांयेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत् दशंहोतार् तेनं दश्धा-ऽऽत्मानं देवा वै वर्रुणमन्तो वै प्रजापंतिस्ताः सृष्टाः समंश्लिष्यं देवा वै चतुंर्होतृभिरिदं वा अग्रे प्रजापंतिरिन्द्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥ प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयैवैनृत्तस्य वा इयं क्रृप्तिस्तस्मात्तेपानाञ्च्योतिर्-यद्स्मिन्नांदित्ये स षड्ढोतुः सप्तहोतारं त्रिसंप्ततिः॥७३॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयबाह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनो वदन्ति। किं चतुर्होतृणां चतुर्होतृत्वमिति। यदेवैषु चतुर्धा होतारः। तेन् चतुर्होतारः। तस्माचतुर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुर्होता। अग्निः पश्चहोता। धाता षङ्कोता। इन्द्रः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दर्शहोता। य एवं चतुरहोतृणामृद्धिं वेदे। ऋभ्रोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदे। बन्धुमान्भवति। य एषामेवं कृप्तिं वेदे। कल्पंतेऽस्मे। य एषामेवमायतेनं वेदे। आयतेनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदे॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। दशंहोता चतुंर्होता। पश्चंहोता षड्ढांता सप्तहोता। अथ कस्माचतुंर्होतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंर्होता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतांनामुप्-देशंनात। य एविमन्द्रङ् श्रेष्ठं देवतांनामुप्देशंनाद्वेदं। विसेष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठंमायन्तं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्ं। अयमवांसादितिं। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः। अथों एनं प्रथमेनैवानुं बुध्यन्ते। अयमागन्ं।

अयमवांसादितिं॥ ३॥

सप्तहोंता प्रतिष्ठां वेदं बुध्यन्ते षट्वं॥ दक्षिणां प्रतिग्रहीष्यन्थ्सप्तदंशकृत्वोऽपाँन्यात्। आत्मानंमेव

सिमंन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनां भूत्वा प्रतिंगृह्णाति। आत्मनोऽनौत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्वृत सन्तं निर्हरेरन्। आग्नींध्रे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्ठन्। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयति। यद्येनं पुनंरुप शिक्षेयुः। आग्नीप्र एव जुंह्याद्दशंहोतारम्। चुतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविंग्राहम्। प्राणानेवास्मैं कल्पयति। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृंतुमुखऋंतुमुखे जुहोति।

ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

क्रुप्ता अस्मा ऋतव आयंन्ति। षड्ढोता वै भूत्वा प्रजापंतिरिद॰ सर्वमसृजत। स मनोंऽसृजत। मनसोऽधिं गायत्रीमंसृजत। तद्गायत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि साम। तथ्साम यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्नोऽधि यज्र् ध्यसृजत। यजुभ्योऽधि विष्णुम्। तद्विष्णुं यशे आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीरसृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तथ्सोम् यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादधि पशूनंसृजत। पशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तदिन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनुत्राति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यश्चि भंवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तथ्सवंमुत्तान एवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिंगृह्णीतं नाहिंनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सवंमुत्तानस्त्वां-ऽऽङ्गीर्सः प्रतिंगृह्णात्वित्येव प्रतिंगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आंङ्गीर्सः। अनयैवैनृत्प्रतिंगृह्णाति। नैन र्ह्षं हिनस्ति। बर्हिषा प्रतीयाद्वां वाऽश्वं वा। एतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवैनं धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतव्स्तदाऽलंभृतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥_____[२]

यो वा अविद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपौप्माऽमुिष्मं हो के भंवति। अथ यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपौप्मा-ऽमुिष्मं हो के भंवति। देवता वै सप्त पृष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी चं। वायुश्चान्तरिक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं अपुष्युन्नक्षंत्रैरपुष्युत्पर्ञ्च च॥

चन्द्रमाः। अग्निर्न्यंवर्तयत। स सांह्स्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिवंनस्पतिंभिरपुष्यत्।
वायुर्न्यंवर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिंक्षं न्यंवर्तयत।
तद्वयोंभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स र्श्मिभिरपुष्यत्।
चौर्न्यंवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत।
सोंऽहोरात्रैरंधमासैर्मासैर्न्ऋतुभिः संवथ्सरेणांपुष्यत्।
तान्योषान्युष्यति। याङ्स्तेऽपुष्यन्। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च॥१०॥

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमिन्द्रियस्यापाँ-क्रामत्। तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽर्धिमिन्द्रिय-स्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अर्धिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णातिं। अथ योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं।

अर्धमंस्येन्द्रियस्यापंकामति। तस्य वै सोमंस्य वासंः प्रतिजग्रहुषंः। तृतीयमिन्द्रियस्यापाँकामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स तृतींयिमिन्द्रिय-स्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। तृतींयिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य

एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णातिं। अथु योऽविद्वान्प्रति-गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापंत्रामति। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थिनिद्वयस्यापां ऋामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चतुर्थमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त॥१२॥ चतुर्थमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य पुवं विद्वान्गां प्रंतिगृह्णातिं। अथ योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चतुर्थमंस्येन्द्रिय-स्यापंत्रामित। तस्य वै वर्रणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पश्चमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स पंश्रममिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। पश्चममिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥ अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पृश्चममंस्येन्द्रियस्यापं-

क्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रहुषंः। षष्ठमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स षष्ठमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। षष्ठमिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णातिं। अथ योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। षष्ठमंस्येन्द्रियस्यापं ऋगमित॥१४॥ तस्य वै मनोस्तर्ल्यं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिनिद्रय- स्यापाँकामत्। तम्तेनेव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स संप्तमिनिद्वयस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। सप्तमिनिद्वयस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वाङ्स्तर्ल्पं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविंद्वान्प्रतिगृह्णातिं। सप्तममंस्येन्द्रियस्यापंकामित। तस्य वा उंत्तानस्याँऽऽङ्गीर्सस्याप्राणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनिद्वयस्यापाँकामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै सौंऽष्ट्रमिनिद्भयस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अष्ट्रमिनिद्भयस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वानप्राणत्प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। अष्ट्रम-मस्येन्द्भियस्यापंत्रामित। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमृत्तान एवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमृत्तानस्त्वाऽऽङ्गीर्सः प्रतिगृह्णीयात्। ह्यं वा उत्तान आङ्गीर्सः। प्रतिगृह्णात्वत्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आङ्गीर्सः। अनयैवेनत्प्रतिगृह्णाति। नैन र् हिनस्ति॥१६॥

तृतीयमिन्द्रियस्यापाँकामचतुर्थमिन्द्रियस्यात्मत्रुपाधत्तार्श्वं प्रतिगृह्णाति षष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्टमिन न्द्रियस्यापाँकामत्प्रतिगृह्णीयाचृत्वारिं च (तस्य वा अग्नेर्हिरंण्य् सोमंस्य वास्स्तदेतेनं रुद्रस्य गान्तामेतेन् वरुणस्यार्श्वं प्रजापंतेः पुरुषं मनोस्तल्पन्तमेतेनौत्तानस्य तदेतेनाप्रांणद्यद्वै। अर्थं

तृतींयमष्टमं तचंतुर्थं तां पंश्रम षष्ठ संप्तमन्तम्। तदेतेन द्वे तामेतेनैकं तमेतेन त्रीणि

तदेतेनैकम्॥)॥____

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दर्शहोतारः सुत्रमास्त।

केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृज्नतेतिं। प्रजापंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषंधीरसृज्नन्तेतिं। सोमेन् वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनै्भ्यो लोकभ्योऽस्र्रान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेतिं। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकभ्योऽस्र्रान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कोतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

केन्तूनंकल्पयन्तेति। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यथ्सप्तहोतारः सत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ श्लोकान्थ्समं-तन्वित्रिति। अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेन्माँ श्लोकान्थ्समंतन्वित्रिति॥१९॥

पुते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पुवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपते दीक्षंते। अवान्त्रमेव स्त्रिणांमृभ्नोति। यो वा अंर्यमणुं वेदे। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। युज्ञो वा अंर्यमा। आर्यावस्तिरिति वै तमांहुर्यं प्रश्रश्संन्ति। आर्यावसितर्भवति। य एवं वेदे॥२०॥

यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽिधं यज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंर्होतृन् वेदेतिं। स ह्येव भूयो वेदं। यश्चतुंर्होतृन् वेदं। यो वै चतुंर्होतृणा् १ होतृन् वेदं। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमत्ति॥२१॥

सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दर्शहोतृणा् १ होतां। सोम्श्चतुंरहोतृणा् १ होतां। अग्निः पश्चहोतृणा् १ होतां। धाता षड्ढांतृणा् १ होतां। अर्यमा सप्तहांतृणा् १ होतां। पृते वे चतुंरहोतृणा् १ होतांरः। तान् य पृवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नमित्त। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥

अर्धुवन्नार्धुवन्नित्येवं वेदांति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वै तेनं स्त्रद्वेतं॥)॥———[५]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्नश्सत। स हृदंयं भूतों-ऽशयत्। आत्मन् हा (३) इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंशृण्वन्। ता अग्निहोत्रेणेव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावर्तन्त। ताः कुसिन्धुमुपौहन्। तस्मादिशिहोत्रस्यं यज्ञकृतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वो- ऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरांदित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्यंश्वन्। ते दंर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतन्त। त उपौह् श्रृं ख्वार्यङ्गानि। तस्माँ द्रशपूर्ण-मासयौर्यज्ञऋतोः। चृत्वारं ऋत्विजः। पृश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पृश्चवः प्रत्यंश्वण्वन्। ते चांतुर्मास्येरेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतन्त। त उपौहं लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्। तस्माँ चातुर्मास्यानां यज्ञऋतोः॥२४॥

पश्चर्त्विजः। षट्कृत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुब्न्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपूर्यावंर्तन्त। त उपौहुन्थ्स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाश्चं प्राणम्। तस्मात्पशुब्न्धस्यं यज्ञऋतोः। षट्टत्विजः। सप्तकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपूर्यावंर्तन्त॥२५॥

ता उपौहन्थ्सप्त शीर्षणयाँन्प्राणान्। तस्माँथ्सौम्यस्याँध्वरस्यं यज्ञकृतोः। सप्त होत्राः प्राचीर्वषंद्भुवन्ति। दृशकृत्वोऽह्वंयत्। तपः प्रत्यंशृणोत्। तत्कर्मणैव संवथ्सरेण सर्वैर्यज्ञकृतिभूरुपं पूर्यावर्तत। तथ्सर्वमात्मान्मपरिवर्गमुपौहत्। तस्माँथ्संवथ्सरे सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्मादशहोता चतुरहोता।

पश्चेहोता षड्ढोंता सप्तहोंता। एकंहोत्रे बुलि॰ हंरन्ति। हर्रन्त्यस्मै प्रजा बुलिम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं॥२६॥

चुन्द्रमाँश्चातुर्मास्यानाँ यज्ञऋतोर्रध्वरेणं यज्ञऋतुनोपं पूर्यावर्तन्त सप्तहोता चुत्वारि च॥—— $oldsymbol{eta}$

प्रजापंतिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नं-मस्त्विति। सोऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धंक्ष्यतीति। स एता श्र्यतुं रहोतॄनात्मस्परंणानपश्यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे स आत्मानं मस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोति। एकंहोतारमेव तद्यं ज्ञक्तुमां प्रोत्यग्निहोत्रम्॥२७॥

कुसिन्धं चाऽऽत्मनः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। चतुर्होतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारिं चाऽऽत्मनोऽङ्गांनि स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। समित्पंश्चमी। पश्चहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानि। लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्॥२८॥

तानि चाऽऽत्मनेः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च् सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। षड्ढोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानि चाऽऽत्मनेः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मिथ्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति सौम्यमंध्वरम्। सप्त चाऽऽत्मनः शीर्षण्याँन्प्राणान्थस्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। द्विर्निमाँष्टि। द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति संवथ्सरम्। सर्वं चाऽऽत्मान्मपंरिवर्गं स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति॥३०॥ अष्रिहोत्रं म्ज्ञान्द्विर्जुहोत्यपंरिवर्गं स्पृणोत्येकं च॥———[७]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेयेतिं। स तपोऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स हरितः श्यावोऽभवत्। तस्माथ्स्र्यन्तर्वत्नी।

हरिणी सती श्यावा भंवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावोऽभवत्। तस्मौत्तान्तः कृष्णः श्यावो भंवति। तस्यासुरेवाजीवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य पुवमसुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भंवति। नैन्मसुर्जहाति। सोऽसुंरान्थ्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितृनंसृजत। तत्पंतृणां पितृत्वम्। य एवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवमैं। स पितॄ-श्मृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजत। तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मंनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मृनुस्त्येव भंवति। नैनं मनुर्जहाति। तस्मै मनुष्यांन्थ्ससृजानायं। दिवां देवृत्रा-ऽभंवत्। तदनुं देवानंसृजत। तद्देवानां देवृत्वम्। य एवं देवानां देवृत्वं वेदं। दिवां है्वास्यं देवृत्रा भंवति। तानि वा पृतानिं चत्वार्यम्भारंसि। देवा मंनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवति। य एवं वेदं॥३३॥

अजीव्थ्स्वानां भवति देवानंस्जत सप्त चं॥———[८] ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पवते।

यदंभि पवंते। यदंभि सम्पवंते। सर्वमायुरियात्। न पुरा-ऽऽयुषः प्र मीयेत। पृशुमान्थ्स्यात्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥

यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयते। पृशुमान्भविति। विन्दते प्रजाम्। अन्धः पंवते। अपोंऽभि पंवते। अपोंऽभि सम्पंवते॥३५॥

अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सम्पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सम्पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सम्पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सम्पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वातिं। प्राण एव भूत्वा पुरस्तौद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वाः प्रजाः प्रति नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानाम्। प्राण इव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्देक्षिणतो वाति। मात्रिश्वेव भूत्वा देक्षिणतो वाति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश् आ वाति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीतिं। स वा एष मांत्रिश्वैव। अथु यत्पश्चाद्वातिं। पर्वमान एव भूत्वा पृश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ यदुंतर्तो वाति। स्वितेव भूत्त्वोत्तर्तो वाति। स्वितेव स्वानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष संवितेव। ते य एनं पुरस्तांदायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानंः। ताङ्स्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ य एनं दक्षिणत आयन्तंमुप्वदंन्ति॥४०॥

य पुवास्यं दक्षिणतः पाप्मानः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एनं पश्चादायन्तंमुप् वदंन्ति। य पुवास्यं पृश्चात्पाप्मानः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। पृश्चादितंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एनमुत्तर्त आयन्तंमुप् वदंन्ति। य पुवास्यौत्तर्तः पाप्मानः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥

उत्तर्त इतंरान्याप्मनंः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषेत। मृण्टयेदिव। ऋाथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत मे पाप्मान्मपं हन्युरितिं। स यान्दिशं स्निमेष्यन्थ्स्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथु प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूढं गुन्धम्भि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपुदं

पूर्वा कीर्तिर्गच्छति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

वेद सम्पंवत आदित्यात्पंवते वात्या वात्येष पर्वमान पृव दक्षिण्त आयन्तंमुप् वर्दन्त्युत्तर्तः पाप्मान्स्ताः स्तेपं घ्रन्तीत्यृष्टौ चं॥————[२]

प्रजापंतिः सोम् राजांनमसृजत। तं त्रयो वेदा अन्वंसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् राजांनं चकमे। श्रृद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरंं प्रजापंतिमुपंससार। त॰ होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनं कामये। श्रद्धामु स कांमयत् इतिं। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंर्होतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारेश्च पत्निंभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। ता १ होदीक्ष्योंवाच। उप मा वंर्त्स्वेतिं। त १ होंवाच। भोगं तु मृ आचंक्ष्व। एतन्मृ आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उ ह त्रीन् वेदान्प्रदंदौ। तस्मादुह् स्त्रियो भोगमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामिति॥४५॥ यं वां कामयेत प्रियः स्यादितिं। तस्मां पुतः स्थांग्रमेलङ्कारं केल्पयित्वा। दशंहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुरहोतारं दक्षिण्तः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षङ्कोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारश्च पत्निभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रजेत्। प्रियो हैव भवति॥४६॥

अयान्यलङ्कृत्यं स्यामिति भवति॥——[१०] ब्रह्मात्मन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेति। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै दश्म १ हृतः प्रत्यंशृणोत्।

स दर्शहूतोऽभवत्। दर्शहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं दर्शहूत्र सन्तम्। दर्शहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

अत्मन्नात्मिन्नत्यामंत्रयत। तस्में सप्तमः हूतः प्रत्यंशृणोत्। स सप्तहूंतोऽभवत्। सप्तहूंतो हु वै नामेषः। तं वा पृतः सप्तहूंतः सन्तम्। सप्तहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्में षष्ठः हूतः प्रत्यंशृणोत्। स षड्ढूंतोऽभवत्॥४८॥

षड्ढूंतो हु वै नामैषः। तं वा पृतः षड्ढूंतः सन्तम्। षड्ढ्योतेत्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मे पञ्चमः हूतः प्रत्यंशृणोत्। स पञ्चंहूतोऽभवत्। पञ्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं पर्श्चंहूतः सन्तम्। पञ्चंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण॥४९॥

प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै चतुर्थः हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स चतुर्हृतोऽभवत्। चतुर्हृतो ह व नामैषः। तं वा पृतं चतुर्हृतः सन्तम्। चतुर्हृतित्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंत्रवीत्। त्वं व मे नेदिष्ठः हूतः प्रत्यंश्रौषीः। त्वयंनानाख्यातार् इति। तस्मान्तु हैनाःश्रुश्रतुर्होतार् इत्याचंक्षते। तस्मांच्छुश्रूषः पुत्राणाः हृद्यंतमः। नेदिष्ठो हृद्यंतमः। नेदिष्ठो हृद्यंतमः। नेदिष्ठो हृद्यंतमः। नेदिष्ठो हृद्यंतमः। नेदिष्ठो

देवाः षड्ढ्रंतोऽभवृत्पश्चंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षंणाश्रौषीः षद्वं॥———[११]

ब्रह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यद्दर्शहोतारः प्रजापंतिर्व्यस्रं प्रजापंतिः पुरुषं प्रजापंतिरकामयत् स तपः सौंऽन्तर्वान्ब्रह्मवादिनो यो वा इमं विद्यात्प्रजापंतिः सोम् र राजानं ब्रह्मौत्मन्वदेकांदश॥११॥ ब्रह्मवादिन्स्तस्य वा अग्नेर्यद्वा इदं किं चं प्रजापंतिरकामयत् य एवास्यं दक्षिणृतः पंश्चा्शत्॥५०॥

ब्रह्मवादिनो य एवं वेदं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दमूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नो यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। श्रृत्रूयतामा भरा भोजनानि। अग्ने शर्धं मह्ते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानि सन्तु। सञ्जास्पत्य स्यम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महार्रसा। अग्ने यो नोऽभितो जनंः। वृको वारो जिघार्सति॥१॥

ताइस्त्वं वृत्रहं जिहि। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नी-ऽभिदासंति। समानो यश्च निष्टाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किञ्चन। त्विमेन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुरुचेतंनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वारं अमित्रान्॥२॥ अगार्णाचो अभिभवे नदस्य। अगोरीचो अप्रियम्य चं

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराधरा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथं गुवेषंण् हिर्रिभ्याम्। उप ब्रह्मांणि जुजुषाणमंस्थुः। विबाधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥ ह्व्यवाहंमभिमातिषाहम्ँ। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तं दीद्यंतं पुरंन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृंणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य। उरुं नः पन्थां प्रदिशन्विभाहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरंं न आयुंः। त्वामंग्ने ह्विष्मंन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्यैं त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वेक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रेक्ष्रत्वर्वतः। पूषा वाजर्रं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मा अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अघृंणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेण्यः। त्वयां युज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षा रेसि सेधति। शुक्रशोचिरमंत्र्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अर्हंसः॥६॥

प्रति ष्म देव रीषंतः। तिपंष्ठेरुजरों दह। अग्ने हश्सि न्यंत्रिणम्। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेषुजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्व १ हि विश्वभेषजः। देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौ वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावतंः। दक्षं मे अन्य आवातुं। परान्यो वांतु यद्रपंः। यद्दो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततो नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह। वात आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नों हृदे॥८॥

प्रण आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूहिषे। अया नो धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदं नमः। कामों भूतस्य भव्यंस्य। सम्राडेको विरांजति॥९॥

स इदं प्रतिं पप्रथे। ऋतूनुथ्मृंजते वृशी। काम्स्तदग्रे समंवर्त्ताधिं। मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। सतो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षंमाणासो धृषता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्रशिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥ मन्युर्भगों मन्युरेवासं देवः। मन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मृन्युं विशं ईडते देवयन्तीः। पाहि नो मन्यो तपंसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्भृच्छुचिः। देवा असादया इह। अग्ने ह्व्याय् वोढंवे। व्रतानुबिभ्रंद्वतपा अदाँभ्यः। यजां नो देवा अज्ञरः सुवीरः। दधद्रव्रांनि सुविदानो अंग्ने। गोपाय नो जीवसे जातवेदः॥११॥

जिघारं सत्यमित्रां अघुन्वानीं डते सर्वा अरहंसो वातो हृदे राजत्यग्निरूपाः सुविदानो अंग्रु एकं

च।

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृंणु। यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मंणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्ने त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृंणु। यत्किश्चासौ मनंसा यचं वाचा। यज्ञैर्जुहोति यजुंषा हिविर्भिः॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन स्त्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तथ्समृद्धि यद्सौ करोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत र ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँश्रौ त उभौ बाहू। अपनह्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य

ब्रह्मणा। सर्वं तेऽविधेषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्भारात्। यज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टम्स्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापन्न-रातयः। अन्तिं दूरे स्तो अंग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्त्रेण। कृत्याः हंन्मि कृतामहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमंन्द्र वर्त्रेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडे अग्निं विपश्चितम्॥१५॥

साश्वः। सह यन्मे अस्ति तेन। इंडे अग्नि विपश्चितम्॥१५॥
गिरा यज्ञस्य सार्धनम्। श्रुष्टीवानंन्धितावांनम्। अग्ने श्वेकमं
ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषार्रसि तरेम।
अवंतं मा समनसौ समोकसौ। सचेतसौ सरेतसौ। उभौ
मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भंवतम् च नंः। स्वयं कृण्वानः
सुगमप्रयावम्॥१६॥

तिग्मश्रंङ्गो वृष्भः शोश्चानः। प्रत्नः स्थस्थमनु पश्यमानः। आ तन्तुंम्ग्निर्दिव्यं तंतान। त्वन्नस्तन्तुंरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देवयानः। त्वयांऽग्ने पृष्ठं वयमार्रुहेम। अथां देवैः संधमादं मदेम। उद्तुंत्तमं मुंमुग्धि नः। वि पाशंं मध्यमश्रृंत। अवांधमानिं जीवसं॥१७॥ वय सोम व्रते तवं। मनंस्त्नूषु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमिह। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपत्नीं। उद शोन पित्विद्यें जिगाय। त्रि श्रादंस्या ज्यमं योजनािन। उपस्थ इन्द्र इस्थिवंरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंनञ्जया। विश्वव्यंचा अदितिः सूर्यत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

सा नो देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचिलः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्त्। मा त्वद्राष्ट्रमिधं भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी। ध्रुवं विश्वमिदं जगत्। ध्रुवा हु पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशाम्यम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रमुं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्रांणि स्अयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवं ध्रुवेणं ह्विषां। तस्में देवा अधिब्रवन्। अयं च् ब्रह्मंणस्पतिः॥२०॥

ह्विर्भिरास्यंमि दासंतो विपश्चित्मप्रंयावश्चीवसे ददांना व्यथिष्ठा ब्रव्नेकं च॥——[२] जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न

किलारिषाथ। यच्छक्नेरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममदेधाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरेस्वती। वाजेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वेष्टु धिया वेसुः। सरेस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्नौ। अयांमि स्रुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यंक्षि सद्म सदंने पृथिव्याः। अश्रांिय यज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतों हवामहे। यो गोजिद्धंनजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्मं नो यज्ञं विंह्वे जुंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनं त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः क्विरुदंतिष्ठो विवंस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते केतुरंभवद्दिवि श्रितः। अग्निरग्रै प्रथमो देवतांनाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद १ ह्विरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंतुः हि शंत्रा। विश्वेदिवैर्यज्ञियैः संविदानौ। दीक्षाम्स्मै यजंमानाय धत्तम्। प्र तिद्वर्ष्णुः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमणेषु। अधि क्षियन्ति भुवनानि विश्वा। नूमर्तो दयते सिन्ष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दार्शत्॥२४॥

प्रयः स्त्राचा मनंसा यजांतै। पृतावंन्तृत्रर्यमा विवासात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षिति स्युजिनमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चसं महित्वा। प्र विष्णुरस्तु त्वस्स्तवीयान्। त्वेष इह्रास्य स्थविरस्य नामं॥२५॥

होतारं चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य मृहा। श्रिया त्वंग्निमतिथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्यस्थविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृदृषंणु शृष्मंमिन्द्र। इन्द्रः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनंवे केतुमह्नाम्। अविनद्ज्योतिर्वृहते रणाय।

अश्विनाववंसे निह्वये वाम्। आ नूनं यांतर सुकृतायं विप्रा। प्रात्युंक्तेनं सुवृता रथेन। उपार्गच्छत्मवसार्गतन्नः। अविष्टं धीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अहंयं नो अस्तु। आवां तोके तनये तूतुंजानाः। सुरत्नांसो देववीतिं गमेम॥२७॥

त्व सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वं दक्षैः सुदक्षों विश्ववंदाः। त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिहृत्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्प्रंभवो नृचक्षाः। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षामप्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा र सुंक्षिति र सुश्रवंसम्। जयंन्तं त्वामनुं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यों घृतासुंतिः। विभूतद्यम्न एव या उं स्प्रथाः॥२८॥

अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमो युज्ञस्य राध्यो ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवीयसे। सुमज्ञानये विष्णंवे ददांशति। यो जातमस्य महतो महि ब्रवात्। सेदु श्रवोभिर्युज्यं चिद्दभ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ ह्विषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्ते विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥ इमा धाना घृतसुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्र सुखतंमे

रथैं। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदथें शश्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वयः प्रतें वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्ं। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिंभिश्लारु सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरं। आचंर्षणिप्रा वृष्भो जनांनाम्। राजां कृष्टीनां पुंरुहूत इन्द्रं। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपंमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायांह्यवंङ्। प्र यथ्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपंः समुद्र रथ्यंव जग्मुः। अतंश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी र सोमंः पृणतिं दुग्धो अर्शः। ह्वयांमिस त्वेन्द्रं याह्यंवंङ्॥ ३१॥

अरंन्ते सोमंस्त्नुवे भवाति। शतंत्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनास् प्रयुथ्स्। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदांनाः। ऋभुर्येभिवृषंपर्वा विहांयाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णंः। अहेडमान उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्थ्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो युज्ञियांनाम्। या तें काकुथ्सुकृंता या वरिष्ठा। यया शश्वत्पिबंसि मध्वं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र तें अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रों वर्ततामिन्द्र गृव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतयें। प्रात्यावांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्रह यज्ञमश्विना दधांते। प्रश्रे सन्ति क्वयः पूर्वभाजः। प्रातर्यजध्वमश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचांयः। पूर्वः पूर्वे यजंमानो वनीयान्॥३३॥

चाश्वजिद्यो गंच्छतं नो दाशृन्नामांभिश्वीर्गमेम सप्रथां भजामहे विशन्तु याह्यंर्वाङच्छं पिबाथः पद्गं॥

नृक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिंक्रि च। इद॰ रंजनि रजय। किलासं पिलृतं च यत्। किलासं च पिलृतं चं। निरितो नांशया पृषंत्। आ नः स्वो अंश्ञुतां वर्णः। पर्गं श्वेतानि पातय। असिंतं ते निलयनम्। आस्थानमसिंतं तवं॥३४॥

असिंक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तुनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सरूपा नामं ते माता। सरूपो नामं ते पिता। सरूपाऽस्योषधे सा। सरूपमिदं कृधि॥३५॥ शुन १ हुंवेम मृघवांन्मिन्द्रम्ं। अस्मिन्भरे नृतंमं वार्जसातौ। शृण्वन्तंमुग्रमूतये स्मथ्सुं। घ्रन्तं वृत्राणि स्ञितं धनांनाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसुं। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृष्टिजमातरः। युधे यदुंग्राः पृषंतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्वन्ति वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि सदङ्कासिं। विशो विश्वा अनुं प्रभु। समथ्सुं त्वा हवामहे। समथ्स्विग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गंच्छध्व संवंदध्वम्। सं वो मना स्सि जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वै। सञ्जानाना उपासंत। समानो मञ्जः समितिः समानी। समानं मनेः सह चित्तमेषाम्। समानं केतों अभि स॰ रंभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनेः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

संज्ञानं नः स्वैः। संज्ञानमरंणैः। संज्ञानंमिश्विना युवम्। इहास्मासु नियंच्छतम्। संज्ञानं मे बृह्स्पतिः। संज्ञानरं सविता करत्। संज्ञानमिश्वना युवम्। इह मह्यं नि येच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगन्म शर्म ते वयम्॥३९॥

अग्रे हिरंण्यसन्दशः। अदंब्येभिः सवितः पायुभिष्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्नः सुविताय् नव्यंसे। रक्षा मार्किर्नो अघशर्रस ईशत। मदेमदे हि नो ददुः। यूथा गर्वामृजुऋतुः। सङ्गृभाय पुरूश्ता। उभ्या हस्त्या वसुं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिन्वाजानां पते। शचीवस्तवं द्रसनाः। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभ्रुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मान्मा यूयम्। ऋतस्यर्तेनं मुश्चत। ऋतस्यर्तेनांऽऽदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। यज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्नुचाऽऽज्येन जुह्नंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्रतु। द्रुपदादिवेन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाऽऽज्यम्। विश्वे मुश्रन्तु मैनसः। उद्वयं तर्मस्परि। पश्यन्तो ज्योतिरुत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अर्गन्म ज्योतिरुत्तमम्॥४३॥

तवं कृधि वनस्पतीं आनतामसंति वयं भंरादित्याश्च नवं च॥————[४]

वृषासो अर्शः पंवते ह्विष्मान्थ्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋत्यः शृतार्यः। स मा वृषांणं वृष्मं कृणोत्। प्रियं विशा सर्ववीर स्वीरम्। कस्य वृषां सुते सर्चा। नियुत्वानवृष्मो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्ते शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मनः॥४४॥

तः स्प्रीचींकृतयो वृष्णियानि। पौइस्यांनि नियुतः सश्चिरिन्द्रम्। स्मुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचंस्ङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयन्थ्सगंरस्य बुध्नात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्मं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुध्नम्। वार्णवांत्स्तविषीभिरिन्द्रंः॥४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमान् ओर्जः। अवांभिनत्कुकुभः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनौ। रियं विश्वायुपोषसम्। मार्डीकं धेहि जीवसै। त्वर सोम महे भगमै। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षं दधासि जीवसैं। रथं युञ्जते मुरुतः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविष्टिषु॥४६॥

रजारंसि चित्रा विचंरन्ति त्न्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच्रं सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यंश्चित्रां वंदित् त्विषीमतीम्। अभ्रा वंसत मरुतः सुमाययां। द्यां वंर्षयतमरुणामेरेपसम्। अयुक्त सप्त शुन्ध्यवंः। सूरो रथंस्य नित्रयंः। ताभिर्याति स्वयंक्तिभिः। विहेष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अव्वययन्नसितं देव वस्वः। दिविध्वतो र्श्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावांधुस्तमो अपस्वंन्तः। पूर्जन्यांय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छतु। अच्छां वद त्वसं गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यं नम्साऽऽविंवास। किनेक्रदद्वृष्भो जीरदांनुः। रेतो दधात्वोषंधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गवां कृणोत्यवंताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्। तस्मा इदास्ये ह्विः। जुहोता मधुंमत्तमम्। इडां नः स्यतं करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररद्स्त्वामित्। शुचिं घृतेन् शुचयः सपूर्यन्। नामांनि चिद्दिधरे युज्ञियांनि। असूंदयन्त तुनुवः सुजांताः॥४९॥

इन्द्रंश्च नः शुनासीरौ। इमं युज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भं धत्तक्ष् स्वस्तयै। ययोदिदं विश्वं भुवनमा विवेशं। ययोदान्दो निहितो महंश्च। शुनांसीरावृतुभिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्तिं बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखाँ। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनाँ। हथो वृत्राण्यंप्रति। युव हि वृत्रहन्तंमा। याभ्या ह स्वरजंयन्नग्रं एव। यावांतस्थतुर्भुवंनस्य मध्यें। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्ञंबाहू। अग्नी इन्द्रांवृत्रहणां हुवे वाम्॥५०॥

मन इन्द्रो गविष्टिषु तन्तुं गर्भेष्ट सुजांताः सखां सुव चं॥————[५]

उत नेः प्रिया प्रियासुं। सप्तस्वसा सुजुंष्टा। सरंस्वती स्तोम्यां उभूत्। इमा जुह्वां नायुष्मदा नमोभिः। प्रति स्तोमर्थं सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतंमे दधां नाः। उपंस्थेयाम शर्णं न वृक्षम्। त्रीणि पदा विचेत्रमे। विष्णुंर्गोपा अदांभ्यः। ततो धर्माणे धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उरुक्रमस्य स हि बन्धंरित्था। विष्णौः पदे पंरुमे मध्व उथ्मः। ऋत्वादा अस्थु श्रेष्ठः। अद्य त्वां वन्वन्थ्सुरेक्णाः। मर्ते आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रेह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ बर्हिः सींद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्निय सुव। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। शुचिमकेर्बृहस्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एति। सक्तिमिन्द्र सच्यंतिम्। सच्यंतिं ज्यनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभात्र आ भेर। प्रयपस्यत्रिव सक्थ्यौ। वि नं इन्द्र मृधो जिहा कनींखुनदिव सापयन्। अभि नः सुष्टुंतिं नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधाथ्सपम्। कामस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह मा। मोदः प्रमोद आनन्दः॥५५॥ मुष्कयोर्निहिंतः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनसश्चित्तमाकूंतिम्। वाचः स्त्यमंशीमहि। पृशूनाः रूपमन्नंस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मियं। यथाऽहम्स्या अतृंपः स्त्रियै पुमान्। यथा स्री तृप्यंति पुःसि प्रिये प्रिया। एवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदित। तथेति वायुरांह्
तत्। हन्तेतिं सत्यं चन्द्रमाः। आदित्यः सत्यमोमिति।
आपुस्तथ्सत्यमा भेरन्। यशों यज्ञस्य दक्षिणाम्। असो
मे कामः समृद्धाताम्। न हि स्पश्मिविदन्नन्यम्स्मात्।
वैश्वानुरात्पुंरपुतारंमुग्नेः॥५७॥

अर्थममन्थन्नमृत्ममूराः। वैश्वान्रं क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृता पुरूणि। वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रवे। बृह्तीमूतये दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति न देभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवा ॥ श्रु याभिर्यजंते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जुते। न सईस्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभयं तस्य ता अन्। गावो मर्त्यंस्य वि चंरन्ति यज्वनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवों वदन्ति। सा नों मृन्द्रेष्मूर्जुं दुहांना। धेनुर्वागुस्मानुष् सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्री देवानां निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जं दुदुहे पयार्श्सा। क्रं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार्थ समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिश्श्वतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयंन्विश्वकंर्मा। मुरुत्वारं अस्तु गुणवान्थ्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वशुंरस्य प्रशिंष्टिम्। सपत्ना वाचं मनेसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारेसि। स्रुषा सपत्ना श्वशुंरोऽयमंस्तु। अयर शत्रूं अयतु जर्ह्षंषाणः। अयं वाजं जयतु वाजंसातौ। अग्निः क्षंत्रभृदिनिभृष्टमोजः। सहस्रियों दीप्यतामप्रयुच्छन्। विभ्राजंमानः समिधा न उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्॥६२॥

धारयंन्पुरोडाशुं बृह्स्पितंं ज्ञधनंच्युतिमानन्दो भगंस्य तृप्याण्युग्नेः पृथिवी यज्वंन एतु प्रदिशृक्षतंस्रो

वार्जसातौ चृत्वारिं च॥------[६]

वृषाँ उस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषा उयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कर्मण्यो हितो बृहन्नामं। वृष्मस्य या क्कृत्। विष्वान् विष्णो भवतु। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंवीतु जनेभ्यः। आयुष्मन्तं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृथिव्या अध्यक्षम्। इमिनेन्द्र वृष्भं कृण्। यः सृश्कः सुवृष्भः। कृत्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजमानाः। अकूरेणेव सर्पिषाः। मृद्धेश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतेनाश्च जयामसि॥६४॥ यस्यायमृष्भो ह्विः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्। अथो हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तनुवा मेरंयस्व। नीचा विश्वां अभितिंष्ठाभिमांतीः। नि श्वंणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मिभ प्रेहि प्र भंग सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषम् तिष्ठ शुष्मैः। इन्द्र शत्रून्पुरो अस्माकं युध्य। अग्ने जेता त्वं जय। शत्रून्थ्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमुधो नुद। एतं ते स्तोमं तुविजात विप्रः। रथं न धीरः स्वपां अतक्षम्। यदीदंग्ने प्रतित्वं देव हर्याः॥६६॥

सुवंवतीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्राय जिन्नेषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्येषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरक्षिष्ट् सुवर्महत्। वृत्रहा पुरुचेतनः। इन्द्रों जिगाय सहसा सहार्रस। इन्द्रों जिगाय पृतनानि विश्वा॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नंः पर्स्पा वरिंवः कृणोतु। अयं कृत्रुरगृंभीतः। विश्वजिदुद्भिदिथ्सोर्मः।

ऋषिर्विप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्धिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षत्रियाणाम्। अयं विशां विश्पतिंरस्तु राजाः। अस्मा इंन्द्र महि वर्चा ५सि धेहि। अवुर्च सं कणुहि शत्रुं मस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निरमुं भंज योऽमित्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षत्रस्यं ककुभिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूंनि॥६९॥ अस्मे द्यांवापृथिवी भूरिं वामम्। सन्दुंहाथां घर्मदुघेंव धेनुः। अय॰ राजां प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनज्मिं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन जयांसि न परा जयांसै। स त्वांऽकरेकवृषभङ् स्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मानुवानाम्। उत्तर्स्त्वमधेरे ते सपत्नाः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः सञ्जयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्रूयतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ। बुलिमंग्रे अन्तिंत् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिं चिकिद्धि। बृहत्ते अग्रे मिह् शर्म भुद्रम्। यो देह्यो अनंमयद्वध्स्रैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्वकारं। स निरुध्या नहुंषो यह्वो अग्निः। विश्लेश्वके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सद्यो अंग्रे अत्येष्युन्यान्। आविर्यस्मै चार्रुतरो बुभूथं। ईडेन्यो वपुष्यो विभावा। प्रियो विशामितिथिर्मानुषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिवमा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनांर्हित ब्रह्मणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्म सुचौ घृतवंतीः। ब्रह्मणा स्वरंवो मिताः॥७२॥

ब्रह्मं युज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः। शृङ्गांणीवेच्छृङ्गिणा् सन्दंदिश्रिरे। च्षालंवन्तः स्वरंवः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंवस्तस्थिवा संः। नमः सर्खिभ्यः सन्नान्माऽवंगात। अभिभूरग्निरंतर्द्रजा स्मि। स्पृधो विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म आहुंतिं मामिहष्ट। हृत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशांनं त्वा भुवंनानामिभिश्रयम्। स्तौम्यंग्न उरुकृत सुवीरम्। ह्विर्जुषाणः सपत्ना स्अभिभूरंसि। जहि शत्रू रप् मृधो नुदस्व॥७३॥

विशां जंयामसि जीरदानो हर्या विश्वा दिविष्टिषु वसूनि जिगीवान्थ्सहोंभिर्मिता नंश्चत्वारि

च॥_____

स प्रत्वन्नवीयसा। अग्नै चुम्नेने संयतौ। बृहत्तंतन्थ भानुनौ। नवं नु स्तोमंम्ग्नयौ। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसौः कुविद्वनाति नः। स्वारुहा यस्य श्रियो दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने युज्ञस्य चेतंतः। अदौभ्यः पुरपुता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव् क् सोमाय वाजिने। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्टक् शुचितम् वसुं। नवक् सोम जुषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवंस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥

स नो रास्व सहस्रिणंः। नव रहिवर्जुषस्व नः। ऋतुभिः सोम् भूतंमम्। तद्ङ्ग प्रतिहर्य नः। राजैन्थ्सोम स्वस्तयै। नव्रस्तोम् ज्ञवर्र ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तज्ज्षेतार् सचेतसा। शुचिं नु स्तोमं नवंजातम् द्य। इन्द्रौग्नी वृत्रहणा जुषेथौम्॥ ७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजर् सद्य उंशते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्रिणौं। युज्ञं न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तश् सुवर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाश्स्तंपयत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुवर्विदो हि जंजिरे। एदं बर्हिः सुष्टरीमा नवंन। अयं यज्ञो यजमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वं देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावांपृथिवी समीचीं। तुन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मे पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पुष्टिंममृतं नवंन॥७८॥

इमे धेनू अमृतं ये दुहातैं। पर्यस्वत्युत्तरामेतु पृष्टिः। इमं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहेनः। चित्रभानुर्घृतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्ने तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवताभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एंना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद यथां ह्विः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भद्रान्नः श्रेयः समंनैष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नों मयोभूः पितो आ विशस्व। शं तोकायं तनुवै स्योनः। एतमु त्यं मधुना संयुतं यवम्। सरस्वत्या अधिमनावेचकृषुः। इन्द्रं आसीथ्सीरपितः शतक्रेतुः। कीनाशां आसन्म्रुतः सुदानवः॥८०॥

पुरुपता वृंणीमहे जुषेथाँन्तर्पयतामृतन्नवेन मीयसे स्योनश्चत्वारि च॥————[८]

जुष्टश्चक्षंषो जुष्टींनरो नक्तञ्चाता वृषास उत नो वृषांऽस्यर्शः सप्रंत्ववद्ष्टौ॥८॥ जुष्टो मृन्युर्भगो जुष्टी नरो हरिंवर्पसङ्गिरः शिप्रिंन्वाजानामुत नंः प्रिया यद्वाग्वदंन्ती विश्वा आशा अशीतिः॥८०॥

जुष्टेः सुदानंवः॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रंक्षति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनि। स इथ्सर्वं व्यानशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्त नो ह्विः। मनंसिश्चत्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धे देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिमः हवम्। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् यूज्ञपंतिं दर्धत्। जुषतां मे वागिदः ह्विः। विराड्देवी पुरोहिता। ह्व्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणिं बहुधा वदंन्ति। पेशाः सि देवाः पंरमे जनित्रे। सा नों विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद हिवः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिंरमृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानाय बहुधा निधीयते। तस्यं सुम्नमंशीमहि। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतींर्यताम्। अनंन्धाश्चक्षुंषा व्यम्। जीवा ज्योतिंरशीमहि। सुवज्योतिंरुतामृतम्। श्रोत्रेण भ्द्रमुत शृंण्वन्ति सृत्यम्। श्रोत्रेण वार्चं बहुधोद्यमांनाम्। श्रोत्रेण मोदंश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश आ शृंणोमि। येन प्राच्यां उत दंक्षिणा। प्रतीच्यै दिशः शृण्वन्त्युंत्त्रात्। तदिच्छ्रोत्रं बहुधोद्यमानम्। अरात्र नेमिः परि सर्वं बभूव॥३॥

अश्यमनंपस्फरती सृत्यः स्म चे। [१] उदेहिं वाजिन्यो अस्यपस्वंन्तः। इदः राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहितो विश्वंमिदं जजानं। स नो राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहं रेरोह् र रोहित आर्रुरोह। प्रजािमवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। तािभः सः रंब्यो अविद्थ्यडुवीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहां र्षोद्राष्ट्रमिह रोहितः। मृधो व्यांस्थदभयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वरीभिः। राष्ट्रं दुंहाथामिह रेवतीभिः। विमंमर्श रोहितो विश्वरूपः। समाचक्राणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवं गृत्वायं महृता महिम्ना। वि नो राष्ट्रम्नेनत् पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वथ्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विशन्तु महंसा स्वेनं। सं माता पुत्रो अभ्येतु रोहितः॥५॥ यूयमुंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृंणीथ् शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिड्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अदर्हद्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंदर्हत्। तेन सुवंः स्तिभृतन्तेन नाकंः॥६॥

सो अन्तरिक्षे रजंसो विमानंः। तेनं देवाः सुव्रन्वंविन्दन्। सुशेवं त्वा भानवो दीदिवा स्मम्। समग्रासो जुह्वो जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। सरसंमग्ने युवसे भोजंनानि। अग्ने शर्धं मह्ते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पत्यर सुयम्मा कृंणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महारंसि॥७॥

अस्त्वेतु रोहिंतो नाको महार्रस॥——[२]

पुनेर्न् इन्द्रो मुघवां ददातु। धनांनि शक्तो धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणतां याचितो मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषो जुषाणः। यानि नोऽजिनं धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द नुस्तानि। अनेनं ह्विषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परिं। सर्वाभ्योऽभंयं करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा समृधे त्वा। पुरो दंधे अमृतत्वायं जीवसे आकूंतिमस्यावंसे। कामंमस्य समृद्धौ। इन्द्रंस्य युञ्जते धियः। आकूंतिं देवीं मनंसः पुरो दंधे। यज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनंसा सकांमः। विदेयंमेनद्धृदंथे निविष्टम्॥९॥

सेदग्निर्ग्नी श्रत्यैत्यन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशानां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेंभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं ह्विषां वयम्। विश्वा आशा मधुना सश् सृंजामि। अनुमीवा आप् ओषंधयो भवन्तु। अयं यजमानो मृधो व्यंस्यताम्॥१०॥

अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः संहस्री। पूषा नो गोभि्रवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समंनक्त युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दर्धती सरंस्वती। पूषा भगर्ं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिदंदिदन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥ आ नो भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि ते देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते

वसूनाम्। इमं कामं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा पप्रथंश्च। सुवर्यवो मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कुशिकासो अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानिं चकारं प्रथमानिं वज्री॥१२॥

अहन्निह्मन्वपस्तंतर्द। प्रवक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अहन्निह्नं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टां उस्मै वज्र ई स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपबथ्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथमुजा महीनाम्॥१३॥

यदिन्द्राहंन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। आथ्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून्न किलांविविथ्से। अहंन्वृत्रं वृत्रतरं व्यश्सम्। इन्द्रो वर्ज्रण महता व्धेनं। स्कन्धारंसीव कुलिशेनाविवृक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरं तुंविबाधमृंजीषम्॥१४॥

नातांरीरस्य समृंतिं वधानांम्। सः रुजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहांया अर्तिः। वसुंदंधे हस्ते दक्षिणे। तरणिर्न शिश्रथत्। श्रवस्यंया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिष्ध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिषे। विश्वंस्मा इथ्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुजिहांनो अभि काममीरयन्। प्रपृश्चित्वश्वा भुवंनानि पूर्वथा। आ केतुना सुषंमिद्धो यिजेष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंर्य दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बंहुलां गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंद्मृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद ससा। पूषा रक्षतु नो र्यिम्॥१६॥

ड्मां यज्ञमिश्वनां वर्धयंन्ता। ड्मो रियं यजंमानाय धत्तम्। ड्मो पृश्नत्रंक्षतां विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सृत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं ते हृव्यं घृतवंथ्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १षि। ड्मानि ते दुरिता सौभंगानि। तेभिव्य १ सुभगांसः स्याम॥१७॥

वुज्यहींनामृजीषं व्यृण्वित रक्षतु नो र्यि सौभंगान्येकं च॥———[४]

युज्ञो रायो युज्ञ ईशे वसूनाम्। युज्ञः सस्यानांमुत सुंक्षितीनाम्। युज्ञ इष्टः पूर्विचित्तिं दधातु। युज्ञो ब्रह्मण्वा अप्येतु देवान्। अयं युज्ञो वर्धतां गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरौ। इदं बर्हिरिते बर्ही इप्यन्या। इमं युज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भर्ग एव भर्गवा अस्तु देवाः। तेनं वयं भर्गवन्तः स्याम॥१८॥

तं त्वां भग सर्व इज्ञोंहवीमि। स नों भग पुरप्ता भंवेह। भग प्रणेतर्भग सत्येराधः। भगेमां धियमुदंव ददेन्नः। भग प्र णो जनय गोभिरश्वैः। भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। शश्वेतीः समा उपयन्ति लोकाः। शश्वेतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्तर शश्वेतीनार् समानार शाश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं पर्मा रुरोह॥१९॥

इयमेव सा या प्रंथमा व्यौच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्चं देवी। द्वे स्वसारौ वयतस्तन्नंमेतत्। सुनातनं वितंतु १ षण्मयूखम्। अवान्या १ स्तन्तूंन्किरतो धृत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गंमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्या वृष्टिं ये विश्वे मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः सिमद्धः। पृतं जुंषध्वं कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मुरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तिविषेभि-रूर्मिभिः। अग्नयो न शुंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसं नीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पिति सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिं दम् आ दीदिवा सम्। हिरंण्यवर्णमरुष संपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्ध्यः॥२१॥

हिरंण्यवाशीरिषिरः सुंवर्षाः। बृह्स्पतिः स स्वांवेश ऋष्वाः। पूरू सर्खिभ्य आसुतिं करिष्ठः। पूष्ड् स्तवं व्रवे व्रवम्। निरंष्येम कृदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तिशे चरंन्ति। याभिर्यासि दूत्या स्त्रं सूर्यस्य। कामेन कृतश्रवं इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती (३)। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिंरिव धावयन्। अरुण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेव दृश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। शुक्टीरिव सर्जित। गामुङ्गेषु आ ह्वयति। दार्वुङ्गेषु उपावधीत्। वसंत्ररण्यान्याः सायम्। अर्जुक्षुदितिं मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हिन्ति। अन्यश्चेत्राभिगच्छेति। स्वादोः फलस्य ज्ञग्ध्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्जनगन्धीः सुर्भीम्। बह्बुत्रामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणौं मातरम्। अर्ण्यानीमंशः सिषम्॥२४॥

स्याम् रुरोह् युवानः शुन्ध्यूरिच्छमानो दृश्यते निपंद्यते चत्वारि च॥————[५]

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वर्तयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबुंध्रमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यंं चित्रं वृषंण र्ियं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वरुंणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवं ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्भिरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शम्नतरिक्षः सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशंः। वातंपत्नीर्भि सूर्यों विच्छे। तासाँ त्वा ज्रस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं परा्चैः। अमोचि यक्ष्मांदुरितादवंत्ये॥२६॥

अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यमृतं तमसो ग्राह्या यत्। देवा

द्रुहः पाशान्निर्ऋत्यै चोदंमोचि। अहा अवंर्तिमविंदथ्स्योनम्।

अमुंश्चन्नसृंजन्न्येनसः। एवम्हम्मिमं क्षेंत्रियाञ्जांमिश्र्भात्। द्रुहो मुंश्चाम् वरुंणस्य पाशांत्। बृहंस्पते युविमन्द्रंश्च वस्वः। दिव्यस्येशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तः रियः स्तुवते कीरयेंचित्॥२७॥

यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधमिन्द्रमा जोह्वानाः। विश्वावृधम्भि ये रक्षमाणाः। येनं ह्ता दीर्घमध्वांनमायन्। अनन्तमर्थमिनविध्स्यमानाः। यत्ते सुजाते

क्नन्येव शुभ्रे॥२८॥ तां त्वा मुद्गेला हुविषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भाजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः

हिमवंथ्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोसिं। ततों नो देहि

सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावसि। स॰शोर्भमाना

पराणि। वेदांनि देवा अयम्स्मीति माम्। अहर हित्वा शरीरं जर्मः प्रस्तात। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्। वाचं मनिस् सम्भृताम्। हित्वा शरीरं ज्रसः प्रस्तात। आ भूतिं भूतिं व्यमंश्ववामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्यौच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चंरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गंमन्त्यन्तम्॥२९॥

क्रोम्यवंत्र्ये चिच्छुभ्रेऽश्ञवामहै चृत्वारि च॥———[६]

वसूनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजंसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभिभूतिरहमागंमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमागांत। यशो भर्गः सह ओजो बलं च॥३०॥

दीर्घायुत्वायं श्तशांरदाय। प्रतिंगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुंरिस विश्वायुंरिस। सर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। सर्वं म् आयुंर्भूयात्। सर्वमायुंर्गेषम्। भूर्भुवः सुवंः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नपतिः। ब्रह्मं क्ष्त्रङ् स्वाहाँ॥३१॥ प्रजापंतिः प्रणेता। बृहस्पतिः पुरण्ता। युमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंत्रादोऽत्नंपितः। अन्नाद्यंमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजंपितः। राज्यमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। वरुणः सम्राट्थ्सम्रादंतिः। साम्राज्यमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां॥३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपितः। बलंमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। बृहस्पतिर्ब्रह्म ब्रह्मंपतिः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातुं स्वाहां। सुविता राष्ट्र राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विद्वंतिः। विशंमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातुं स्वाहां। सरंस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमुस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहाँ। त्वष्टां पशूनां मिथुनाना र रूपुकृद्रूपपंतिः। रुपेणास्मिन् यज्ञे यजमानाय पशून्दंदातु स्वाहां॥३३॥ च स्वाह्य साम्रांज्यम्स्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाह्य विशंमुस्मिन् युज्ञे यजंमानाय ददातु स्वाहां चृत्वारिं च (अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रो बृहुस्पतिः सिवृता पूषा सर्रस्वती त्वष्टा

स ईं पाहि य ऋंजीषी तरुंत्रः। यः शिप्रवान्वृष्भो यो

मंतीनाम्। यो गौंत्रभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स इंन्द्र चित्रारं अभि तृंन्धि वाजान्। आ ते शुष्मों वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तांत्। आ विश्वतों अभिसमेंत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्नरं सुर्वर्वद्वेद्यस्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीके चिद् लोककृत्। सङ्गे समर्थ्सं वृत्रहा। अस्माकं बोधि चोदिता। नभंन्तामन्यकेषाम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय श्रुंनासीरम्। अस्मिन् यज्ञे हंवामहे। आ वाजै्रुपं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। सुचा जुंहुत नो हुविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र ह्व्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता स्जोषाः। इन्द्र्तुभिर्ब्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी ह्विरिदं जुंषस्व। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयंऽव बद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजंनयन्नृतावृधंः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुल्पिरिमापतन्ति। अनावृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंर्णं चक्षुंस्तुनुवां विदेय। एवा वंन्दस्व वरुणं बृहन्तम्। नमस्याधीरममृतंस्य गोपाम्। स नः शर्म त्रिवरूथं वियर्सत्॥३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नार्के सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रुणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुरुण्युम्। शं नो देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीत्रयें। शं योर्भि स्नवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अपसु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपंश्च विश्वभेषजीः। यद्पसु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमिङ्गि सरस्वति। या सरस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्टभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंकुकुञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा

मनंसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपितिष्ठे। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणि। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सीद स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जायंमानः सक्षय एहिं। उपावंरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों ह्व्यं वह नः प्रजानन्। आयुः प्रजा॰ र्यिम्स्मासुं धेहि। अजंस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि म्घवानमुग्रम्। स्त्रा दधानमप्रतिष्कुत् शवा॰ सि। म॰ हिष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियों ऽव्वर्तत्। राये नो विश्वां सुपथां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन र सश्चद्वेवं देवः स्त्यिमिन्दु र स्त्य इन्द्रंः। विद्यतीं स्रमां रुग्णमद्रैः। मिह् पार्थः पूर्व्य सिद्ध्यंकः। अग्रं नयथ्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जान्तीगौत्। विदद्गव्य र्सरमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजंते विट्। आ ये विश्वाः स्वपत्यानिं चुकुः। कृण्वानासों अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृपते देवहूंतौ॥४३॥

भूरीणि वृत्वा हंर्यश्व ह॰सि। त्वन्निदंस्युश्चमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो दुभीतंये सुहन्तुं। एवा पांहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रू॰ रिभे गा इन्द्र तृन्धि। अग्रे बार्धस्व वि मृधों नुदस्व। अपामीवा अप रक्षा॰सि सेध। अस्माध्संमुद्राह्मंहतो दिवो नंः॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतिं तिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वां। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अथामृतेन जिर्तारमिङ्घा। इन्द्रंः शुनावृद्धितंनोति सीरम्। संवृथ्सरस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिददांस ज्येष्ठम्। संवृथ्सर् शुनवृथ्सीरमेतत्। इन्द्रं स्य राधः प्रयंतं पुरु तमना। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतिं तिष्ठतीद्वृषां। अश्वायन्तों गृव्यन्तों वाज्यंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिंन्द्र

त्वा शुन॰ हुंवेम॥४५॥

अर्चृत् हुविर्गायत यश्सचर्षणीनां वैशम्भुल्या हांसीत्त्वमुरुं देवहूंतौ नुस्त्मना षद्वं॥——[८]

प्राण उदेहि पुन्रा नों भर युज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वसूना १ स ई पाह्यष्टौ॥८॥ प्राणो रेक्षत्यगृंभीता धारावरा मुरुतों दीर्घायुत्वाय ज्योतिषा त्वा पश्चंचत्वारि १ शत्॥४५॥ प्राणः शुन् १ हुंवेम॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणं। अमृतांममृतेन। मधुंमतीं मधुंमता। सृजामि स॰ सोमेन। सोमौऽस्यिश्यौं पच्यस्व। सरंस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ हविः॥१॥

द्धन्वा यो नर्यो अपस्वंन्तरा। सुषाव सोम्मिद्रिभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण शश्वंता तना। वायुः पूतः पवित्रेण। प्राङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखा। वायुः पूतः पवित्रेण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतः॥२॥

इन्द्रंस्य युज्यः सखाँ। ब्रह्मं क्ष्रंत्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमः सुत आसुंतो मदाय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनात्रं यजंमानाय धेहि। कुविदङ्ग यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं वियूयं। इहेहैंषां कृणुत भोजंनानि। ये बर्हिषो नमोवृक्तिं न जग्मुः। उपयामगृंहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥ सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णें। एष ते योनिस्तेजंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलाय त्वा। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मियं धेहि। बलंमिस बलं मियं धेहि। नाना हि वां देवहिंत्र सदंः कृतम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥

उपयामगृहीतोऽस्याश्विनं तेजः। सार्स्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदांय त्वा। आनन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मन्युरंसि मन्युं मियं धेहि। महोऽसि महो मियं धेहि। सहोऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतित्रणर्थं सिर्हम्। सेमं पात्वर्श्हंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भुद्रेणं पृङ्का विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्का। ५॥

ह्विः प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतो गृह्णाम्याविषान्विषूंचिका पश्चं च॥———[१]

सोमो राजाऽमृत र सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। विपान र शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोमम्द्र्यो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। अद्भः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥ त्रुङ्कः क्षिर्सो धिया। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। अन्नात्पिर्सुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यंपिबत् क्ष्त्रम्। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशिदिन्द्रियम्। गर्भो ज्रायुणाऽऽवृंतः। उल्बं जहाति जन्मना। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। स्तास्ती प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। सोमेन सोमो व्यंपिबत्। सृतासृतौ प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। सृत्यानृते प्रजापंतिः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धा स्त्ये प्रजापंतिः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धा स्त्ये प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा पंरिस्रुतो रसम्। श्रुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। विपान १ श्रुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मध्॥८॥

अद्यः क्षीरं व्यंपिव्जनमंनुर्तेनं स्त्यमिन्द्रियः श्रृद्धाः स्त्ये प्रजापंतिर्ष्टौ चं॥——[२]
स्रांवन्तं बर्हिषदः सुवीरम्। यज्ञः हिन्वन्ति
महिषा नमोभिः। दधानाः सोमं दिवि देवतासु। मदेमेन्द्रं
यजमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमस्य
शुष्मः सुरया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन।

सरंस्वतीमृश्विनाविन्द्रंमृग्निम्। यमृश्विना नमुंचेरासुरादिधं। सरंस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

ड्मन्तर शुक्रं मध्रमन्तमिन्दुम्। सोम्र राजानिम्ह भक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचीभिः। अहं तदंस्य मनसा शिवनं। सोम्र राजानिम्ह भक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। अक्षंन्पितरः॥१०॥

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त पितरंः। पितरः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। प्वित्रेण श्तायुंषा। पुनन्तुं मा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण श्तायंषा। विश्वमायुर्व्यश्यवै। अग्न आयू श्रिष पवसेऽग्ने पर्वस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तं मा देवजनाः। जातंवेदः प्वित्रंवद्यत्तं प्वित्रंमर्चिषि। उभाभ्यां देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समनसः। पितरो यम्राज्यें। तेषां लोकः स्वधा नमः। युज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं माम्काः। तेषा्ष् श्रीमीयं कल्पताम्। अस्मिँ छोके शतः समाँः। द्वे स्रुती अश्वणवं पितृणाम्। अहं देवानांमृत मर्त्यांनाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेज्ञथ्समेति। यदंन्तरा पितरं मातरं च। इदः ह्विः प्रजनंनं मे अस्तु। दशंवीरः सर्वगंणः स्वस्तयै। आत्मसनिं प्रजासनिं। पृशुसन्यंभयसनिं लोक्सिनं। अग्निः प्रजां बहुलां में करोतु। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्स्मासुं दीधर्थ्स्वाहाँ॥१३॥

इन्द्रियायं पितरंः शतायुंषा पुनन्तुं मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः कल्पताः स्वस्तये पश्चे

इन्द्रियाय प्रितरः श्रेतायुषा पुनन्तु मा पितामृहाः पुनन्तु प्रापतामहाः कल्पताङ् स्वस्तयं पञ्च

सीसेन तत्रुं मनंसा मनीषिणः। ऊर्णासूत्रेणं क्वयों वयन्ति। अश्विनां यज्ञश् संविता सरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपं वरुणो भिष्ज्यन्। तदंस्य रूपम्मृत्श् शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः सश्रगणाः। लोमानि शष्पैंबंहुधा न तोक्मंभिः। त्वगंस्य माश्समंभवन्न लाजाः। तदश्विनां भिषजां रुद्रवंतनी। सरंस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थि मृज्ञानं मासंरैः। कारोतरेण दर्धतो गवाँ त्वचि। सरंस्वती मनसा पेशलं वस्। नासंत्याभ्यां वयति दर्शतं वर्पः। रसं परिस्रुता न रोहितम्। नृग्रहुर्धीर्स्तसंर्न्न वेमं। पर्यसा शुक्रमृमृतंं जनित्रम्। सुरंया मूत्रांज्ञनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मृतिं बार्थमानाः। ऊर्वध्यं वातर्रं सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रंः सुत्रामा हृदंयेन स्त्यम्। पुरोडाशेन सिवता जंजान। यकृत्क्रोमानं वर्रणो भिष्ज्यन्। मतंस्रे वाय्व्यैर्न मिनाति पित्तम्। आन्नाणि स्थाली मधु पिन्वंमाना। गुदा पात्राणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्रीहा शचींभिः। आस्नदी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो विनिष्ठुर्जनिता शचींभिः। यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः शतधार उथ्सः। दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यः। मुख्य सदस्य शिर् इथ्सदेन। जिह्वा पवित्रमिश्विना सर् सर्रस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालः। वस्तिर्न शेपो हर्रसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुर्मृतं ग्रहाभ्याम्। छागेन् तेजो ह्विषां शृतेनं। पक्ष्माणि गोधूमैः क्रेलेरुतानिं। पेशो न शुक्रमसितं वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो नसि वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वत्युपवाकैंर्व्यानम्। नस्यांनि बर्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्भो बलांय। कर्णांभ्याङ् श्रोत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न बर्हिर्भुवि केसंराणि। कर्कन्धं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूंणि न व्यांघ्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रिये शिखाँ। सिर्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिजा तद्श्विनाँ। आत्मान्मङ्गैः सम्धाथ्मरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपर् श्तमान्मायुः। चन्द्रेण ज्योतिर्मृतं दर्धाना। सरंस्वती योन्यां गर्भम्नतः। अश्विभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपार् रसेन् वरुणो न साम्नाँ। इन्द्र्रं श्रिये जनयंत्रपस् राजाँ। तेर्जः पश्नार ह्विरिन्द्रियावत्। परिस्रुता पर्यसा सार्घं मधुं। अश्विभ्याँ दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्याँम्। अमृतः सोम् इन्दुः॥१९॥

अन्तर आरादन्तर्वसाते व्याघ्रलोम राजां चुत्वारि च॥—————[४]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसि। समहं विश्वैर्देवैः। क्षुत्रस्य नाभिरिसे। क्षुत्रस्य योनिरिसे। स्योनामा सीद। सुषदामा सीद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः। पस्त्यांस्वा॥२०॥

साम्राज्याय सुऋतुंः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चुसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरंस्वत्यै भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायात्राद्यांयाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्ते। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रंस्येन्द्रियेणं। श्रिये यशंसे बलांयाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मैं त्वा कायं त्वा। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंग्जा(३)न्। शिरो मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ं। त्विषिः केशांश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणों-ऽमृतम्। सम्राद्वक्षुंः। विराद्धोत्रम्। जिह्वा में भद्रम्। वाङ्गहंः। मनों मृन्युः। स्वराङ्कामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥ चित्तं मे सहंः। बाहू मे बर्लमिन्द्रियम्। हस्तौ मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदर्म १ सौ। ग्रीवाश्च श्रोण्यौ। ऊरू अंरुब्री जानुंनी। विशो मेऽङ्गांनि सुर्वतंः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥ २४॥

आन्नन्द्नन्दावाण्डौ में। भगः सौभांग्यं पसंः। जङ्घांभ्यां पद्मां धर्मोऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रति क्षुत्रे प्रति तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्चेषु प्रति तिष्ठामि गोष्। प्रत्यङ्गेषु प्रति तिष्ठाम्यात्मन्। प्रति प्राणेषु प्रति तिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावांपृथिव्योः। प्रति तिष्ठामि यज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सिवृतुः स्वे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयांस्तृतीयैः। तृतीयाः स्त्येनं। स्त्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुंभिः॥२६॥

यजूरेषि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचों याज्यांभिः। याज्यां वषद्वारेः। वृषद्वारा आहुतिभिः। आहुतयो मे कामान्थ्समेधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिर्ममं। त्वङ्म आनंतिरागंतिः। मार्सं म् उपनितः। वस्वस्थि। मुज्जा म् आनंतिः॥२७॥

पुस्त्यांस्वा सरंस्वत्ये भेषंज्येन श्रीरङ्गांनि भुसद्यज्ञे युज्ञो यर्जुर्भिरुपंनितिर्द्वे चं॥———[$oldsymbol{arphi}$]

यद्देवा देव्हेर्डनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हेसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना १ सि चकृमा वयम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नें। एना १ सि चकृमा वयम्॥ २८॥

सूर्यो मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्रुत्व १ हंसः। यद्गामे यदरंण्ये। यथ्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्यें। एनश्चकृमा वयम्। यदेकस्याधि धर्मणि। तस्यांवयजंनमसि। यदापो अप्निया वरुणेति शपामहे। ततो वरुण नो मुश्रा २९॥ अवंभृथ निचङ्कण निचे्ररंसि निचङ्कण। अवं देवैर्देवकृतमेनोंऽयाट्। अव मर्त्यूर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। द्रुपदादिवेन्म्ममुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥ पूतं प्वित्रेणेवाऽऽज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्वयं तमंस्रस्परिं। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिरुत्तमम्। प्रतियुतो वर्रुणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वर्रुणस्य पाशः। एधौऽस्येधिषीमहिं। समिदंसि॥३१॥

तेजोऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन् समंसृक्ष्मिहि। पर्यस्वाः अग्न आगंमम्। तं मा सःसृंज् वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंवर्ति पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगंत्। वृश्वान्रज्योंतिर्भूयासम्। विभुं कामं व्यंश्ववै। भूः स्वाहां॥३२॥

स्वप्न एनारंसि चकृमा वयं मुंश्च मलांदिव सुमिदंसि जगुत्रीणिं च॥————[६]

होतां यक्षथ्समिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्म्नश्सिम्ध्यते। ओजिंष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तत्तनूनपातम्। ऊतिभिर्जेतांर्मपंराजितम्। इन्द्रं देव॰ सुंवर्विदम्ं। पृथिभिर्मधुंमत्तमैः। नराश॰सेन् तेजंसा॥३३॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्विदडांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांनुममंर्त्यम्। देवो देवैः सवींर्यः। वज्रंहस्तः पुरन्द्रः। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्मं नर्यापसम्। वसुंभीरुद्रैरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बृहरा-संदत्॥३४॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रदोजो न वीर्यम्ं। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रंयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्रांय मीदुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुघं मातरौं मही। सवातरौ न तेजंसी। वथ्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्दैच्या होतांरा। भिषजा सर्खाया। ह्विषेन्द्रं भिषज्यतः। क्वी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सरंस्वती भारती॥३६॥

महीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्ञं स्युयजं घृत्तिश्रयम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितारं श्वतंत्रत्म्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥
मध्यां सम्अन्यथिभिः सुगेभिः। स्वदांति हव्यं मधुना

घृतेनं। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्विन्द्र स्वाहा-ऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहां स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा श आंज्यपान्। स्वाहेन्द्र होत्राञ्जंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होत्यंजं॥३८॥

तेजंसाऽऽसददवर्धतां भारंतीन्द्रियं जुंषाणा हे चं (स्मिधेन्द्रन्तनूनपांत्मिडांभिर्बुर्हिष्योजं उषे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वनस्पतिमिन्द्रम्॥ स्मिधेन्द्रं चतुर्वेत्वेकां वियन्तु हिर्वीतामेकां वियन्तु हिर्वेत्वेकां वियन्तु होत्र्यंजं॥)॥————[७]

सिमंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रिर्शता वर्ज्ञंबाहुः। ज्ञ्यानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराशरसः प्रतिशूरो मिमानः। तनूनपात्प्रतिं यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मधुंना सम्अन्। हिरंण्यैश्चन्द्री यंजित प्रचेताः। ईडितो देवैरहरिवार अभिष्टिः। आजुह्वांनो हिवषा शर्धमानः॥३९॥

पुरन्दरो मघवान् वर्ज्ञबाहुः। आयांतु यज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो बर्हिर्हरिवान्न इन्द्रेः। प्राचीनर्र सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथंमानः स्योनम्। आदित्यैर्क्तं वर्सुभिः सजोषाः। इन्द्रं दुरेः कवृष्यो धावमानाः। वृषाणं यन्तु जनयः सुपर्लीः। द्वारो देवीर्भितो विश्रयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथमाना महोभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्ं। पर्यस्वती सुदुधे शूरिमन्द्रम्ं। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुक्ते। देव्या मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुंना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिर्ह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर्ह्विषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नं तन्तुं पर्यसा सरेस्वती। इडां देवी भारती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दध्दिन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिष्टुर्यशसे पुरूणि। वृषा यजन्वृषणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्त देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छंमिता न देवः। इन्द्रंस्य ह्व्यैर्ज्ठरं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मधुना घृतेनं। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतप्रुषा मधुना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता्ड् स्वाहां॥४२॥

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। तर स्प्रीचींः। सृत्यमित्तन्न त्वावारं अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अह्न्निहं पिर्शयांन्मणिः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत् शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरस्तु। इन्द्रा भेर दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूनामिस रेवतींनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्स्मे। मिहं क्ष्रृतं जनाषाडिन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो म्घोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वपत्या इषे धाः॥४३॥

रेवर्तीनां चुत्वारिं च॥———[९]

देवं बर्हिरिन्द्र रं सुदेवं देवैः। वीरवंथ्स्तीणं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया बर्हिष्मतोऽत्यंगात्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र रं सङ्घाते। विङ्वीर्यामंन्नवर्धयन्। आ वथ्सेन् तरुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटं नुदन्ताम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्द्रं यज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य

वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुंधिती। देविमन्द्रमवर्धताम्। अयांव्यन्याघा द्वेषा १सि। आन्यावांक्षीद्वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघे सुदुधै। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इषुमूर्जमन्याऽवाँक्षीत्। सग्धिर

सपीतिम्न्या। नवेन् पूर्वं दयमाने। पुराणेन् नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहुंती वसु वार्याणि। यजमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंश रसावा-भांष्टां वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृक्षद्भारती दिवम्। रुद्रैर्यज्ञ र सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशरसंः। त्रिव्रूथस्निवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। शतेनं शिति-पृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवर्तते। मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पतिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वर्यवम्।

वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यर्ज॥४८॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपर्णो मधुंशाखः सुपिप्पलः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिव्मग्रंणाप्रात्। आऽन्तिरक्षं पृथिवीमंद्दश्तित्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिवीरितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वासस्थिमिन्द्रेणा-संन्नम्। अन्या बर्ही इष्यभ्यंभूत्। वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्विन्थ्स्वंष्टकृत्। स्विष्टम्द्यं करोतु नः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४९॥

वियन्तु यर्ज शिक्षिते शिक्षिते वंसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज गृहान् वेतु यर्जाभृथ्यद्वं (देवं ब्रुहिर्देवीद्वारी देवी उपासानक्तां देवी जोष्ट्री देवी ऊर्जाहंती देवा दैव्या होतांरा शिक्षितौ देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नराशक्सी देव इन्द्रो वनस्पतिर्देवं ब्रुहिर्वारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टकृद्देवम्। वेतु वियन्तु चतुर्वीतामेको वियन्तु चतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयन्त्रिरंवर्धतामेकोऽ वर्धयक्ष्युत्तरंवर्धयत्। वस्तोरा वथ्सेन् दैवीरयावीष्ह्रंहताऽस्पृक्षच्छतेन् दिवक्षं स्वासस्थक्ष् स्विष्टक्षेत्र शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते॥)॥————[१०]

होतां यक्षथ्समिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्र १ सर्रस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्वंलैर्भेषजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्तत्तनूनपाथ्सरंस्वती। अविर्मेषो न भेषुजम्। पथा मधुंमृताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदंरैरुप्वाकांभिर्भेषुजं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षं नराशक्सं न नग्नहुम्ं। पतिक् सुरांये भेषजम्। मेषः सरंस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनौर्वपा इन्द्रंस्य वीर्यम्ं। बदंरैरुप्वाकांभिर्भेषुजं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होतर्यजं॥५१॥

होतां यक्षिद्दिडेडित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋष्भेण गर्वेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धुंभिः। मधुं लाजैर्न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हः सृष्टरीमोर्णम्रदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्दुरो दिशः। कृवृष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुघैं। दुहे कामान्थ्सरस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्द्दैव्या होतांरा भिषजाऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषुजैः। शूष्ट्रं सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षित्तिस्रो देवीर्न भेषुजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिनद्रें हिर्ण्ययम्॥५५॥

अश्विनेडा न भारंती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मिन्द्रम्श्विनां। भिषजं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभुसो भिषक्। यशः सुरंया भेषुजम्॥५६॥ श्रिया न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्ं। श्रामितार श्रे श्रतक्रंतुम्। भीमं न मृन्यु राजांनं व्याघ्रं नमंसाऽश्विना भामम्। सरंस्वती भिषक्। इन्द्रांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५७॥

होतां यक्षद्गिः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहा मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्वभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरंस्वत्ये। स्वाहंर्षभिनद्रांय सिःश्हाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषजम्। स्वाहा सोमीमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामाणः सिवतारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पितं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्॥५८॥

स्वाहाऽग्नि होत्राञ्जुंषाणो अग्निर्भेषजम्। पयः सोमंः पिर्स्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजे। होतां यक्षदिश्वना सरंस्वतीमिन्द्र स्तुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भैः सुताः। शष्पैर्न तोकांभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुक्राः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्चृतः। तानिश्वना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ता सौम्यं मधुं। पिबंन्तु

मदंन्तु वियन्तु सोमम्। होतुर्यजं॥५९॥

बीर्यं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंज् नासंत्या सरंस्वती मधुं हिर्ण्ययं भेषुजं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजांज्यपानमृताः पश्चं च (स्मिधाऽग्नि॰ षट्। तनूनपांथ्सप्ताः नराश्चःसमृषिः। इडेडितो यवैर्ष्टोः। बर्हिः सप्ताः दुरोऽश्विना नवं। सुपेश्सर्षिः। देव्या होतांरा सीसेन रसंः। तिस्रस्त्वष्टांरमृष्टांवेष्टोः। वनस्पतिमृषिः। अग्निश्चयोदशः। अश्विना द्वादंश त्रयोदशः। स्मिधाऽग्निं वदंरै्वंदंरै्यंवैर्श्विना त्विषिमृश्विना न भेषुज॰ रूपमृश्विनां भीमं भामम्॥॥॥———[११]

सिमिंद्धो अग्निरंश्विना। तृप्तो घूर्मो विराद्थ्सुतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोमर् शुक्रमिहेन्द्रियम्। तृनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजारसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिर्वहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नग्नहुं:॥६०॥

अधांताम्श्विना मधुं। भेषुजं भिषजां सुते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरश्विनाविषम्। समूर्जुर् सर र्यिं दंधुः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोमर्श्रकुं पंरिस्नुतां। सरंस्वती तमाभंरत्। बुर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥

क्वष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधैं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती। उषासा नक्तंमिश्वना। दिवेन्द्र रं सायिमेन्द्रियैः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवाँ। पाहि नक्त रं सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्रेधा सरंस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं परिस्रुता सोमम्ँ। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्ँ। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजं नः सरंस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्ँ। रूप र रूपमधुः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शशमानः परिस्रुताँ। कीलालंमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनुः सरंस्वती। गोभिर्न सोममिश्वना। मासंरेण परिष्कृतां। समधाता सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रें सुतं मधुं॥६३॥

नुम्रहुः पातंवे सरस्वत्यधुः सुतैंऽष्टौ चं॥———[१२]

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरेस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्रांय जभिरे। यमश्विना सरेस्वती। ह्विषेन्द्रमवर्धयन्। स बिंभेद वुलं मुघम्। नमुंचावासुरे सर्चां। तमिन्द्रं पृशवः सर्चां। अश्विनोभा सरेस्वती॥६४॥

दर्धाना अभ्यंनूषत। ह्विषां यज्ञिमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियं द्धुः। स्विता वर्रुणो भगः। स सुत्रामां ह्विष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। स्विता वर्रुणोऽदर्धत्। यजमानाय दाशुषें। आदंत्त नमुंचेर्वस्ं। सुत्रामा बलंमिन्द्रियम्॥६५॥ वरुणः क्षत्रिमेन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्। सुत्रामा यशंसा बलम्। दधांना यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्वेभिर्वीर्यं बलम्। हिवषेन्द्रक्ष सरेस्वती। यजमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नर्गं। सरेस्वती हिवष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुदुधा सरेस्वती। स वृत्रहा शतकंतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥

उभा सरंस्वती बलंमिन्ड्रियत्रग् षद्वं॥———[१३]
देवं बुर्हिः सरंस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनां। तेजो न
चक्षुंर्क्ष्योः। बुर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वस्वनं वसुधेयंस्य
वियन्तु यर्जा। देवीर्द्वारों अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती।

प्राणं न वीर्यन्निस। द्वारों दधुरिन्द्रियम्। वृसुवनें वसुधेयंस्य

वियन्तु यजं॥६७॥

देवी उषासांविश्विनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलं न वार्चमास्यां। उषाभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवी जोष्ट्री अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशः। जोष्ट्रीभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेर्यस्य वियन्तु यर्ज॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघे सुदुघें। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवा देवानां भिषजां। होतांराविन्द्रंमश्विनां। वषद्भारेः सरंस्वती। त्विष्ं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्रस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषत्र मध्ये नाभ्याँम्। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशश्संः। त्रिवरूथः सर्रस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपम्मृतं जनित्रम्ं। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥

देव इन्द्रो वनस्पितिः। हिरंण्यपर्णो अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पृतः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृष्भो न भामम्। वनस्पितिनीं दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जा। देवं ब्र्हिर्वारितीनाम्। अध्वरे स्तीर्णमुश्विभ्याम्। ऊर्णम्रदाः सरंस्वत्याः॥७१॥

स्योनिमंन्द्र ते सदंः। ईशायैं मृन्यु राजांनं बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देवान् यक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच् सरंस्वतीम्। अग्नि सोम इं स्विष्टकृत्। स्विष्ट इन्द्रंः सुत्रामां सिवृता वर्रुणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आंज्यपाः। इष्टो अग्निर्ग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दर्धदिन्द्रियम्। ऊर्ज्मपंचिति इं स्वधाम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दध्रिन्द्रियं वंसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रीभ्यां दध्रिन्द्रियं वंसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंभ्यां दध्रिन्द्रियं वंसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज्रं होतृंभ्यां दध्रिन्द्रियं वंसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यज्रं सरंस्वत्या वनस्पितिः षद्वं (देवं ब्र्हिद्वेवीद्वारों देवी उषासांवृश्विनां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहंती देवा देवानां भिषजां वषद्वारैद्वेवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीद्वं इन्द्रो नराशश्सों देव इन्द्रो वनस्पितिंदुंवं ब्रुहिवारितीनान्देवो अग्निः स्विष्टुकृद्देवान्। स्मिधाऽग्निं देवं ब्रुहिः सरंस्वत्यश्विना सर्वं वियन्तु। द्वारंस्तिस्रः सर्वंवियन्तु। अज इन्द्रमोजोऽग्निं परः सरंस्वतीम्। नक्तं पूर्वः सरंस्वति। अन्यत्र सरंस्वती। भिषक्पूर्वं दह इन्द्रियम्। अन्यत्रं दध्रिन्द्रियम्। सोत्रामण्याश् संतासुती। अञ्चन्त्ययं यज्ञंमानः॥)॥——[१४]

अग्निम् होतांरमवृणीत। अय संतासुती यर्जमानः। पर्चन्प्त्तीः। पर्चन्पुरोडाशान्। गृह्णन्ग्रहान्। बुध्नन्निभ्यां छागु सरंस्वत्या इन्द्रांय। बुध्नन्थ्सरंस्वत्ये मेषिनन्द्रांयाश्वि-भ्यांम्। बुध्निन्द्रांयर्षभम्श्विभ्या सरंस्वत्ये। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्यां छागेन सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्यै मेषेणेन्द्रांयाश्विभ्यांम्। इन्द्रांयर्षभेणाश्विभ्या ५ सरंस्वत्यै। अक्ष इस्तान्में दस्तः प्रतिपचताग्रंभीषुः। अवीवृधन्तु ग्रहैं। अपातामुश्विना सरंस्वृतीन्द्रंः सुत्रामां वृत्रुहा। सोमान्थ्युराम्णः। उपो उक्थामुदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवींवृधन्ताङ्ग्षैः। त्वाम् द्यर्षं आर्षेयर्षीणान्नपादवृणीत। अय स्रुतासुती यजमानः। बहुभ्य आ सङ्गतेभ्यः। एष मे देवेषु वसु वार्या येक्ष्यत् इति। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यंस्मा आ च शास्वं। आ चं गुरस्व। इषितश्चं होत्रसीं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुंषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥७४॥ इन्द्रोय यजेमानः सप्त चे॥

उ्शन्तंस्त्वा हवामह् आ नों अग्ने सुकेतुनाँ। त्वर सोंम महे भगुं त्वर सोंम् प्रचिंकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरं सोम् पूर्वे त्व सोम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपहूताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशक्से सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शं चतुष्पदे। ये अग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥

अरहोमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अंवन्त्वस्मान्। वान्यांयै दुग्धे जुषमांणाः करम्भम्। उदीरांणा अवंरे परें च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिंः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो हविरिदं जुंषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली कव्यैः। ये तांतृपुर्देवत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेंभिर्वाङ्। सत्यैः कुव्यैः पितृभिर्घम्सिद्धेः। हव्यवाहंमुजरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं हविषां सप्यन्। उपांसदं कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वीरवंती ॰ समृंण्वतु॥ ७६॥

अनिग्निष्वात्ता जेहंमानाः सप्त चं॥——[१६]

होतां यक्षदिडस्पदे। समिधानं महद्यशंः। सुषंमिद्धं

वरेण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीं छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षच्छुचिंव्रतम्। तनूनपांतमुद्भिदम्। यं गर्भमदिंतिर्द्धे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ं छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडांभिरीड्यक् सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृथ्सं गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षथ्सुबर्हिषदम्ं। पूषण्वन्तममंत्र्यम्। सीदंन्तं बर्हिषं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीं छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविं गां वयो दधंत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं। होतांयक्ष्रद्यचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्द्रं वयोधसम्। पुङ्किं छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहुं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्यजे। होतां यक्षथ्सुपेशंसे। सुशित्ये बृहती उभे। नक्तोषासा न देर्श्ते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥

पृष्ठवाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्तप्रचेतसा। देवानांमृत्तमं यशः। होतांग् दैव्यां कवी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जर्गतीं छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षत्येशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीर्हिर्ण्ययीः। भारंतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि विभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदं छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्तऋंतुम्। हिरंण्य-पर्णमुक्थिनम्। रशनां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। ककुमं छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्ष्यस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वर्रणं भेषुजं कृविम्। क्षूत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिंच्छन्दसं छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्मं गां वयो दधंत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं॥८३॥

द्धे दर्धहत्वृद्धं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोधस्ं वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं स्प्त चं (इडस्प्दें-ऽग्निङ्गांयत्रीत्र्यविम्ं। श्रुचिंव्रत् श्रुचिंमुण्णिहंन्दित्यवाहम्ं। ईडेन्य् सोमंमनुष्टुमं त्रिवृथ्सम्। स्वर्िह्षदंममृतेन्द्रं बृह्तीं पश्चांविम्। व्यचंस्वतीः सुप्रायुणा द्वारों ब्रह्माणः पृङ्किमिह तुंर्यवाहम्ं। स्पेशंसे विश्वमिन्द्रं त्रिष्टुभं पष्टवाहम्ं। प्रचेतसा स्युजेन्द्रं जर्गतीमिहानुङ्गाहम्ं। पेशंस्वतीस्तिस्रः पितं विराजिमिह धेनुत्र। सुरेतंसन्त्वष्टांर् पृष्टिमिन्द्रं द्विपदंमिहोक्षाण्त्र। श्रुतकंतुं भगमिन्द्रं क्कुभंमिह वृशात्र। स्वाहांकृतीः क्षुत्रमतिंच्छन्दसं बृहदंष्भं गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषं वसु नवं दशेहान्द्रियमृषं नव दश् गां न वयो दर्धदिडस्पदे सर्व वेतु॥)॥——[१७]

सिमंद्धो अग्निः सिमधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविगींवयों दधुः। तनूनपाच्छुचिव्रतः। तनूपाच् सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोर्वयों दधुः। इडांभिरग्निरोड्याः। सोमों देवो अमर्त्यः॥८४॥

अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिव्थ्सो गौर्वयो दधः। सुबर्हिरग्निः पूषण्वान्। स्तीर्णबर्हिरमेर्त्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पश्चाविर्गीर्वयो दधः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिः। पुङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गोर्वयो दधुः॥८५॥

उषे यही सुपेशंसा। विश्वं देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयो दधुः। दैव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रेण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्वान्गौर्वयो दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारंती मुरुतो विशंः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गीर्न वयो दधः। त्वष्टां तुरीपो अद्भंतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधः। श्रमिता नो वनस्पतिः। स्विता प्रस्वन्भगम्। कुकुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधः। स्वाहां यृज्ञं वर्रुणः। सुक्षत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृह्दंष्भो गौर्वयो दधः॥८७॥

अमंर्त्यस्तुर्य्वाङ्गौर्वयो दधुर्विशो वृशा वे्हद्गौर्न वयो दधुश्चत्वारि च॥———[१८]

वसन्तेन्त्नां देवाः। वसंविश्चिवृतां स्तुतम्। रथन्त्रेण् तेजंसा। ह्विरिन्द्रे वयां दधुः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पंश्चद्रशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्ं। ह्विरिन्द्रे वयां दधुः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमें सप्तद्रशे स्तुतम्॥८८॥ वैरूपेणं विशोजंसा। हविरिन्द्रे वयां दधुः। शार्देन्त्नां देवाः। एकवि १ श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्ं। हिविरिन्द्रे वयो दधुः। हेमन्तेन्तुनां देवाः। म्रुतंस्त्रिण्वे स्तुतम्। बलेन् शक्वंरीः सहंः। हिविरिन्द्रे वयो दधुः। शेशिरेण्तुनां देवाः। त्रयस्त्रि १ श्वेऽमृत १ स्तुतम्। सत्येनं रेवतीः क्षुत्रम्। हिविरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥

स्तोमं सप्तद्रशे स्तुतर सहं हिविरिन्द्रे वयो दधुश्वत्वारं च (वस्तेनं ग्रीप्मणं वर्षाभिः

शार्वनं हेम्न्तेनं शैशिरेण पद्याणा——[१९]
देवं बर्हिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायत्रिया
छन्दंसेन्द्रियम्। तेज इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य
वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्द्ववमंवर्धयन्।
उष्णिह्य छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्ठभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥९१॥ देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पृङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वीतां यजं। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वीतां यजं॥९२॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्वयोधसम्। पितृमिन्द्रंमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सो देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वनस्पतिर्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। क्कुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षुत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने अतिंच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षुत्रिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने

वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९४॥

वियुन्तु यर्ज वीतां यर्ज वीतां यर्ज वेतु यर्ज वेतु यर्ज वेतु यर्ज पश्च च (देवं ब्र्हिर्गायित्रिया तेर्जः। देवीद्वर्षि उण्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अंनुष्टभा वाचम्। देवी जोष्ट्रीं बृहत्या श्रोत्रम्। देवी ऊर्जाहंती पृङ्क्या शुक्रम्। देवा दैव्या होतांरा त्रिष्टभा त्विषिम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पितं जगत्या बलम्। देवो नराश्यश्मो विराजा रेतः। देवो वनस्पितिर्द्धिपदा भगम्। देवं ब्र्हिवीरितीनां कुकुभा यर्थः। देवो अग्निः स्विष्टकुदितिच्छन्दसा क्षत्रम्। वेतु वियन्तु चृतुर्वीतामेको वियन्तु चृतुर्वैत्ववर्धयदवर्धयश्च्यतुरंवर्धतामेकोऽवर्धयश्च्यतुरंवर्धयत्॥)॥——[२०]

स्वाद्वीं त्वा सोमः सुरांवन्तर् सीसेन मित्रोऽसि यद्देवा होतां यक्षथ्समिधेन्द्रर् सिमंद्ध इन्द्र आचंर्षणिप्रा देवं बर्हिर्होतां यक्षथ्समिधाऽग्निर सिमंद्धो अग्निरंश्विना-ऽश्विनां हिविरिन्द्रियं देवं बर्हिः सरंस्वत्यग्निम्द्योशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे सिमंद्धो अग्निः सिमधां वसन्तेन्त्नां देवं बर्हिरिन्द्रं वयोधसं विरश्वतिः॥२०॥ स्वाद्वीं त्वाऽमीमदन्त पितरः साम्रांज्याय पूतं पवित्रंणोषासानक्ता बदंरैरधांतां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्ठवाहृङ्गां देवी देवं वयोधसं चतुर्नवितिः॥९४॥ स्वाद्वीं त्वां वेतु यज्ञं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृथ्स्तोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। परिस्रजी होतां भवति॥१॥

अरुणो मिर्मिरस्निश्चंत्रः। एतद्वै ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्थे। बृह्स्पतिरकामयत देवानां पुरोधां गंच्छेयमिति। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिस्वनं यजेत॥२॥

पुरोधामेव गंच्छति। तस्यं प्रातः सवने स्त्रेषुं नाराश्र्येषेषुं। एकांदश् दक्षिणा नीयन्ते। एकांदश् माध्यं दिने सवने स्त्रेषुं नाराश्र्येषेषुं। एकांदश तृतीयसवने स्त्रेषुं नाराश्र्येष्ठेष् एकांदश तृतीयसवने स्त्रेषुं नाराश्र्येष्ठेष् त्रयंस्त्रिश्श्र्थसम्पंद्यन्ते। त्रयंस्त्रिश्श्र्दे देवताः। देवतां एवावं रुन्थे। अश्वंश्रतुस्त्रिश्शः। प्राजापत्यो वा अश्वंः॥३॥

प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्शो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता एवावं रुन्थे। कृष्णाजिनेऽभिषिंश्चति। ब्रह्मंणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैन्ष् समर्थयति। आज्येनाभिषिंश्चति। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥

होतां भवति यजेत् वा अश्वां दधाति॥——[१] यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्खा ह्यृद्धिः। अथ् यत्पौष्णः।

पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यस्य। पृष्टिमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणि विकरोतिं। निर्वरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैंश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मारुतो हि वैश्यः। सप्तेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। सप्तगंणा वै मरुतः। पृश्जिः पष्टौही मांरुत्या लभ्यते। विश्वे मरुतः। विश्रं एवैतन्मंध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विश्रो हि मंध्यतोऽभिषिच्यतें। ऋष्भचर्मेऽध्यभिषिंश्वति। स हि प्रंजनियता। द्वाऽभिषिंश्वति। ऊर्ग्व अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवैनंमन्नाद्येन् समंध्यति॥६॥ वारुणो विद्वै मुरुतोऽष्टौ चं॥——[२]

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथ् यथ्मौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायैव सांवित्रः। अथ् यद्वांर्हस्पृत्यः। पृतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पृतीयम्। अथ् यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथ् यथ्सारस्वतः। एति प्रति प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वृरुणत्वायैव वारुणः। अथ् य एव कश्च सन्थ्सूयते। स हि वारुणः। अथ् यद्यावापृथिव्यः। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावापृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भागधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्ञस्य वा पृषोऽनुमानायं। अनुंमतवज्ञः सूयाता इति। अष्टाबेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च्सम्। गायत्रियैव बंह्मवर्च्समवं रुन्धे। हिरण्येन घृतमृत्पुंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिश्चिति। ब्रह्मणो वा एतदंख्सामयो रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मंत्रेवैनंमृख्सामयोरध्यभिषिश्चति। घृतेनाभिषिश्चति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

स्ङ्गच्छेते भाग्धेयेनान्वंमन्येता रूपं चत्वारि च॥———[३]

न वै सोमंन सोमंस्य स्वौंऽस्ति। ह्तो ह्यंषः। अभिषुंतो ह्यंषः। न हि हृतः सूयतें। सौमी स्तृतवंशामा लंभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिंश्चति। रेतोधा ह्यंषा। रेतः सोमः। रेतं एवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राजसूयंमृते सोमम्। तथ्सर्वं भवति। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्पस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा स्सुंक्षिति सुश्रवंसम्। जयंन्तं त्वामनं मदेम सोम॥१०॥

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्टां सूयतें। स मनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वांसार सूयते॥११॥

य पृतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्स्यर्चा-ऽभिषिश्चिति। मनुष्यां वै नराश्र्सः। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्चिति। यित्कं चं राजसूर्यमनुत्तरवेदीकम्। तथ्सर्वं भवित। ये में पश्चाशतंं ददुः। अश्वांनार स्थस्तुंतिः। द्युमदंग्ने मिह् श्रवंः। बृहत्कृंधि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

सूयते स्थस्तुंतिस्रीणि च॥—————[५]

पुष गोस्तवः। षुद्भिष्श उक्थ्यों बृहथ्सांमा। पर्वमाने कण्वरथन्तरं भवति। यो वै वाज्येपयः। स सम्राट्थ्सवः। यो राज्यस्यः। स वंरुणस्वः। प्रजापंतिः स्वाराज्यं परमेष्ठी। स्वाराज्यं गौरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य पृतेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्तरे भंवतः। तिद्धे स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिणाः। तिद्धे स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिंश्चति। तिद्धे स्वारांज्यम्। अनुद्धते वेद्ये दक्षिणत आंहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिंश्चति। इयं वाव रंथन्तरम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोर्वेनमनंन्तर्हितम्भिषिश्चिति। पृशुस्तोमो वा एषः। तेनं गोस्वः। षृद्विर्शः सर्वः। रेवज्ञातः सर्हसा वृद्धः। क्षत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वाराज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। स्वाराज्यमेवैनं गमयति॥१५॥ सिर्हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या रांजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हुस्तिनिं द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विषिरश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्ञानं। सा न आग्नवर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजैं। वाते पूर्जन्ये वरुणस्य शुष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्ञानं। सा न आग्नवर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत ओजंस्वन्तः श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुंष्मत् आयुंष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्। तेजंस्वच्छिरों अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्क्ष्। तेजंसा सम्पिपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥ ओर्जस्वदस्तु में मुखम्ं। ओर्जस्वच्छिरों अस्तु मे। ओर्जस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। ओर्जसा सं पिंपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु में मुखम्ं। पयंस्वच्छिरों अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। पयंसा सं पिंपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ँ। आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ। विश्वं देवा जरंदिष्टर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सूर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरंन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासाः रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवासि गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिंव विश्वतंः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊर्मी रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। पृष्ट्रौ प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तम्हम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

गोष्वोजंस्वन्तः श्रीणाम्योजोंऽसि तत्ते प्रयंच्छामि पर्यसा सम्पिपृग्धि माऽसंद्विभूर्यिज्ञयो रसो द्वे

अभिप्रेहिं वी्रयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपब्हा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्। आतिष्ठन्तं पिर् विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित् स्वरोचाः। महत्तद्स्यासुरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृह्स्पितिः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिंक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुणाविहावंतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिंणा त्वा पिपर्तु। अर्नु स्वधा चिकिता १ सोमों अग्निः। आऽयं पृणक्तु रर्जसी उपस्थम्॥२४॥

उपस्थम्॥२४॥ बृहस्पतिः सोमो अग्निरेकं च॥————[८]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। स एतं प्रजापंतिरोदनमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमविंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंतिन्त। अन्नंमेवैनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंतिन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नांनि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्थे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवेनं गमयति। यद्धिरंण्यं ददांति। तेज्ञस्तेनावं रुन्थे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यं तेनं। यदष्ट्रांम्॥२६॥

पुष्टिं तेने। यत्कंमण्डलुम्। आयुष्टेने। यद्धिरंण्यमा बुध्नाति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेजं एवाऽऽत्मन्धत्ते। यदोद्नं प्राश्ञाति। एतदेव सर्वमवुरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्यां कार्यः। यद्वाँह्मण एव

रोहिणी। तस्मादेव। अथो वर्ष्मैवैन र समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एतर सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यों दर्शनीयों भवति। य एवं वेदं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति॥२८॥

अवेत्योऽवभृथा (३) ना (३) इतिं। यद्र्भपुञ्जीलैः प्वयंति। तथ्स्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। पृभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथो अपां वा एतत्तेजो वर्चः। यद्दर्भाः। यद्दर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। अपामेवैनं तेजंसा वर्चसा-ऽभिषिञ्चति॥२९॥

भ्वन्त्यष्ट्रांमवरुष्यं वदन्ति दुर्भा यद्दर्भपुञ्जीलैः प्वयृत्येकं च॥———[९]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं पंश्रशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनायजता ततो वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयांन्थ्स्यामितिं। स पंश्रशार्दीयंन यजेत। बहोर्व भूयांन्भवति। मुरुथ्स्तोमो वा एषः। मुरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भवति। य एतेन् यर्जते। य उंचैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयों भवति। पश्च वा ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिं तिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पङ्किः। पाङ्को यज्ञः। यज्ञमेवावं रुन्थे। सप्तद्शः स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै॥३१॥

अगस्त्यों मुरुद्धं उक्ष्णः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एनं वर्ज्रमुद्धत्याभ्यांयन्त। तानगस्त्यंश्चेवेन्द्रंश्च

कयाशुभीयेनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाँह्वयत। यत्कंयाशुभीयं भवंति शान्त्यै। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणंः सवनीयां भवन्ति। त्रयंः प्रथमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीयें। एवं तृतीयें॥३२॥

पुवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव् ह्येतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदे। स्वारौज्यं वा एष युज्ञः। एतेन् वा एक्या वां कान्द्मः स्वारौज्यमगच्छत्। स्वारौज्यं गच्छति। य एतेन् यजंते॥३३॥

य उं चैनमेवं वेदं। मा्रुतो वा एषः स्तोमंः। एतेन् वै म्रुतो देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य

पृतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयो वा पृष यज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्ता य पृतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सप्तदृशः स्तोमा नाति यन्ति। सप्तदृशः प्रजापंतिः। प्रजापंतिरेव नैति॥३४॥

तृतीयें गच्छति य एतेन यजंतेऽत्ति य एतेन यजंते य उं चैनमेवं वेद त्रीणिं च (अगस्त्यः

स्वाराँज्यं मारुतः पंश्वशार्दीयो वा एष युज्ञः संप्तदुशं प्रजापंतेरेव नैति॥॥———[११]

अस्या जरांसो दमा मिरत्राः। अर्चर्धूमासो अग्नयंः पावकाः। श्विचीचयंः श्वात्रासो भुरण्यवंः। वनर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुंणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यक्षि स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्री शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्धै। अन्याऽन्यां वृथ्समुपं धापयेते। हिरंपुन्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यां दहशे सुवर्चाः। पूर्वाप्रं चंरतो माययेतौ। शिशू क्रीडंन्तौ पिरं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतूनन्यो विदधंज्ञायते पुनः। त्रीणि शृता त्रीषृहस्राण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षं घृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांरं न्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। कविर्गृहपंतिर्युवां। हृव्यवाङ्गुह्वांऽऽस्यः।

अग्निर्देवानां जठरम्। पूतदंक्षः क्विकंतुः। देवो देवेभिरा गमत्। अग्निश्रियो मुरुतो विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे व्यम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिणिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यदुंत्तमे मंरुतो मध्यमे वां। यद्वांऽवमे सुंभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडे अग्निर स्ववंसन्नमोंभिः। इह प्रंस्प्तो वि चं यत्कृतं नंः। रथैरिव प्रभेरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुताः स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वहिंभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वरुणो अर्यमा। प्रात्यावांणो अध्वरम्। विश्वेषामिदितिर्य्ज्ञियांनाम्। विश्वेषामितिथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमृतिं भिक्षंमाणाः॥३९॥ दिवि श्रवों दिधेरे यज्ञियांसः। नक्तां च चकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वां जिह्वा १ शुचंयश्चित्रिरे कवे। त्वा १ रांतिषाचां अध्वरेषुं सिश्चेरे। त्वे देवा ह्विरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां यज्ञस्य साधंनम्। अग्ने होतांरमृत्विजम्। वनुष्वद्देव धीमिह् प्रचेतसम्। जी्रं दूतममंर्त्यम्॥४०॥

य्ज्ञ्वाह्सास्पूर्यन्वयमृं ह्यां भिक्षमाणाः प्रचेतस्मेकं च॥———[१२] तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमाना याहि। वायुर्न नियुतों नो

अच्छं। पिबास्यन्थां अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिप्मा ते मदाय। कस्य वृषां सुते सचां। नियुत्वांन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयं महाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजं वृत्रेषुं विज्ञणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रंः शतक्रंतुः। उपं नो हरिभिः सुतम्। स सूर् आज्नयं ज्योतिरिन्द्रम्। अया धिया तरिण्रिद्रिबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्त्रिधो अस्रो अद्रिर्विभेद। उतत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्विन्द्र रं सुहवरं हवामहे। अर्होमुचरं सुकृतं दैव्यं

जनम्। अग्निं मित्रं वर्रण सातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तये। मृहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदिथ्सिखंभ्यश्चरथ् समैरत्। इन्द्रो नृभिरजन्दीद्यानः साकम्। सूर्यमुषसं गातुमग्निम्। उरुं नो लोकमन् नेषि विद्वान्। सुर्वर्वुङ्योतिरभयः स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्र स्थविरस्य बाहू। उपस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हर्यश्व याहि। वरीवृज्धस्थविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृद्वृषंण्र् शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्। दुदुहे विज्ञिणे मधुं। यथ्सीमुपह्वरे विदत्। तास्ते विज्ञिन्धेनवो जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियुतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इञ्जोगुंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजनस्य। इमां ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आन्जे। तमुध्सवे चं प्रस्वे चं सासहिम्। इन्द्रं देवासः शवंसा मदं ननुं॥४५॥

वृज्ञिणंमयथ्स्वस्ति जोजयुर्नः सप्त चं॥_____[१३]

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तेंंऽस्माथ्सृष्टाः परांं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाऽऽप्नोंत्। तानुक्थ्येन् नाऽऽप्नोंत्। तान्थ्योंड्शिना नाऽऽप्नौत्। तात्रात्रिया नाऽऽप्नौत्। तान्थ्यन्धिना नाऽऽप्नौत्। सौऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानुग्निस्त्रिवृता स्तोमेन नाऽऽप्नौत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईपसेतिं। तानिन्द्रंः पश्चद्रशेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नौत्। स विश्वौन्देवानंब्रवीत्। इमान्मं ईपस्तेतिं। तान् विश्वेदेवाः संप्तद्रशेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईपसेतिं। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाऽऽप्नोत्। वारवन्तीयेनावारयत॥४७॥

इदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मौत्पृशवः प्रप्रेव भ्रश्शेरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्नौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्याम्-त्वम्। एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यं काम्मकांमयन्त् तमांऽऽप्रुवन्। यं कामंं कामयंते। तमेतेनांऽऽप्नोति॥४८॥

स्तोमेंनु नाऽऽप्नोदवारयत् नवं च॥——[१४]

व्याघ्रोंऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अंभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानौं मिथुयाकर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वर्ष्माणंमस्मै विरुमाणंमस्मै। अथास्मभ्यं सवितः सर्वताता। दिवेदिव आ सुवा भूरि पृश्वः। भूतो भूतेषु चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्हत्। येभिर्घाम्भ्यपिर्श्वापितः। येभिर्वाचं विश्वरूपार्श्वापितः। येभिर्वाचं विश्वरूपार्श्वसम्ययत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्गिः। येभिरादित्यस्तपित् प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृद्शे चित्रभानः। येभिर्वाचं पुष्कलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्गि॥५०॥ आऽयं भातु शवंसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कुलं चित्रभानः। आऽयं

भवतु प्रजावान्। अस्मा अस्तु पुष्कुल चित्रभान्। आऽय पृणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कुलं चित्रभान्। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मित्राजांनुमधि विश्रंयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽधि॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासां त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सिवता करत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। रथीतंम रथीनाम्। वाजांना स्तर्पतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांद्भिषिश्चन्तु गायत्रेण् छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तों ऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। आदित्यास्त्वां पश्चाद्भिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा। आदित्यास्त्वां पश्चाद्भिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा। विश्वें त्वा देवा उत्तर्तों ऽभिषिश्चं त्वा उनुंष्टुभेन् छन्दंसा। वृह्स्पतिंस्त्वोपिरंष्टाद्भिषिश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा॥ ५३॥

अरुणं त्वा वृकंमुग्रङ्क्षंजङ्करम्। रोचंमानं मुरुतामग्रें अर्चिषंः। सूर्यवन्तं मुघवानं विषासिहम्। इन्द्रंमुक्थेषुं नामहूतंम १ हुवेम। प्र बाहवां सिसृतं जीवसे नः। आ नो गर्व्यातिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतंः। बाहू उपावं हरामि॥५४॥

बुभूबाव्यंयुत्तेनेममंग्र इह वर्चसा समंদ্ধি वैयाघेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दंसोपावंहरामि॥[१५] अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपत्नहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तंमः। तुभ्यं देवा अधिंब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावृभितो रथं यौ। ध्वान्तं वाताग्रमन् स्श्चरंन्तौ। दूरेहेतिरिन्द्रियावान्यतृत्री। ते नोऽग्नयः पप्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथायै त्वा स्वधायै त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभित्स्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रह्मन्तवेदंस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वज्रंहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वर्श्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परि। अनु त्वेन्द्रो मद्त्वनं त्वा मित्रावरुंणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिकिता सोमो अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सविता सवेनं॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्ङ्गिरंः। र्थीतंमश् रथीनाम्। वाजांनाः सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृध्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। मां गोपंतिम्भि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमित्रिरनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तित्पता द्यौः॥५७॥

तद्भावांणः सोम्सुतों मयो्भुवंः। तदंश्विना शृणुतः सौभगा युवम्। अवं ते हेड् उदुंत्तमम्। एना व्याघ्रं पंरिषस्वजानाः। सि्र्हर हिन्वन्ति मह्ते सौभंगाय। स्मुद्रं न सुहुवंन्तस्थिवारसम्। मुमृज्यन्ते द्वीपिनंमुफ्स्वंन्तः। उदसावेतु सूर्यः। उदिदं मामुकं वर्यः। उदिहि देव सूर्य। सह वृग्रुना मम्। अहं वाचो विवायंनम्। मिथ्र वागंस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षन्तु पूर्जन्याः। सुपिप्पुला ओषंधयो भवन्तु। अन्नंवतामोदनवंतामामिक्षंवताम्। एषार राजां भूयासम्॥५८॥

स्वधायै त्वा स्वेन द्योः सूर्य सप्त चं॥-----[१६]

ये केशिनंः प्रथमाः स्त्रमासंत। येभिराभृंतं यदिदं विरोचंते। तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषंणेमं वर्चसा स॰ सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मण्स्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नी दीक्षा वृशिनी ह्युंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वपंनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्ठं विषंहस्व शत्रून्ं। अवासाग्दीक्षा वृशिनी ह्युंग्रा॥५९॥

देहि दक्षिणां प्रतिरस्वायुः। अथामुच्यस्व वर्रुणस्य पाशात। येनावंपथ्सविता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वर्रुणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। रय्या वर्चसा स॰ सृंजाथ। मा ते केशानन् गाद्वर्च एतत्। तथा धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृह्स्पतिः। सविता वर्च आदंधात्॥६०॥

तेभ्यों निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सइ सृजाथ। बलं ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा सइसृंजाथ। यथ्सीमन्तङ्कः क्षंतस्ते लिलेखं। यद्वां क्षुरः परिववर्ज् वपइस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्।

पौ इस्येनेम स स सृंजाथो वीर्येण ॥ ६१॥

अवाँसाग्दीक्षा वृशिनी ह्यंग्राऽदंधाहुवर्ज वपई स्ते हे चं॥———[१७] इन्द्रं वे स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विघनमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजता तेनैवासान्तर सई स्तम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिद्वेघनस्यं विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यर् हते। य एतेन यजते। य उ चैनमेवं वेदं॥६२॥

य राजांनं विशो नाप्चायंयुः। यो वा ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृंतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांद्शे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्वि १ शे। औद्भिंद्यमेव तत्। एतद्वे क्षुत्रस्यौद्भिंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशों बलि १ हर्रन्ति॥६३॥

हरंन्त्यस्मै विशो बुलिम्। ऐनुमप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रे क्षुत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रः क्षुत्राण्यादेत्त। न वा इमानि क्षुत्राण्यंभूवन्निति। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियं देत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचिकिणों कप्लकावुपावंहितों स्यातांम्। एवमेतो युग्मन्तों स्तोमौं। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनो-ऽपंहत्ये। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य १ हते। य एतेन् यज्ञते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूतग्रामण्यः। एवं छन्दा १सि। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीर्भ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृहतीषु स्तुवते स्तो बृहन्। प्रजयां पृशुभिरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं व क्षत्रं विशा। विशेवैनं क्षत्रेण व्यतिषज्जित। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो व ग्रांमणीः संजातैः। स्जातैरेवैनं व्यतिषज्जित। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो व पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं

पाप्मनों नुदते॥६६॥

वेद हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्मभिरेकं च॥-----[१८]

त्रिवृद्यदाँग्रेयौँऽग्निमुंखा ह्युद्धिर्यदाँग्रेय आँग्रेयो न वै सोमेंन् यो वै सोमेंने्ष गोंस्वः सिर्हेऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ओंद्नं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जरांस्स्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृश्चन्व्याघ्रोंऽयम्भिप्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये के्शिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥

त्रिवृद्यो वै सोमेनायुंरिस बहुर्भवित तिष्ठा हरीरथ आयं भांतु तेभ्यों निधान् एषट्थ्यंष्टिः॥६६॥ त्रिवृत्पाप्मनों नुदते॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना रियृवधः सुमेधाः। श्वेतः सिंषक्ति नियुतां-मिश्रीः। ते वायवे समनसो वितस्थुः। विश्वेन्नरंः स्वपृत्यानिं चक्रः। रायेऽनु यञ्जजतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतः सश्चत् स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृह्ती मंनीषा॥१॥

बृहद्रीयं विश्ववाराः रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः श्तिनीभिरध्वरम्। सहस्रिणीभिरुपं याहि यज्ञम्। वायो अस्मिन् ह्विषिं मादयस्व। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नो अस्तु॥२॥

वय स्याम् पतियो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्तं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ। प्रजापितिं प्रथमजामृतस्य। यजाम देवमिधं नो ब्रवीत्। प्रजापते त्वन्निधिपाः पुंराणः। देवानां पिता जंनिता प्रजानांम्। पतिर्विश्वंस्य जगंतः परस्पाः। हिवर्नो देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिशंश्च॥३॥

प्रावतो निवतं उद्वतंश्च। प्रजापते विश्वसृज्ञीवधंन्य इदं नो देव। प्रतिहर्य ह्व्यम्। प्रजापति प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रे यज्ञतं यंजध्वम्। स नो ददातु द्रविण १ सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशे शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूना १ रिक्षेता विष्ठितानाम्। प्रजापंतिः प्रथमजा ऋतस्यं॥४॥

स्हस्रंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। स्प्तचंऋ रथमविश्वमिन्वम्। विष्वृतं मनंसा युज्यमांनम्। तं जिन्वथो वृषणा पश्चरिष्टमम्। दिव्यंन्यः सदंनं च्ऋ उचा। पृथिव्याम्न्यो अध्यन्तरिक्षे। ताव्समभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिम्स्मे॥५॥

धियं पूषा जिन्वतु विश्वमिन्वः। र्यिः सोमो रियपतिर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरनुर्वा। बृहद्वंदेम विदथे सुवीराः। विश्वांन्यन्यो भुवंना ज्ञानं। विश्वंमन्यो अभिचक्षांण एति। सोमांपूषणाववंतं धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतंना जयेम। उद्तुं मं वंश्रणास्त्रं भाद्याम्। यत्कं चेदं कित्वासः। अवं ते हेड्डस्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। युज्ञो देवाना श्रुचिर्पः॥६॥

म्नीषाऽस्तुं चूर्तस्यास्मे किंतुवासंश्चरतारि च॥———[१]
ते शुक्रासः शुचयो रश्मिवन्तः। सीदन्नादित्या अधि

ब्र्हिषिं प्रिये। कामेन देवाः स्रथं दिवो नंः। आ याँन्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितेः पीवसामिषम्ं। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंम्स्मे। आ नंः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पथिभिर्देवयानैः॥७॥

अस्मे कामं दाश्षे सन्नमंन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कुभायत् निर्ऋति सेधृतामंतिम्। प्र रश्मिभिर्यतमाना अमृध्राः। आदित्याः काम् प्रयंतां वर्षद्वृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजन्नाः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानि जनयंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्। स्तीर्णं बुर्हिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीर्णं बर्हिः सींदता यज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यर्सत। आदित्याः कामं ह्विषो जुषाणाः। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवे भरध्वम्। हव्यं मृतिं चाग्नये सुपूतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुषा जनूरषिं। अन्तर्विश्वांनि विद्यना जिगांति। अच्छा गिरों मृतयों देवयन्तीः। अग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर्रं सुप्रतींक्र्ं स्वश्चम्ं। हृव्यवाहंमर्तिं मानुषाणाम्। अग्ने त्वम्स्मद्युयोध्यमीवाः। अनंग्नित्रा अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनर्स्मभ्यर्रं सुवितायं देव। क्षां विश्वेभिर्जरेभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्वं पृथ्वी बंहुला नं उुर्वी। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मनुना वृच्यमानाः। देवुद्रीचीं नयथ देवयन्तः। द्क्षिणावाङ्गाजिनी प्राच्येति। ह्विर्भरंन्त्यग्नये घृताचीं। इन्द्रं नरो युजे रथम्। जुगृभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥

वसूयवो वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति शूर् गोनाम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण श्रियन्दाः। तवेदं विश्वंमभितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमसि गोपंतिरेकं इन्द्र। भृक्षीमहिं ते प्रयंतस्य वस्वंः। सिनन्द्र णो मनंसा नेषि गोभिः। सश्सूरिभिर्मघवन्थ्स इस्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सं देवानारं सुमृत्या युज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत् तेनं। अस्मे धेहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कृधीधियंं जरित्रे वाजंरत्नाम्। आ वेधस् स हि शुचिंः। बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। स्प्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि स्प्तरंश्मिरधमृत्तमारंसि॥१३॥

बृह्स्पतिः समंजयद्वसूंनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांस्न्थ्सुव्रप्रंतीत्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रंमुर्कैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नों दिवः पावीरवी। इमा

ज्योतिषा वि तमों ववर्थ॥१५॥

जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नों नेषि। इय श्र्षणंभिर्विस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणान्तंविषेभिंरूर्मिभिः। पारावद्ग्रीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

देवयानैदेवाः सपूर्तं यजत्र हस्तमस्ति तमाईस्यूर्मिभिई चं॥———[२]
सोमो धेनु १ सोमो अर्वन्तमाशुम्। सोमो वीरं कर्मण्यं
ददातु। सादन्यं विद्थ्य १ सभेयम्। पितुः श्रवणं यो
ददांशदस्मे। अषांढं युथ्सु त्व १ सोम् ऋतुंभिः। या ते
धामांनि ह्विषा यजंन्ति। त्विम्मा ओषंधीः सोम् विश्वाः।
त्वमपो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थोर्वन्तिरेक्षम्। त्वं

या ते धामांनि दिवि या पृथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वपस्। तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहंडन्। राजैन्थ्सोम् प्रतिं ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकं तदस्य प्रियम्। प्र तिद्वष्णुः। प्रो मात्रंया त्नुवां वृधान। न तें मिह्त्वमन्वंश्जुवन्ति। उभे तें विद्या रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। परमस्यं विथ्से॥१६॥

विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि

गोत्राणि। आभिः स्पृधौं मिथ्तीरिर्षण्यन्। अमित्रंस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विषूचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अय शृंण्वे अध् जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृंणुते युधा गाः। यदा सृत्यं कृंणुते मृन्युमिन्द्रंः॥१७॥

विश्वं दृढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्न्नापों अस्य। अवंधत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनंसा तिमेन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मंनाहन्नभिद्यन्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकंवारिं दिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाह्मवंसे नूतंनाय। उग्र सहोदामिह त हंवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहंसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिंष्ठो बहुलाभिमानः। अवधिन्निन्द्रं म्रुतंश्चिदत्रं। माता यद्वीरं द्धनृद्धिनिष्ठा। क्रंस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक र्रं स्मर्धत्ताहिहत्ये। अह इ ह्यंग्रस्तिविषस्तुविष्मान्। विश्वंस्य शत्रोरनंमं वध्नेः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सखायः। म्रुद्धिरिन्द्र सुख्यं ते अस्तु॥१९॥ अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधीं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन भामेन तिवृषो बंभूवान्। अहमेता मनवे विश्वश्चंन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समोकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मुरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रों वृत्रमंतरद्वृत्रतूर्यं॥२०॥

अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशो अमदन्त पूर्वीः। अय र राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उं वीर्यावान्। स एंकराजो जगंतः पर्स्पाः। यदा वृत्रमतंरच्छूर् इन्द्रंः। अथांभवद्दमिताभिक्रंतूनाम्। इन्द्रो युज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता र ह्विर्नः। वृत्रं तीत्वां दान्वं वर्ज्ञंबाहुः॥२१॥

दिशोऽह ५ हृ ६ १ हिता ह ५ हेणेन। इमं युज्ञं वर्धयेन्विश्व-वेदाः। पुरोडाशां प्रतिं गृभ्णात्विन्द्रेः। युदा वृत्रमतेरच्छूर् इन्द्रेः। अथैकराजो अभवज्ञनानाम्। इन्द्रो देवाञ्छंम्बर्हत्यं आवत्। इन्द्रो देवानामभवत्पुरोगाः। इन्द्रो युज्ञे हृविषां वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभय १ शर्म य १ सत्। यः सप्त सिन्धू १ रदेधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृणोद्दिशंश्व। इन्द्रो ह्विष्मान्थ्सगंणो मुरुद्धिः। वृत्रुतूर्नो युज्ञमिहोपं यासत्॥२२॥

वुवर्थ विथ्म इन्द्रंस्तुरायाँस्तु वृत्रुतूर्ये वज्रंबाहुः पृथिव्यात्रीणि च॥——[3]

इन्द्रस्तरंस्वानिभगतिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिषिरः सुंवर्षाः। तस्यं वय १ सुंमृतौ यज्ञियंस्य। अपि भद्रे सौमन्से स्योम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि य १ सत्। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्र १ स्तुहि वृज्ञिण् १ स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषता १ हिर्वर्नः॥२३॥

ह्त्वाभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतो नः। स्तुहि शूरं विज्ञिणमप्रंतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुहूतमिन्द्रम्। य एक इच्छ्तपंतिर्जनेषु। तस्मा इन्द्रांय ह्विरा जुंहोत। इन्द्रों देवानांमिध्पाः पुरोहिंतः। दिशां पतिरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तिवषस्तुविष्मान्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र्ियन्दौत्॥२४॥

य इमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाह ईहदभिमातिहेन्द्रेः। स नों हुविः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निधिपा नों अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्यांण्यहृन्नहिम्ं। इन्द्रों यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्ञंबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वज्रेणासृजद्भृत्रमिन्द्रः। प्र स्वां मृतिमंतिर्च्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागतं विश्वधेना। प्रजावंदस्मे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। विष्णुं च देवं वर्रुणं च रातिम्॥२६॥

ता नो अमीवा अप बाधंमानौ। इमं यज्ञं जुषमांणावुपेतम्। विष्णूंवरुणा युवमंध्वरायं नः। विशे जनांय मिह शर्मं यच्छतम्। दीर्घप्रंयज्यू ह्विषां वृधाना। ज्योतिषा-ऽरांतीर्दहत्नतमा रसि। ययोरोर्जसा स्कभिता रजा रसि। वीर्यंभिर्वीरतंमा शविष्ठा। याऽपत्यं ते अप्रंतीत्ता सहोभिः। विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणावभिशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामीवा सेधत रक्षसंश्च। अथांधत्तं यर्जमानाय शं योः। अ्होमुचां वृष्भा सुप्रतूंतीं। देवानां देवतंमा शचिष्ठा। विष्णूवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदं नरा प्रयंतमूतयें ह्विः। मही न द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भवता शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥

यथ्सीं वरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृबद्धोक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृंणुध्व सदेने ऋतस्यं। आ नौ द्यावापृथिवी दैव्यंन। जनेन यातं मिहं वां वरूथम्। स इथ्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावापृथिवी ज्जानं। उवीं गंभीरे रजंसी सुमेकें। अव शो धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूिं द्वे अचंरन्ती चरंन्तम्। पृद्वन्तं गर्भम्पदींदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थैं। तं पिपृत र रोदसी सत्यवाचम्ं। इदं द्यांवापृथिवी स्त्यमंस्तु। पित्मांत्यिदिहोपं ब्रुवे वांम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृज्जनं जीरदांनुम्। उवीं पृथ्वी बंहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा यज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगं सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षंतं पृथिवी नो अभ्वात्। या जाता ओषंधयोऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमंराज्ञीरश्वावती र सोमवतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥

ह्विर्नो दाद्भभूव रातिं पूर्वहूंतावुर्कैरैरदुस्मिन्पश्चं च॥————[४]

शुचिं नु स्तोम् श्रव्यद्धृत्रम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृत्रहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वम्स्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तनयं च जिन्व। विश्वं तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विदथे सुवीराः। स ईश् स्तयेभिः सर्विभिः शुचद्धिः। गोधायसं विधन्सैरतर्दत्। ब्रह्मणस्पतिर्वृषंभिर्वराहैः॥३१॥

घर्मस्वेदिभिद्रविणं व्यानट्। ब्रह्मण्स्पतेरभवद्यथावृशम्। सत्यो मृन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाज्ञथ्स दिवे वि चाभजत्। मृहीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धानो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रंह्मा शूश्वद्रातहंव्य इत्। जातेनं जातमित्सुत्प्र सृर्स्सते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मण्स्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्यांम रथ्यों विवंस्वतः। वीरेषुं वीरा उपंपृिङ्खि नस्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मणा वेषिं मे हवम्। स इज्जनेन स विशा स जन्मना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः। देवानां यः पितरंमा विवांसित। श्रुद्धामना हिविषा ब्रह्मणस्पतिम्। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रं ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे पथामंजिनष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरित प्रजानन्। पूषा सुबन्धंर्दिव आ पृंथिव्याः। इडस्पितम्घवां दस्मवंर्चाः। तं देवासो अदंदः सूर्यायैं। कामेन कृतं त्वस् स्वश्रम्ं। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अपितः। अष्ट्रां पूषा शिंथिरामुद्धरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षांणो भुवंना देव ईयते। शुची वो ह्व्या मंरुतः शुचीनाम्। शुचिर्ं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं सत्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्र चित्रमुकं गृंणते तुरायं। मारुंताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहार्रस् सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षंः सुरुक्ता उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्म शशमानाय सन्तिं। त्रिधातूंनि दाशुषे यच्छुताधिं। अस्मभ्यं तानि मरुतो वियन्त। र्यिं नो धत्त वृषणः सुवीरम्। इमे तुरं मुरुतो रामयन्ति। इमे सहः सहंस् आ नमन्ति। इमे शर्संवनुष्यतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहेव। प्रप्रं जायन्ते अकंवा महोभिः। पृश्ञेः पुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मुरुतः सं मिमिक्षुः। अनुं ते दायि मृह इंन्द्रियायं। स्त्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्ये। अनुं क्षत्रमनु सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्ये। य इन्द्र शुष्मो मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः। त्व हि हुढा मंघवन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिं न राधः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुरूपं यदस्ति। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध उपंस्तुतश्चिद्वांक्। तमुंष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रः। अषांढमुग्र सहंमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्भं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तमुं ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीषु। प्र धृंष्णुया नंयति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मों वृष्भ एंतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तात्। आ विश्वतो अभिसमेत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न स्वंवर्द्वेद्धस्मे॥३९॥

व्राहैर्विश्वहांऽजिनष्ट पूषोद्वरींवृजत्खादयों वः पान्त्यस्त्याभिर्नवं च॥———[५]

आ देवो यांतु सिवता सुरत्नः। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणिं। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्ततो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सिवता चित्रभानुः। कृष्णा रजार्सि तिवेषीं दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता स्वायं। आ सांविषद्वसुंपतिर्वसूनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमधंरासतेन। विजनाँञ्छावाः शिंतिपादों अख्यन्। रथ् हरंण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशंः सवितुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थुः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गुभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः कश्चिकत। कृतमान्द्या स्रिमर्स्या तंतान॥४१॥

भगं धियं वाजयंन्तः पुरंन्धिम्। नराशश्सो ग्रास्पतिंनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतुः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अंर्यमा वर्रणः स्जोषाः। भुवन् यथां नो विश्वं वृधासः। करंन्थ्सुषाहां विथुरं न शवः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। श॰ सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मभिषाचः शर्मु रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वः। मित्रस्यं व्रते वर्रणस्य देवाः। ते सौभंगं वीरवद्गोमदप्रः। दर्धातन् द्रविणं चित्रम्समे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवाः अच्छा ब्रह्मकृतां गुणेनं। सर्रस्वतीं मुरुतो अश्विनापः। यक्षि देवानंब्रधेयांय विश्वान्॥४३॥

द्यौः पिंतः पृथिवि मात्रभूंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते स्जोषाः। अस्मभ्यक् शर्म बहुलं वि यन्ता विश्वं देवाः शृणुतेमक् हवंं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्वा उत वा यजेताः। आसद्यास्मिन्बर्हिषं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा ह्व्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाऽऽववृत्याम्॥४४॥

अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्दिव्या सुपारा। युवं वस्नांणि पीवसा वसाथे। युवोरच्छिंद्रा मन्तंवो ह् सर्गाः। अवांतिरत्मनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तथ्मु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ईमा तस्थुषीरहंभिर्दुदुहे। विश्वाः पिन्वथ् स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः प्विरा वंवर्ति॥४५॥

यद्वश्हिष्टन्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्रश् शर्म भुवंनस्य गोपा। ततो नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जीगिवाश्संः स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रति वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौंः। प्र बाहवां सिसृतं जीवसे नः। आ नो गर्व्यूंतिमुक्षतं घृतेनं॥४६॥

आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरः। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्ने। अषांढाय सहंमानाय मीढुषे। तिग्मायुंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। शृत हिमां अशीय भेषजेभिः। व्यंस्मद्वेषां वित्रं व्यर्हः। व्यमीवाङ्श्चातयस्वा विषूंचीः॥४७॥

अर्हन्बिभर्षि मा नंस्तोक। आ ते पितर्मरुता समुम्रमेतु।

मा नः सूर्यस्य सन्दशों युयोथाः। अभि नों वीरो अर्वति क्षमेत। प्र जांयेमिह रुद्र प्रजाभिः। एवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणी्षे न हश्सी। हावनश्रूनीं रुद्रेह बोधि। बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः। परिं णो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्टमार्हन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजांनम्॥४८॥ वर्मिन ततानास्तु विश्वानं ववृत्यां वविर्ते घृतेन विर्म्चीः श्रुतन्द्वे चं॥———[६]

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमभ्येति पृश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तो युगानि। वितन्वते प्रति भृद्रायं भृद्रम्। भृद्रा अश्वां हृरितः सूर्यस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमंस्थुः। परि द्यावांपृथिवी यन्ति सद्यः। तथ्सूर्यस्य देवत्वं तन्मंहित्वम्। मृध्या कर्तोविंतंत्र् सञ्जंभार॥४९॥

यदेदयंक्त हिरतः स्थस्थात्। आद्रात्री वासंस्तन्ते सिमस्मै। तिन्मत्रस्य वरुणस्याभिचक्षे। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थे। अनुन्तम्न्यद्रुशंदस्य पाजः। कृष्णम्न्यद्धरितः सं भेरन्ति। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्ताम्। अदितिः

सिन्धुंः पृथिवी उत द्यौः॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अर्थस्तरणिर्श्राजंमानः। नूनं जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्श्स। शं नो भव चक्षंसा शं नो अहाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेनं। यथा शम्समै शमसंदुरोणे। तथ्सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम्। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्यं आत्मा जगतस्त्रस्थुषेश्च। त्वष्टा दध्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दशेमन्त्वष्टंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभंत्रम्। तिग्मानीक्ष् स्वयंशसं जनेषु। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यों वर्धते चार्रुरासु। जिह्मानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थै॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीचीं सि॰्हं प्रति-जोषयेते। मित्रो जनान्त्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यंः सुशेवंः। राजां सुक्षत्रो अंजनिष्ट वेधाः। तस्यं वयः सुमृतौ युज्ञियंस्य। अपिं भुद्रे सौमनुसे स्यांम। अनुमीवास् इडंया मदंन्तः। मित्रज्मंवो वरिमन्ना पृथिव्याः। आदित्यस्यं व्रतमुंपक्ष्यन्तं:॥५३॥

वयं मित्रस्यं सुमृतौ स्यांम। मित्रं न ई शिम्या गोषुं गृव्यवंत्। स्वाधियों विदर्थं अपस्वजींजनन्। अरंजयता श्रादंसी पाजंसा गिरा। प्रति प्रियं यंजतं जनुषामवंः। महा श्रादित्यो नमंसोप्सद्यः। यात्यज्ञंनो गृणते सुशेवंः। तस्मां पृतत्पन्यंतमाय जुष्टम्ं। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आवा शर्थो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंर्तनिः प्विभीरुचानः। इषां वोढा नृपतिंर्वाजिनींवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमी। त्रिवन्धुरो मनसायांतु युक्तः। विशो येन गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्याममिश्विना दर्धाना। स्वश्वां यशसाऽऽयांतम्वांक्। दस्रां निधिं मधुंमन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तां दिवो बांधते वर्तिनिभ्यांम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरों दुहिता परितिकायायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचींभिः। परिघृष्ट्र सवां मनांवां वयोगाम्। यो हुस्यवार्ष्ट्र रथिरावस्तं उस्राः। रथो युजानः परियातिं वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्युष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्ध समुद्रे॥५६॥

उदूंहथुरणंसो अस्रिधानेः। प्तित्रिभिरश्रमैरंव्यथिभिः। दूरसनांभिरश्विना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाँम्। इदं वचंः सप्यितिं। तस्मै धत्तर सुवीर्यम्। गवां पोष्ड् स्वश्वियम्। यो अग्नीषोमां ह्विषां सप्यात्। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं वृतर रक्षतं पातमरहंसः॥५७॥

विशे जनाय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वां दाशाँख्विष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्वीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमवसं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविंन्दतं ज्योतिरकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविम सुमेऽग्नीषोमा ह्विषः प्रस्थितस्य॥५८॥

ज्ञभार् चौर्ग्नेरुपस्थं उपृक्ष्यन्तों बद्धधानो वृध्वां यादंमानः समुद्रेऽ४हंसुः प्रस्थितस्य॥—[७]

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यों अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्नं-मदन्तंमिद्मा। पूर्वम्ग्रेरिपं दहृत्यन्नम्। यत्तौ हांसाते अहमुत्त्रेषुं। व्यात्तंमस्य पृशवंः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचेरित् पाकाः। जहाँम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वशमिचेरामि॥५९॥

स्मानमर्थं पर्येमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यों दयेत। पर्राके अन्नं निहितं लोक एतत्। विश्वैदिवैः पितृभिर्गृप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्परोप्यते। शृतत्मी सा तनूर्मे बभूव। महान्तौं चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवं च पृश्चिं पृथिवीं चं साकम्। तथ्मम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भूयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नंमपानमांहः। अन्नं मृत्युं तम् जीवातुंमाहः। अन्नं ब्रह्माणों जरसं वदन्ति। अन्नंमाहः प्रजनंनं प्रजानांम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रंचेताः। सत्यं ब्रंवीमि वध इथ्स तस्यं। नार्यमणं पुर्ष्यति नो सर्खायम्। केवंलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तनयन्वर्षंन्नस्मि। मामंदन्त्यहमंदयन्यान्॥६१॥

अह सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वार्चमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादधि निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भोजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा षद्वंदां च। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वाचं गन्ध्वाः पृशवो मनुष्याः। वाचीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागृक्षरं प्रथम्जा ऋतस्यं। वेदांनां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागांत्। अवन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मञ्चकृतों मनीषिणः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमेण। तान्देवीं वाचर् ह्विषां यजामहे। सा नो दधातु सुकृतस्यं लोके। चुत्वारि वाक्परिमिता पदानिं॥६३॥

तानि विदुर्बाह्मणा ये मंनीषिणंः। गुहा त्रीणि निहिंता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मंनुष्यां वदन्ति। श्रृद्धयाऽग्निः सिमंध्यते। श्रृद्धयां विन्दते ह्विः। श्रृद्धां भगंस्य मूर्धनिं। वचसा वेदयामसि। प्रियक् श्रेद्धे ददंतः। प्रियक् श्रेद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं में उदितं कृषि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चितरे। एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृषि। श्रद्धां देवा यजमानाः। वायुगोपा उपांसते। श्रद्धाः हंदय्यंया- ऽऽकूँत्या। श्रुद्धयां हूयते हुविः। श्रुद्धां प्राृतर्ह्वामहे॥६५॥

श्रद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रद्धाः सूर्यस्य निम्नुचि। श्रद्धे श्रद्धांपयेह माँ। श्रद्धा देवानिधं वस्ते। श्रद्धा विश्वंमिदं जगंत्। श्रद्धां कामस्य मातरम्। ह्विषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुचो वेन आंवः। स बुिध्रयां उप मा अंस्य विष्ठाः॥६६॥

स्तश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्भो रयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकैर्भ्यंचिन्त वृथ्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वर्धयन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वमिदं जगत्। ब्रह्मणः क्षत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मनां। अन्तरिस्मित्रिमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्ँ। तेन कोऽर्हित स्पर्धितुम्। ब्रह्मेन्देवास्त्रयंस्त्रिश्शत्। ब्रह्मेन्निन्द्रप्रजापती। ब्रह्मेन् हु विश्वां भूतानिं। नावीवान्तः समाहिता। चतस्त्र आशाः प्रचरन्त्वग्नयः। इमं नो यज्ञं नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंन्नजर्शं सुवीरम्॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्भंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मन्नुत भ्द्रमंऋन्।

सीदंन्तु गोष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषसो दुहांनाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वां॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भक्षः। इमा या गावः सर्जनास इन्द्रंः। इच्छामीद्धृदा मनंसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशं चिंत्। अश्लीलं चिंत्कृणुथा सुप्रतींकम्। भुद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते स्भासुं। प्रजावंतीः सूयवंस १ रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईंशत माऽघशर्रसः। परिं वो हेती रुद्रस्यं वृआ्यात्। उपेदम्पपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतंसि। उपेंन्द्र तवं वीर्यें॥७०॥ चुरामि कर्नीयोऽन्यानिर्पता पदानि यज्वंसु हवामहे विष्ठा लोकाः सुवीर्मर्वा पिवंन्तीः

ता सूँर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा मृहत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामात्माना चरतः सामचारिणां। यथोर्वृतं न मुमे जातुं देवयोः। उभावन्तौ परि यात् अर्म्याः। दिवा न र्ष्मी इस्तंनुतो व्यणिवे। उभा भेवन्ती भवना कविकेत्। सूर्या न चन्द्रा चरतो ह्तामंती। पतीं द्युमिद्वेश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥ ७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरेण्या। ता नोंऽवतं मतिमन्ता महिन्नता। विश्ववपंरी प्रतरंणा तर्न्ता। सुवुर्विदां दृशये भूरिंरश्मी। सूर्या हि चुन्द्रा वसुं त्वेषद्रशता। म्नस्विनोभानुंचर्तोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवीं नृद्यीः सप्त बिंभ्रति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शतं वर्षुः। असमे सूर्याचन्द्रमसांऽभि्चक्षें। श्रुद्धेकिमंन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥ पूर्वापरं चरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतूनन्यो विदर्धज्ञायते पुनंः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासा ५ राजां। यासां देवाः शिवेनं मा चक्षुंषा पश्यत। आपों भुद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीत्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा परो यत्। किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्॥७३॥ अम्भः किमांसीद्गहंनं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्हि न। रात्रिया अहं आसीत्प्रकेतः। आनीदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माँ द्धान्यं न पुरः किश्चनासं। तमं आसीत्तमंसा गूढमग्रे प्रकेतम्। सिललः सर्वमा इदम्। तुच्छेनाभ्विपिहितं यदासीत्। तमंस्रस्तन्महिना जांयतैकम्। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि॥७४॥

मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंबिन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिर्श्वीनो वितंतो रिश्मरेषाम्। अधः स्विदासी(३)दुपरि स्वदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्महिमानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तांत्। को अद्धा वेद क इह प्र वोचत्। कृत आजांता कृतं इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥ अथा को वेद यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं।

अथा को वेंद्र यतं आबुभूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आबुभूवं। यदिं वा द्धे यदिं वा न। यो अस्याध्यक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेंद्र यदिं वा न वेदं। किङ्स्विद्वनुङ्क उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥७६॥ यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनींषिणो मनसा विब्नंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। प्रातर्ग्निं प्रातरिन्द्र रं हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरिश्वनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोमंमुत रुद्र ह्वेम। प्रातर्जितं भगमुग्र ह्वेम। व्यं पुत्रमिदंतेर्यो विधर्ता। आधिश्चद्यं मन्यमानस्तुरिश्चंत्॥७७॥

राजां चिद्यं भगं भृक्षीत्याहं। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्रणो जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्राम्। उतोदिता मघवन्थ्सूर्यस्य। व्यं देवानार् सुमृतौ स्याम। भगं एव भगवार अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं व्यं भगंवन्तः स्याम। तं त्वां भग् सर्व् इञ्जोहवीमि। स नो भग पुर पुता भवेह। समध्वरायोषसो नमन्त। द्धिकावेव शुचेये पदाये। अर्वाचीनं वंसुविदं भगं नः। रथंमिवाश्वां वाजिन आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भुद्राः। घृतं दुहांना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥ विचक्षणा विचर्तुर॰ शर्मृत्रिधं विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरश्चिंद्देवाः प्रपीना एकं च॥—[९] पीवौँत्रान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु सूर्यो देवीमृहमंस्मि ता सूँर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥

पीवौन्नामग्ने त्वं पारयानाधृष्यः शुचिं नु विश्रयंमाणो दिवो रुक्मोऽन्नं प्राणमन्नन्ता सूँर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥

पीवों त्रां यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षेत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमांसां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्तिं रूश्मयो यस्यं केतवः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वां। स कृत्तिंकाभिर्मिसंवसानः। अग्निर्नो देवः सुंविते देधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृह्ती चित्रभानुः॥१॥

सा नों यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेंम श्ररदः सवींराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणिं प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति १ ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥

यत्ते नक्षेत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रियः रांजन् प्रियतेमं प्रियाणाम्। तस्मै ते सोम ह्विषां विधेम। शं ने एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। आर्द्रयां रुद्रः प्रथंमा न एति। श्रेष्ठों देवानां

चेतंः॥५॥

पतिरिष्ट्रियानाँम्। नक्षंत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नः प्रजाः रीरिष्-मोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परि णो वृणक्तु। आर्द्रा नक्षंत्रं जुषताः हविर्नः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश ५ सन्नुदतामरांतिम्।

पुनर्नो देव्यदितिः स्पृणोतु। पुनर्वसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियन्तु सर्वे। पुनः पुनर्वो ह्विषां यजामः। पुवा न देव्यदितिरन्वां। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। पुनर्वसू ह्विषां वर्धयन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥४॥ बृह्स्पतिः प्रथमं जार्यमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भि सम्बंभूव। श्रेष्ठो देवानां पृतेनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परि पातु पश्चात्। बाधेतां द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्यः

ये अन्तरिक्षं पृथिवीं क्षियन्ति। ते नेः सूर्पासो हवमार्गमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापि सूर्पाः। ये दिवं देवीमनुं स्थरन्ति। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पेभ्यो

स्याम। इद र सर्पेभ्यों हविरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति

मधुंमञ्जहोमि। उपंहूताः पितरो ये मघासुं। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमागंमिष्ठाः। स्वधाभिर्य्ज्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥

ये अग्निद्ग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरंः श्चियन्ति। याः श्चं विद्म याः उ च न प्रविद्म। मघासुं यज्ञः सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामसि त्वम्। तदर्यमन्वरुणमित्र चारुं। तं त्वां वयः संनितारः सनीनाम्। जीवा जीवन्तमुप संविशेम। येनेमा विश्वा भुवनानि सञ्जिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

मुबनानि साञ्जता। यस्य द्वा अनु स् यान्त चतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजर्स्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्मो

रोरवीति। श्रेष्ठों देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः
फल्गुंनीस्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षुत्रमृजर्रं सुवीर्यम्।
गोमृदर्श्वंवदुप् सन्नुंदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों
देवीः फल्गुंनीरा विवेश। भगस्येत्तं प्रंस्वं गंमेम। यत्रं देवैः
संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययंन सुवृता रथेन। वहुन् हस्तर् सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपुंरिं पुण्यमच्छे। हस्तः प्रयेच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन् प्रति-गृभ्णीम एनत्। दातारंम्द्य संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवाति यज्ञम्। त्वष्टा नक्षेत्रम्भ्येति चित्राम्। सुभ र संसं युवति र रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ईश्च। रूपाणि पि श्वान् भुवंनानि विश्वा। तत्रस्त्वष्टा तद् चित्रा विचंष्टाम्। तत्रक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती स्मनोत्। गोभिनी अश्वैः समनक्तु यज्ञम्। वायुर्नक्षंत्रमभ्येति निष्ट्याम्। तिग्मश्वं क्षेत्रमभ्येति निष्ट्याम्। तिग्मश्वं वृष्मो रोरुवाणः। समीरयन् भुवंना मात्रिश्वा। अप् द्वेषा स्मि नुदतामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तदु निष्टमां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तन्नों देवासो अनुंजानन्तु कामम्। यथा तरेम दुरितानि विश्वां। दूरम्समच्छत्रंवो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृंणतां तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुंमदन्तु यज्ञम्। पृश्चात् पुरस्तादभंयं नो अस्तु। नक्षंत्राणामिधंपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूंचः शत्रूंनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधं नुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा पुरस्तांत्। उन्मंध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसंन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवृतिः सजोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वाः। उरुं दुहां यजमानाय यज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यजमाने दधातु हुविर्नुः पाथुश्चेतों जुषन्ताञ्चेतों मदेम् रोचंमानामरातीर्गोपौ युज्ञम्॥[१]

ऋद्धास्मं हुव्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्र्धेयं नो अस्तु। अनूराधान् हृविषां वर्धयन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। चित्रं नक्षंत्रमुदंगात्पुरस्तात्। अनूराधास् इति यद्वदंन्ति। तिन्मत्र एति पृथिभिर्देवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतर्न्तिरेक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामनु नक्षंत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रतूर्ये तृतारं॥१३॥

तस्मिन्वयम्मृतं दुहानाः। क्षुधं तरेम् दुरितिं दुरिष्टिम्। पुर्न्दरायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें। इन्द्राय ज्येष्ठा मधुम्द्दुहाना। उरुं कृणोतु यजमानाय लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षेत्रं पृषुभिः समंक्तम्। अहंर्भ्याद्यजमानाय मह्मम्॥१४॥

अहंनीं अद्य संविते दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति।

परांचीं वाचा निर्ऋतिं नुदामि। शिवं प्रजायें शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैशन्तीरुत प्रांसचीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयंन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यज्ञंमानाय कल्पताम्। शुभ्राः क्न्यां युव्तयः सुपेशंसः। कृर्मकृतः सुकृतों वीर्यांवतीः। विश्वांन् देवान् हृविषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु युज्ञम्॥१६॥

यस्मिन् ब्रह्माऽभ्यजंयथ्सर्वमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियं दधात्वहंणीय-मानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतेनाः सञ्जयेम। तन्नो देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्ति श्रोणाम्मृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपशृणोमि वाचम्॥१७॥ महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचींमेना हिविषां यजामः। त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंत्रमे। महीं दिवं पृथिवीमन्तरिक्षम्। तच्छ्रोणैतिश्रवं इच्छमांना। पुण्य श्रोकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजंसः प्रस्तात्। संवथ्सरीणंममृत स्वस्ति॥१८॥

युज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दृक्षिणतोंऽिमयंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविशाम। मा
नो अर्रातिर्घशृष्ट्साऽगन्। क्षृत्रस्य राजा वर्रुणोऽिधराजः।
नक्षंत्राणा श्रातिभेष्वविसेष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणुतो दीर्घमायुः।
श्रात सहस्रां भेषुजानि धत्तः। युज्ञं नो राजा वर्रुण
उपयातु। तन्नो विश्वे अभि संयंन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभेषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रति-रद्भेषजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तात्। विश्वा भूतानि प्रति मोदंमानः। तस्यं देवाः प्रस्वं यन्ति सर्वे। प्रोष्ठपदासो अमृतंस्य गोपाः। विभाजंमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदगुन्द्याम्। तर सूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ट्रपदासो अनुंयन्ति सर्वे॥२०॥

अहिंबुंध्रियः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्राँह्मणाः सोंम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासो अभि रंक्षन्ति सर्वे। चत्वार एकंमभि कर्म देवाः। प्रोष्ठपदास इति यान् वदंन्ति। ते बुध्रियं परिषद्य स्तुवन्तः। अहिर् रक्षन्ति नमंसोप्सद्यं। पूषा रेवत्यन्वंति पन्थांम्। पुष्टिपतीं पशुपा वार्जंबस्त्यौ॥२१॥

ड्मानिं ह्व्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां यज्ञम्। क्षुद्रान् पृशून् रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्वार् अन्वेतु पूषा। अत्रर् रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजर् सनुतां यजमानाय यज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिष्ठौ सुयमेभिरश्वैः। स्वं नक्षत्र ह्विषा यजन्तौ। मध्वा सम्पृंकौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौं हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूतावमृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणुमोऽश्वयुग्भ्याम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां महुतो महान् हि। सुगं नः पन्थामभंयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजाँ। यस्मिन्नेनम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदस्य चित्र र ह्विषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशनी यत्ते देवा अदंधः॥२३॥

तृतार् मह्यं प्रास्चीर्या याँन्तु युज्ञं वाच ई स्वस्ति देवा अनुयन्ति सर्वे वार्जवस्त्यौ समंक्तौ

नवीनवो भवति जायंमानो यमांदित्या अर्शुमांप्याययंन्ति। ये विरूपे समनसा संव्ययंन्ती। समानं तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतों हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमागमेतम्। वयं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिं दर्धानाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयंन्तः। अतिं पाप्मान्मतिं मुत्त्वा गमेम। प्रत्युवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुहिता दिवः। अपो मही वृण्ते चक्षुंषा। तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरीं। उदुस्रियाः सचते सूर्यः। सचा उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु ई हवामहे। स नंः सविता सुंवथ्सनिम्। पृष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यं चित्रम्। अदितिर्न उरुष्यतु मुहीमू षु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वर्ष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुर्वः। अनुनोऽद्यानुमितिरन्विदंनुमते त्वम्। ह्व्यवाह् इं स्विष्टम्॥२६॥

आ्युत्यंगम्थ्स्वंष्टम्॥•

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामितिं। स एतमग्नये कृत्तिकाभ्यः पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै सौंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां ह वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव ह वा एष मंनुष्यांणां भवति। य पुतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिंकाभ्यः स्वाहां। अम्बायै स्वाहां दुलायै स्वाहाँ। नितृत्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहां। मेघयंन्त्ये स्वाहां वर्षयंन्त्यै स्वाहाँ। चुपुणीकांयै स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्। तासा रे रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेनया गच्छेयेति। स एतं प्रजापंतये रोहिण्यै चुरुं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावर्तत। समेनयागच्छत। उपं ह वा एनं प्रियमावर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं ह्विषा यजते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीनाः राज्यम्भिजंयेयमिति। स एतः सोमाय मृगशीर्षायं श्यामाकं च्रं पर्यस् निरंवपत्। ततो वै स ओषंधीनाः राज्यम्भ्यंजयत्। समानानाः ह वै राज्यम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमाय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेति॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतः रुद्रायाऽऽद्राये प्रैय्यंङ्गवं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो व स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु व भंवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽऽद्राये स्वाहां। पिन्वंमानाये स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमेलोमकोऽऽसीत्। साऽकोमयत। ओषंधीभिवनस्पतिभिः प्रजायेयेति। सैतमदित्यै पुनर्वसुभ्यां च्रं निरंवपत्। ततो वा इयमोषंधीभिवंनस्पतिंभिः प्राजांयत। प्रजांयते हु वै प्रजयां पृश्विः। य पृतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्ये स्वाहा पुनंवंसुभ्याम्। स्वाहा भूत्ये स्वाहा प्रजांत्ये स्वाहेति॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्चसी स्यामिति। स एतं बृह्स्पतेये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यासे निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्चस्यंभवत्। ब्रह्मवर्चसी हु वै भवति। य एतेनं हृविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं करम्भं निरंवपन्। तानेताभिरेव देवतांभिरुपानयन्। पृताभिर्ह् वे देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सर्पेभ्यः स्वाहाँऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहाँ। दुन्दुशूकेंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋंध्रुयामेति। त एतं पितृभ्यो मुघाभ्यः पुरोडाशु षद्वंपालं निरंवपन्। ततो वै ते पितृलोक आधुवन्। पितृलोके हु वा ऋंध्रोति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां मुघाभ्यः। स्वाहांऽनुघाभ्यः स्वाहांऽगुदाभ्यः। स्वाहां-ऽरुन्धुतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतमंर्यम्णे फल्गुनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुनीभ्या इं स्वाहाँ। पृशुभ्यः स्वाहेति॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना इस्यामिति। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगाय स्वाहा फल्गुंनीभ्या इस्वाहां। श्रेष्ठांय स्वाहेतिं॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामिति। स एत र संवित्रे हस्तांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रीहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहा हस्तांय। स्वाहां

दद्ते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहेतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विन्देयेति। स एतं त्वष्ट्रं चित्रायें पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र ह वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्राये स्वाहां। चैत्राय स्वाहां प्रजाये स्वाहेति॥३८॥ वायुर्वा अंकामयत। कामचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमिति। स एतद्वायवे निष्टाये गृष्ट्ये दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामचारं ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं।

लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्ठ्यांये स्वाहाँ। कामचारांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठमं देवानांमभिजंयेवेतिं। तावेतिमेन्द्राग्निभ्यां विशाखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रेष्ठमं देवानांमभ्यंजयताम्। श्रेष्ठमं हु वे संमानानांमभि जंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याः स्वाह्य विशांखाभ्याः स्वाहां। श्रेष्ठांय स्वाह्यऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४०॥

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी। काम आज्यम्। कामेनेव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम उपनमति। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्य स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेति॥४१॥ अकि पश्चंदश प्रजापंतिः पोडंश सोम एकांदश रुद्रो दश्कींकांदश बृह्स्पतिर्दशं देवासुरा नवं

पितर् एकांदशार्यमा भगो दशं दश सिवता चतुर्दश् त्वष्टां वायुरिंन्द्राग्नी दशं दशाथैतत्पौर्णमास्या

अष्टो पश्चंदश॥——[४]

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेय ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्यैष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेयमितिं। स एतमिन्द्रांय ज्येष्ठायें पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रीहीणाम्। ततो वै स ज्यैष्ठमं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्यैष्ठमं हु वै संमानानांम्भिजंयति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहाँ ज्येष्ठायै स्वाहाँ। ज्यैष्ठमांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विन्देयेतिं। स एतं प्रजापंतये मूलांय चुरुं निरंवपत्। ततो वै स मूलं प्रजामंविन्दत। मूलई हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहां। प्रजाये स्वाहेतिं॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। स्मुद्रं कार्मम्भिजंयेमेतिं। ता एतम्ज्योऽषाढाभ्यंश्चरुं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रं कार्मम्भ्यंजयन्। स्मुद्र ह वै कार्मम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अज्ञ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। स्मुद्राय स्वाहा कार्माय स्वाहां। अभिजित्ये स्वाहेतिं॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपूज्ययं जंयेमेतिं। त एतं विश्वेभ्यो देवेभ्योऽषाढाभ्यंश्वरं निरंवपन्। ततो वै तें- ऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपज्य्यः हु वै जंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपज्य्याय स्वाहा जित्यै स्वाहेति॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेयमितिं। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजितें च्रुं निरंवपत्। ततो वै तद्बंह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक॰ हु वा अभिजंयति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४७॥

विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्यु श्रोक शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदितिं। स एतं विष्णंवे श्रोणायें पुरोडाशं त्रिकपालं निरंवपत्। ततो वै स पुण्यु श्रोकंमशृणुत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य ह वै श्लोक शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां श्रोणाये स्वाहां। श्लोकांय स्वाहां श्रुताय स्वाहेतिं॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेति। त एतं वसुंभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं हु वै संमानानां पर्येति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुंभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहां। अग्रांय स्वाहा परींत्ये स्वाहेतिं॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामितिं। स एतं वर्रुणाय श्तिभिषजे भेषजेभ्यः पुरोडाशं दर्शकपालं निर्रवपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वै स दृढोऽशिंथिलो-ऽभवत्। दृढो हु वा अशिंथिलो भवति। य एतेनं हृविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां श्तिभिषजे स्वाहां। भेषजेभ्यः स्वाहेतिं॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेजस्वी ब्रंह्मवर्च्सी स्यामिति। स एतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स तेजस्वी ब्रंह्मवर्चस्यंभवत्। तेजस्वी ह् वै ब्रंह्मवर्च्सी भंवति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। तेजंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्च्साय स्वाहेति॥५१॥

अहिर्वे बुधियोऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहंये बुधियाय प्रोष्ठपदेभ्यः पुरोडाशं भूमिकपालं निरंवपत्। ततो वै स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा॰ हु वै प्रतिष्ठां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुधियांय स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एतं पूष्णे रेवत्ये चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वै भंवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्ये स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥५३॥

अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशं द्विकपालं निरंवपताम्। ततो व तौ श्रोत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी ह वा अबंधिरो भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याङ् स्वाहाँऽश्वयुग्भ्याङ् स्वाहाँ। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्ये स्वाहेतिं॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणा र राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतं यमायांपुभरंणीभ्यश्चरुं निरंपवत्। ततो वै स पितृणा र राज्यम्भ्यंजयत्। समानाना १ ह वै राज्यम्भि जंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽप्भरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदंमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम आज्यम्। कामेनैव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् सकाम् उपनमति। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्यांयै स्वाहा कामांय स्वाहाऽऽगंत्यै स्वाहेतिं॥५६॥

मित्र इन्द्रेः प्रजापंतिर्दशं द्शाप् एकांदश् विश्वे ब्रह्म दर्शदश् विष्णुस्रयोंदश् वसंव् इन्द्रोऽजोऽहिर्वे बुप्नियंः पूषाऽश्विनौ यमो दर्श द्शाथैतदमावास्याया अष्टौ पश्चंदश॥——[५]

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्सं-वथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य स्र सलोकतांमाप्नुयामिति। स एतं चन्द्रमंसे प्रतीदृश्यांये पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वे सोंऽहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्यंवथ्सर-मास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोत्। अहोरात्रान् ह वा अंधमासान्मासांनृतून्थ्यंवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहाँ प्रतीदृश्यांयै स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेँभ्यः स्वाहुर्तुभ्यः स्वाहाँ। संवृथ्सराय स्वाहेतिं॥५७॥

अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येविह।
न नांवहोरात्रे आंप्रुयातामिति। ते एतमहोरात्राभ्यां च्रं
निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्लानां च कृष्णानां च।
स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायं च कृष्णायं च। ततो व ते अत्यंहोरात्रे
अंमुच्येते। नैनं अहोरात्रे आंप्रुताम्। अति ह वा अंहोरात्रे
मुंच्यते। नैनंमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं
चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रिये स्वाहां।
अतिमुक्तये स्वाहेति॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामिति। सैतमुषसं चुरुं निरंवपत्। ततो वे सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो हु वे संमानाना र सुभगों भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्युंष्ट्रो स्वाहां। व्यूषुष्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्युंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥ अथैतस्मै नक्षंत्राय च्रं निर्वपित। यथा त्वं देवानामिसं। एवम्हं मंनुष्यांणां भूयासमिति। यथां हु वा एतदेवानाम्। एव॰ हु वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहां। उद्यते स्वाहोदिताय स्वाहां। हरंसे स्वाहा भरंसे स्वाहां। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहां। तपंसे स्वाहां ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामिति। स एत एत ए सूर्याय नक्षंत्रेभ्यश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा ऽभंवत्। प्रतिष्ठा ह वै संमानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सो ऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेति॥६१॥

अथैतमदिंत्यै च्रुं निर्वपिति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदित्यै स्वाहाँ प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६२॥

अथैतं विष्णंवे च्रुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्तृतः प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां प्रथमः प्रश्नः (अष्टकम् ३)

युज्ञाय स्वाहाँ। प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६३॥

चन्द्रमाः पश्चंदशाहोरात्रे सप्तदंशोषा एकांद्रशाथैतस्मै नक्षंत्राय त्रयोंदश सूर्यो दशाथैतमदिंत्यै पश्चाथैतं विष्णंवे षदथ्सप्त (स्विताऽऽशूनां ब्रीहीणामिन्द्रों महाब्रीहीणामिन्द्रेः कृष्णानां ब्रीहीणामहोरात्रे द्वयानां ब्रीहीणाम्। पितरः पद्गंपालर सविता द्वादंशकपालिमन्द्राग्नी एकांदशकपालुमिन्द्र एकांदशकपालुमिन्द्रो दर्शकपालं विष्णुंस्रिकपालमहिर्भूमिकपालमृश्विनौं द्विकपालं चुन्द्रमाः पश्चंदशकपालमुग्निस्त्वष्टा वसंवोऽष्टाकंपालम्न्यत्रं चुरुम्। रुद्रौंऽर्यमा पूषा पंशुमान्थस्या ् सोमों रुद्रो बृह्स्पितः पर्यसि वायुः पयः सोमों वायुरिन्द्राग्नी मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं युमोंऽभिजित्यै त्वष्टां प्रजापंतिः प्रजायै पौर्णमास्या अमावास्यांया अगत्यै विश्वे जित्यां अश्विनौ श्रुत्यैं। ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं वायुः स पुतदापुस्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त मेति त पुतन्निरंवपन्। आपोऽकामयन्त मेति ता पुतन्निरंवपन्। इन्द्राग्नी अश्विनांवकामयेतां वेति तावेतन्निरंवपताम्। अहोरात्रे वा अंकामयेतामिति ते पुतन्निरंवपताम्। अन्यत्रांकामयुतेति स पुतन्निरंवपत्। इन्द्राग्नी श्रैष्ठामिन्द्रो ज्यैष्ठ्यमिन्द्रों दृढः। अहिः सूर्योऽदिंत्यै विष्णंवे प्रतिष्ठायैं। सोमों युमः संमानानाम्। अग्निर्नो रीरिषदन्यत्रं रीरिषः॥)॥_____ -[६]

अग्निर्न ऋष्यास्म् नवोनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः षट्॥६॥ अग्निर्नस्तन्नों वायुरिहेर्बुप्नियं ऋक्षा वा इयमथैतत्पौर्णमास्या अजो वा एकंपाथ्सूर्यस्त्रिषंष्टिः॥६३॥

अुग्निर्नः पातु प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्या-ऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पर्णोऽभवत्। तत्पर्णस्यं पर्णत्वम्। ब्रह्म वै पर्णः। यत्पर्णशाखयां वथ्सानपाकरोति। ब्रह्मणैवैनानपाकरोति। गायत्रो वै पूर्णः। गायत्राः पुशवंः॥१॥ तस्मात्रीणित्रीणि पर्णस्यं पलाशानिं। त्रिपदां गायत्री। यत्पंणिशाखया गाः प्राप्यंति। स्वयैवैनां देवतंया प्रापंयति। यं कामयेतापृशुः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपुशुरेव भंवति। यं कामयेंत पशुमान्थ्स्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवैनं करोति॥२॥ यत्प्राचीमा हरेंत्। देवलोकमभि जंयेत्। यदुदींचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हरिति। उभयौर्लोकयोरिभ-जिंत्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्यांह। इषंमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। वायवः स्थेत्याह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्येक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै प्शवः॥३॥ वायवं एवैनान्परिं ददाति। प्र वा एनानेतदा करोति।

यदाहं। वायवः स्थेत्यंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव प्शूनुपं ह्वयते। देवो वंः सिवता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण् इत्यांह। यज्ञो हि श्रेष्ठंतम् कर्म। तस्मादेवमांह। आप्यायध्वमित्रया देवभागिमत्यांह॥४॥

वृथ्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवेना इन्द्रायाप्यांययित। ऊर्जस्वतीः पयंस्वतीरित्यांह। ऊर्ज्र् हि पयंः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयक्षमा इत्यांह प्रजात्ये। मा वंः स्तेन ईशत माऽघश्र स् इत्यांह गुप्त्ये। रुद्रस्यं हेतिः परि वो वृण्कित्यांह। रुद्रादेवेनांस्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बृह्वीरित्यांह। ध्रुवा एवास्मिन्बृह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृश्न्याहीत्यांह। पृश्न्नां गोपीथायं। तस्माँथ्सायं पृशव् उपंसुमावंर्तन्ते। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव् निदंधाति। उपरीव् हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्ये॥६॥

पुशर्वः करोति पुशर्वो देवभागमित्यांह करोति नर्वं च॥______[१]

देवस्यं त्वा सिवतः प्रस्व इत्यंश्वप्र्शुमादते प्रस्ति। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्ताम्। पूष्णो हस्ताभ्यामित्यांह यत्यै। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हिरच्छैति। प्राजापृत्यो वा अश्वः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहिर्सायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान पृव र्यिं दंधाति। प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां ब्र्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छेंति। मनुंना कृता स्वधया वित्रष्टेत्यांह। मानवी हि पर्शुंः स्वधाकृता॥८॥

त आवंहन्ति क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवाश्सो वै क्वयंः। यज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव यज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कृतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवति। देवेभ्यो जुष्टंमिह बर्हिरासद इत्यांह। बर्हिषः समृंद्धौ। कर्मणोऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चे। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा

वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं केरिष्यामीति। एवमेव तदेध्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बर्हिदांति। आत्मनोऽहि ईसायै। यावंतः स्तम्बान्पंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छि इष्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एक ई स्तम्बं परिदिशेत्। तर सर्वं दायात्॥१०॥

युजस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धम्सीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं पृवैनंत्करोति। मा त्वा-ऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि स्सायै। पर्व ते राध्यासमित्याहध्यैं। आच्छेत्ता ते मा रिषमित्यांह। नास्याऽऽत्मनों मीयते। य पृवं वेदं॥११॥

देवंबर्हिः शृतवंल्श्ं विरोहेत्यांह। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजानां प्रजननाय। सहस्रंवल्शा वि वय र रुहेमेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिष्ठित्यै। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीं लुंनोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। सुसम्भृतां त्वा सम्भरामीत्यांह। ब्रह्मणेवेन्थ्सम्भरति॥१२॥

अदित्यै रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनुद्रास्नां करोति। इन्द्राण्यै सन्नहंनुमित्यांह। इन्द्राणी वा अग्रे देवतांना समंनह्यत। साऽऽभ्रोत्। ऋख्यै सन्नह्यति। प्रजा वै बुर्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्माथ्स्रावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थिं ग्रंशात्वित्यांह। पृष्टिंमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रंसायै। पृश्चात्प्राश्चमुपंगूहित। पृश्चाद्वे प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृह्स्पतेंर्मूर्भ्ना हंरामीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृहस्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मंणैवेनंद्धरित। उर्वन्तिरिक्षमिन्वहीत्यांह् गत्यै। देवङ्गमम्सीत्यांह। देवानेवेनंद्रमयित। अनेधः सादयित। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रि॥१५॥

स्योनित्वायं स्वधाकृताऽसीत्यांह दायाद्वेदं भरति जायन्ते बृह्स्पतिः सम्ध्रौ॥———[२]

पूर्वेद्युरिध्माब्र्हिः करोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति। प्रजापंतिर्य्ज्ञमंसृजत। तस्योखे अंस्रश्सेताम्। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यथ्सांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे उपंदधात्यप्रस्नश्साय। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। मात्रिश्वंनो घर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तिरिक्षं वै मांतिरिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्यंषा पृथिव्याश्च सम्भृंता। यदुखा। तस्मांदेवमांह। विश्वधांया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिर्वे विश्वधांयाः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। द॰हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यैं॥१७॥

वसूनां प्वित्रंम्सीत्यांह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा पृतद्भांगधेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं पृवैनंत्करोति। शृतधार सहस्रंधारमित्यांह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वृत्वायं। त्रिवृत्पंलाशशाखायां दर्भमयं भवति। त्रिवृद्वै प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजंमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्पवित्रंं दुर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्रांणापानयां रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यक्ष ह्यंतदहंः। अत्रं वै चन्द्रमाः। अत्रं प्राणाः। उभयमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥ तस्मांदय सर्वतः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रपस इत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। हुविषोऽस्कन्दाय। न हि हुत इ स्वाहांकृत इ स्कन्दिति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्ये विप्रुषो भागधेयम्। अग्नये बृह्ते नाकायेत्याह। नाकंमेवाग्निं भागधेयेन समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्याह। द्यावांपृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयति॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपां चैवौषंधीनां च रस् क्ष्मा संस्मृजिति। अथो ओषंधीष्वेव पृश्न्म्प्रतिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं यच्छिति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंत्रास्ते। धारयंत्रा इव हि दुहन्तिं। कामधुक्ष इत्याहातृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान् यजमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भृद्रमेवासां कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वकर्मेत्यांह। इयं वे विश्वायुंः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकंर्मा। इमानेवेताभिलींकान् यंथापूर्वं दुंहे। अथो यथाँ प्रदात्रे पुण्यंमाशास्ते। एवमेवेनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युत्रीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पृशून्दुं-हन्ति॥२२॥ यथादेवतमेव प्रसौति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तराः। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वै दांरुपात्रम्। यद्दांरुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों हविरिति वाचं विसृंजते।

यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्वांहः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी॰िषं। नेत इंतः पुरोडाश॰ ह्विषो यामोऽस्तीतिं। काममेव दारुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥२४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तद्धि नोत्पुनन्ति। यदा खलु वै प्वित्रंमत्येति। अथ् तद्धविरिति। सम्पृंच्यध्वमृतावरीरित्याह। अपां चैवौषंधीनां च रस्र सर् सृंजति। तस्मांद्पां चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मन्द्रा धनंस्य सात्य इत्यांह। पृष्टिंमेव यजनाने दधाति। सोमेन त्वातंन्च्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमंमेवैनंत्करोति। यो वै सोमं भक्षयित्वा। संवथ्सर १ सोमं न पिबंति। पुनुर्भक्ष्यों ऽस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वै साँत्राय्यम्। य एवं विद्वान्थ्साँत्राय्यं पिबंति। अपुनर्भक्ष्यौऽस्य सोमपीथो भेवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयेनापिद्ध्यात्। पितृदेवत्य ई स्यात्॥२६॥

अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेणं वाऽपिं दधाति। तिद्धं सदेवम्। उद्न्वद्भवति। आपो वे रक्षोघ्नीः। रक्षंसामपहत्ये। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वेत्यांह। यज्ञो वे विष्णुः। यज्ञायैवैनददंस्तं करोति। विष्णों हृव्य रक्षंस्वेत्यांह् गृष्ट्यैं। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्यै॥२७॥

असीत्यांह् धृत्ये यर्जमाने दधात्यर्जामित्वाय स्थापयित दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह स्याथ्सादयित पश्चं च॥————[3]

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शक्त्यैं। यज्ञस्य वै सन्तंतिमन् प्रजाः पृशवो यजंमानस्य सन्तांयन्ते। यज्ञस्य विच्छितिमन् प्रजाः पृशवो यजंमानस्य विच्छिंद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरिस यज्ञस्यं त्वा सन्तंत्ये स्तृणामि सन्तंत्ये त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयाथ्सन्तंनोति। यजंमानस्य प्रजाये पशूनाः सन्तंत्यै। अपः प्रणंयति। श्रृद्धा वा आपंः। श्रृद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। युज्ञो वा आपंः॥२८॥

युज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। वज्रो वा आपः। वज्रंमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। आपो वै रंक्षोघ्नीः। रक्षंसामपहत्ये। अपः प्रणंयति। आपो वै देवानां प्रियं धामं। देवानांमेव प्रियं धामं प्रणीय प्रचंरति॥२९॥

अपः प्रणयिति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां एवारभ्यं प्रणीय प्रचरित। वेषाय त्वेत्याह। वेषाय ह्यंनदादत्ते। प्रत्युष्ट रक्षः प्रत्युष्टा अरातय इत्याह। रक्षंसामपंहत्ये। धूरसीत्याह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजंमानं च प्रदेहेत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यजंमानस्य चाप्रदाहाय। धूर्व तं योंस्मान्धूर्वित् तं धूर्व यं व्यं धूर्वाम् इत्याह। द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव धूर्वित। यश्चेनं धूर्वित। तावुभौ शुचाऽप्यति। त्वं देवानांमिस् सिस्तिमं पप्रितमं जुष्टेतमं विह्नितमं देवहूर्तम्मित्यांह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥

अहुंतमसि हविर्धानुमित्याहानांत्यै। द १ हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यैं। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेर्मा संविक्था मा त्वां हिश्सिष्मित्याहाहिश्सायै। यद्वै किं च वातो नाभि वाति। तथ्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवांरुणमेवैनंत्करोति। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह॥३२॥ अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यैं। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं एवैनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यजुषा। त्रयं इमे लोकाः। पुषां लोकानामाध्यै। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपंरिमितमेवावं रुन्धे। स एवमेवानुंपूर्व १ हवी १ षि निर्वपति॥ ३३॥

इदं देवानांमिदम् नः सहत्यांह् व्यावृंत्यै। स्फात्यै त्वा नारांत्या इत्यांह् गृत्यैं। तमंसीव वा एषोंऽन्तश्चंरति। यः पंरीणिहं। सुवंरिभ वि ख्यंषं वैश्वान्रं ज्योतिरित्यांह। सुवंरेवाभि वि पंश्यति वैश्वान्रं ज्योतिः। द्यावांपृथिवी ह्विषं गृहीत उदंवेपेताम्। दः हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्थत्यैं। उवंन्तिरंश्वमिन्वहीत्यांह गत्यैं।

अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्याह। इयं वा अदितिः। अस्या पुवैनंदुपस्थे सादयति। अग्ने हृव्य रक्ष्यस्वेत्यांह् गृत्यै॥३४॥

युज्ञो वा आपो धामं प्रणीय प्रचंरत्यतीयादेतद्वाहुभ्यामित्यांह हुवी १ षि निर्वंपति गत्यै चत्वारि

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यिज्ञय् सदेवमासीत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्भैर्प उंत्पुनाति। या एव मेध्यां यिज्ञयाः सदेवा आपः। ताभिरेवैना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिव्तोत्पंनात्वित्यांह। सिव्तृप्रंसूत प्वैना उत्पंनाति। अच्छिंद्रेण प्वित्रेणेत्यांह। असौ वा आंदित्योऽच्छिंद्रं प्वित्रम्। तेनैवैना उत्पंनाति। वसोः सूर्यस्य रिष्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वसंवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥

प्राणैरेव प्राणान्थ्सं पृंणिक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदितिं। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रें युज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव युज्ञं नंयन्ति। अग्रें युज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्याह। वृत्र १ हिन्ष्यित्रिन्द्र आपो वव्रे। आपो हेन्द्रं वित्रे। संज्ञामेवासामेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्याह। तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्रये वो जुष्टं प्रोक्षाम्यग्नीषोमाभ्यामित्याह। यथादेवतमेवैनान्त्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्ये। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्युत्वायं। अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अर्रातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्ये। अदित्यास्त्वगुसीत्यांह। इयं वा अदितिः॥३९॥

अस्या एवैन्त्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंध्यवहन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। हविषोऽस्कंन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमिस वानस्पृत्यमित्यांह। अधिषवंण-मेवैनंत्करोति। प्रति त्वाऽदिंत्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्तृनूरसीत्यांह। अग्नेवां एषा तुनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जनमित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनामुश्जन्तिं। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववींतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥

देवतांभिरेवैन्थ्समंध्यति। अद्विरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावाणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों हृव्य स्पृशिमं शिमुष्वेत्यांह शान्त्यैं। हिविष्कुदेहीत्यांह। य एव देवाना है हिव्ष्कृतंः। तान् ह्वयित। त्रिर्ह्वयित। त्रिषंत्या हि देवाः। इषुमावदोर्जुमावदेत्यांह॥४२॥

इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। द्युमद्वंदत व्यश् संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्यै। मनोः श्रृद्धादेवस्य यजंमानस्या-सुर्घ्री वाक्। यज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुरा यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्वदंतामुपाश्चेण्वन्। ते पराभवन्। तस्माथ्स्वानां मध्येऽवसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानां- मुद्धदंतामुपशृण्वन्तिं। ते परां भवन्ति। उच्चैः समाहंन्त् वा आंह विजित्यै॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृद्धमस् प्रितं त्वा वर्षवृद्धं वेत्त्वित्यांह। वर्षवृद्धा वा ओषंधयः। वर्षवृद्धा इषीकाः समृद्धौ। यज्ञ रक्षाङ्स्यनु प्राविंशन्। तान्यस्रा पृशुभ्यों निरवांदयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूत्र रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥४४॥

रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षार्श्स निरवंदयते। अप उपस्पृशित मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविनक्तित्यांह। पवित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्ं। अन्तरिक्षादिव वा एते प्रस्कंन्दिन्ति। ये शूर्पात्। देवो वंः सिवृता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह् प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्कंन्दाय। त्रिष्फलीकंर्त्वा आह। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं॥४५॥

अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगुसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनुत्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेधुमुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंद्भे। ह्विषोऽस्कन्दाय। द्यावांपृथिवी सहास्तांम्। ते शंम्यामात्रमेकमहर्व्वेता श्रम्यामात्रमेकमहं। दिवः स्कम्भिनिरंसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योवीत्यें। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रति त्वा दिवः स्कम्भिनिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योविद्यांह। द्यावांपृथिव्योविद्यांह। द्यावांपृथिव्योविद्यांह।

धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रति त्वा पर्वतिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योधृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवतः प्रंसव इत्यांह् प्रसूत्ये। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्त्यैं। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनानिधं वपति। धान्यमिस धिनुहि देवानित्यांह। पृतस्य यज्ञंषो वीर्यंण॥४८॥

याव्देकां देवतां कामयंते याव्देकां। ताव्दाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्तिं। यत्तावंदेव स्यात्। यावंज्जुहोतिं। प्राणायं त्वाऽपानाय त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्केन्दन्ति। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्यै। ह्विषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनि कुरुतादित्यांह मध्यत्वायं॥४९॥

निलायत् विधृत्यै वीर्येण स्कन्दन्ति चत्वारिं च॥———[६]

धृष्टिंरसि ब्रह्मं युच्छेत्यांहु धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिहि निष्क्रव्याद से सेधा देवयजं वहेत्यांह। य एवामात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्नौ कृपालुमुपंदधाति। निर्दंग्ध्र स्थो निर्दंग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षा स्योव निर्दंहित। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिंधत्ते। अङ्गांरमधिं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुर्ष्मिं होके ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदे। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं दश्हित। धूर्त्रमंस्युन्तरिक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तरिक्षमेवैतेनं दश्हित। धरुणंमसि दिवं द १ हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं द १ हित॥ ५१॥

धर्मास् दिशों हु हत्यांह। दिशं पृवैतेनं ह १ हित। इमाने वैतेर्लीकान्ह १ हित। ह १ हंन्ते ऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्मिः। य पृवं वेदं। त्रीण्यग्नें कृपालान्युपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। पृषां लोकानामास्यैं। एक् मग्नें कृपालमुपं दधाति। एकं वा अग्नें कपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥ ५२॥

अथ द्वे। अथ त्रीणिं। अथं चृत्वारिं। अथाष्टौ। तस्मादृष्टाकंपालुं पुरुषस्य शिरंः। यदेवं कृपालाँन्युपृद्धांति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिक् सङ्स्कंरोति। आत्मानमेव तथ्सङ्स्कंरोति। तर सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुष्मिँ ह्योके उनु परैति। यद्ष्यावृंपदधांति। गायत्रिया तथ्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥

जगंत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ श्लोकानेनुपूर्वं दिशो विधृत्ये द १ हित। अथा ८ ऽयुंः प्राणान्यजां पृशून् यजमाने दधाति। सृजातानंस्मा अभितो बहुलान्कंरोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। भृगूंणामङ्गिरसां तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः सङ्स्थिते। यानि घर्मे कपालांन्युपचिन्वन्तिं वेधस इति चतुंष्पदय्चां वि मुश्चिति। चतुंष्पादः पृशवः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥५५॥

वर्त्यति दिवमेवैतेनं द १ हित सम्भविति त १ स इस्कृतमात्मानं द्वादेश स इस्थिते त्रीणि

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यांह् प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह् यत्यै। सं वंपामीत्यांह। यथादेवतमेवैनांनि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत समोषंधयो रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥

जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥
तस्मांदेवमांह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मधुंमतीर्मधुंमतीभिः
सृज्यध्वमित्यांह। आपो वै रेवतींः। पृश्वो जगंतीः।
ओषंधयो मधुंमतीः। आप ओषंधीः पृशून्। तानेवास्मां
एक्धा सृ॰सृज्यं। मधुंमतः करोति। अन्धः पिर प्रजांताः
स्थ समुद्धिः पृंच्यध्वमितिं पूर्याष्णांवयति। यथा सुवृष्ट
इमामंनुविसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्महयंन्ति। ताहगेव तत्। जनंयत्ये त्वा संयौमीत्यांह। प्रजा एवेतेनं दाधार। अग्नयें त्वाऽग्नीषोमांभ्यामित्यांह् व्यावृत्त्ये। मुखस्य शिरो-ऽसीत्यांह। युज्ञो वे मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुंरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८॥

घर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रंथस्वोरु तें युज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्विमिः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन्ध् सर्तनुं करोति। अथाऽऽप आनीय परिमार्ष्टि। मा्ध्स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मांत्त्वचा मा्ध्सं छन्नम्। घर्मो वा एषो-ऽशांन्तः॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशः। स ईश्वरो यजमान श्रुचा प्रदहः। पर्यप्रि करोति। प्र्शमेवैनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यप्रि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्ये। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्याह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा ईस्य-

जिघा १ सन्। दिवि नाको नामाग्री रेक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा इस्यपांहन्। देवस्त्वां सिवता श्रंपयत्वित्यांह। सिवतृ प्रमूत एवे नई श्रपयति। वर्षिष्ठे अधि नाक् इत्यांह। रक्षंसामपहत्ये। अग्निस्ते तुनुवं माऽतिंधागित्याहा-ऽनंतिदाहाय। अग्ने ह्व्य १ रेक्षुस्वेत्यांहु गृष्ट्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृंजते। यज्ञमेव ह्वी इष्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यें करोति। मुस्तिष्को वै पुरोडाशः। तं यन्नाभिं वासयेंत्। आविर्मस्तिष्कः स्यात्। अभिवांसयित। तस्माद्गुहां मस्तिष्कः। भरमनाऽभिवांसयित। तस्मान्मा इसेनास्थिं छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयति। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखेलतिभावुको भवति। य एवं वेदं। पृशोर्वै प्रतिमा पुरोडाशंः। स नायुजुष्कंमिभवास्यंः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्यस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः पृशवंः। प्राणैरेव पृशून्थ्सम्पृंणक्ति। न प्रमायुंका भवन्ति। यजंमानो वै पुंरोडाशंः। प्रजा पृशवः पुरीषम्। यदेवमंभिवासयंति। यजंमानमेव प्रजयां पृशुभिः समंध्यति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रंक्ष्यामह् इतिं। सौऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनूः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जनियष्यामि। यस्मिन्मृक्ष्यध्व इति। ते देवा अग्नौ तुनूः सन्त्रंदधत। तस्मादाहुः। अग्निः सर्वां देवता इति। सोऽङ्गारेणाऽऽपः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंम्भ्यं-पातयत्॥६५॥

ततौँ द्वितोंऽजायत। स तृतीयंम्भ्यंपातयत्। ततिस्रितों-ऽजायत। यद्द्योऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजांयन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत् सूर्यांभ्युदिते। सूर्यांभ्युदितः सूर्याभिनिमुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिम्रुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणि। वीर्हा ब्रंह्महणि। तद्वंह्महणुं नात्यंच्यवत। अन्तर्वेदि निनयत्यवंरुद्धै। उल्मुंकेनाभि गृंह्णाति शृत्तवायं। शृतकांमा इव हि देवाः॥६७॥

अन्या जिन्वन्त्यनु विसृत्यैवमाहाशाँन्त आह् गुर्स्ये छुन्नं ब्रह्माँब्रवीद्वितीयंमुभ्यंपातयृथ्सूर्यांभिनिम्रुक्ते

देवाः॥———[८]

देवस्यं त्वा सवितुः प्रंसव इति स्फामादंत्ते प्रसूत्यै।

अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः शततेजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेजा इत्यांह। तेजो वे वायुः॥६८॥ तेजं एवास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आंसीत्। सोऽबिभेत्। यज्ञेनं मा देवा अभिभंविष्यन्तीतिं। स पृंथिवीमभ्यंवमीत्। सा मध्याऽभंवत्। अथो यदिन्द्रों

मध्यांमेवेनां देवयजंनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रुजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्श्से वै ब्रुजो गोस्थानंः। छन्दार्श्स्येवास्मैं ब्रुजं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते

वृत्रमहर्न्। तस्य लोहितं पृथिवीमन् व्यंधावत्। सा

मेध्याऽभंवत्। पृथिवि देवयजनीत्यांह॥ ६९॥

द्यौरित्यांह। वृष्टि्वे द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। ब्धान देव सवितः पर्मस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषो। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभौ विभागि पर्मस्यां परावितं शतेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिम्नत्त्वौ। अररुर्वे नामांसुर आंसीत्। स पृथिव्यामुपंसुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतो-ऽररुंः पृथिव्या इति पृथिव्या अपाँघ्रन्। भ्रातृंव्यो वा अररुंः। अपंहतोऽररुंः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृं व्यमेव पृथिव्या अपहिन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा अयिमृतः पतिष्यतीतिं। तम्रुरुस्ते दिवं माऽस्कानितिं दिवः पर्यं बाधन्त। भ्रातृं व्यो वा अरुरुः। अरुरुस्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृं व्यमेव दिवः परिबाधते। स्तम्बयुजुरहंरित। पृथिव्या एव भ्रातृं व्यमपहिन्त। द्वितीय हरित॥ ७२॥

अन्तरिक्षादेवैन्मपंहन्ति। तृतीय हरित। दिव एवैन्मपंहन्ति। तूष्णीं चंतुर्थ हरिति। अपंरिमितादेवैन्मपं-हन्ति। असुंराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तावदेवानांम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीतिं॥७३॥

क्यंत्रो दास्यथेतिं। यावंथ्स्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तरतः। तेंऽग्निना प्राश्चोऽजयन्। वसुंभिदिक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यश्चेः। आदित्यैरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्ति॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंच्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूँत्ये। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषितः हि कर्म क्रियतें। पृथिच्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंक्रामताम्। प्राचीनमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदीचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवैनांं देवयर्जनीं करोति॥७५॥

प्राश्चौ वेद्यश्सावुन्नयिति। आह्वनीयंस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथो मिथुन्त्वायं। उद्धन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपहन्ति। उद्धन्ति। तस्मादोषंधयः परांभवन्ति॥७६॥

मूर्लं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूर्लं छिनत्ति। मूलुं वा

अंतितिष्ठद्रक्षाङ्स्यनूतिपंपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्युः। स्फोनं छिनत्ति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षाङ्स्यपंहन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्माँचतुरङ्गुलं खेयाँ। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायैं खनति। यज्ञंमानमेव प्रंतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयज्ञंनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरींषवतीं करोति। प्रजा वै पृशवः पुरींषम्। प्रजयैवैनं पृश्विः पुरींषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। पृतावती वै पृथिवी। यावती वेदिः। तस्यां पृतावत एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृतसदंनमस्यृतश्रीरसीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥

ऋूरिमंव वा पुतत्कंरोति। यद्वेदिं करोति। धा अंसि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्याह। उर्वीमेवेनां वस्वीं करोति। पुरा ऋूरस्यं

खनत्यकरेतत्कृत्वा रंक्षोृघ्नीरंपंयति॥

विसृपों विरिष्णिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामैरेयं चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयजंनीं कृत्वा॥८०॥

यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेरंयति। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त इत्याहानुंख्यात्ये। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माबर्हिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंड्डि। पत्नी क् सन्नंह्य। आज्येंनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयति। आपो वै रंक्षोघ्नीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्ये। स्फास्य वर्त्मन्थ्सादयित। युज्ञस्य सन्तंत्ये। उवाच हासितो दैवलः। एतावंतीवां अमुष्मिं ल्लोक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरिति। तस्माद्धह्वीरासाद्याः। स्फामुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यायेत्। शुचैवैनंमपंयति॥८२॥ व वायुरांह परावतीत्याहाहं द्वितीयर् हर्तितिं परिगृह्वन्तिं देवयर्जनीं करोति भवन्ति

वज्रो वै स्फाः। यद्नवश्चं धारयेत्। वज्जेंऽध्वर्यः क्षंण्वीत। पुरस्तात्तिर्यश्चं धारयति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणेव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्फोनोदीं चश्चाधराचंश्च। स्फोन वा एष वज्रेणास्यै पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्करेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोपधायं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्फ्यं प्रक्षांलयति मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्युङ्गं छिनित्ति। इध्माबुर्हिरुपंसादयित युक्तौ। युज्ञस्यं मिथुन्त्वायं। अथों पुरोरुचंमेवैतां दंधाति। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥

यत्पुरस्तौत्प्रत्यगुपसादयैत्। अन्यत्रोऽऽहुतिपथादिध्मं प्रतिपादयेत्। प्रजा वै बुर्हिः। अपराध्रुयाद्वर्हिषाँ प्रजानां प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयति। आहुतिपृथेने्धमं प्रतिं-पादयति। सम्प्रत्येव ब्रहिषां प्रजानां प्रजनंनुमुपैति। दक्षिणमिध्मम्। उत्तरं बर्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा बर्हिः। प्रजा ह्यांत्मन् उत्तरतरा तीर्थे। ततो मेधंमुप्नीयं। यथादेवतमेवैनत्प्रतिष्ठापयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥८५॥

वृश्चित साद्येदिध्मः पश्च च

तृतीयंस्यां देवस्यांश्वपुर्शुं यो वै पूर्वेद्युः कर्मणे वामिन्द्रों वृत्रमंहुन्थ्सोऽपोऽवंधूत्ं

धृष्टिर्देवस्येत्यांह् सं वंपामि देवस्य स्फामा दंदे वज्रो वै स्फाो दर्श॥१०॥
तृतीयंस्यां यज्ञस्यानंतिरेकाय पवित्रंवत्यध्वर्युं चांधिषवंणमस्यन्तरिक्ष एव रक्षंसामन्तर्हित्यै
द्वौ वाव पुरुषो यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यं पश्चाशींतिः॥८५॥
तृतीयंस्यां यज्ञमानः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युष्ट्र रक्षः प्रत्युष्टा अर्रातय इत्याह। रक्षेसामपहत्ये। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्माष्टि। स्रुवमग्रें। पुमार्सममेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वायं। अर्थ जुहूम्। अथोप्भृतम्। अर्थ प्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥ अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी प्रुवा। इमे वै लोकाः स्रुचंः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिर्वा इमाँ लोकानेनुपूर्वं केल्पयित। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां

पशुभिः। य एवं वेदं। यदिं कामयेत वर्षुंकः पर्जन्यः

स्यादितिं। अग्रतः सम्मृंज्यात्॥२॥
वृष्टिंमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिः।
यदिं कामयेतावंर्षुकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्।
वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आंहुः। अग्रत एवोपिरिष्टाथ्सम्मृंज्यात्। मूलतोऽधस्तांत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको
भवतीतिं॥३॥

प्राचीमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमव ह्यन्नम् ह्यते।

अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। अधस्तांत्प्रतीचींम्। दण्डमुंत्तम्तः। मूलेन् मूलं प्रतिष्ठित्यै। तस्मांदर्बौ प्राश्चुपरिष्टाल्लोमानि। प्रत्यश्चधस्तांत्॥४॥

सुग्ध्येषा। प्राणो वै स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृथ्सव्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्न सम्मार्जनानि। मुख्तो वे प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तन्व स्श्रिभयति। तस्माध्स्रुवमेवाग्रे सम्मार्छि। मुख्तो हि प्राणो-ऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नंमाविश्वति। तौ प्राणापानौ। अव्यर्धकः प्राणापानाभ्यां भवति। य एवं वेदं॥५॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजनंनाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरब्धस्य यज्ञियंस्य कर्मणः सर्विदोहः॥७॥

यद्यंनानि प्शवोंऽभि तिष्ठंयः। न तत्पशुभ्यः कम्। अद्भिर्मांर्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै यज्ञियंस्य कर्मणो-ऽन्यत्राऽऽहुंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता हि तस्मैं प्रतिष्ठां देवाः समभंरन्। यद्द्भिर्मार्जयंति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवनांनि तद्गंमयति॥८॥

प्रति तिष्ठति प्रजयां प्शुभिर्यजंमानः। अथौ स्तम्बस्य वा पृतद्रूपम्। यथ्स्रुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्ब्रशो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे प्रशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो ह वै जंरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नृवदाव्यांसु वा ओषंधीषु प्रशवो रमन्ते॥९॥ न्वदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्प्रियो हु वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्युग्नौ प्रहरंन्ति। तस्मादेतान्युग्नावेव प्रहरंत्। यत्रस्मिन्थ्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यैं। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिचरो वृषां। पृशूनस्माकं मा हि सीः। एतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निस्मार्जनान्युग्नौ प्रहरित। एषा वा एतेषां योनिः। एषा प्रतिष्ठा। स्वामेवेनांनि योनिम्ं। स्वां प्रतिष्ठां गंमयति। प्रति तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥१०॥

वेदस्याग्रई सुख्सुम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पुशवों रमन्ते हि॰सीः षट् चं॥——[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽप्त्तीकंः। न प्रजाः प्रजांयेरन्। पत्र्यन्वांस्ते। यज्ञमेवाकंः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठंन्ती सन्नह्येत। प्रियं ज्ञाति १ रुन्ध्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्येषा वीर्यं करोति॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदेन्दधीत। देवानां पित्रंया समदेन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनो गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवैनां केवंलीं कृत्वा। आशिषा समध्यति। अग्नेरनुंव्रता भूत्वा सन्नंह्ये सुकृताय कमित्यांह। एतद्वै पिन्नंयै व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवेनां व्रतम्पंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योक्रमेव युंते। यम्नवास्ते। तस्यामुष्मिं ह्योके भंवतीति योक्रण। यद्योक्रम्। स योगः। यदास्ते। स क्षेमः॥१३॥

योगक्षेमस्य कृत्यैं। युक्तं क्रियाता आशीः कामें युज्याता इतिं। आशिषः समृद्धै। ग्रन्थिं ग्रंशाति। आशिषं पुवास्यां परिं गृह्णाति। पुमान् वै ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। प्र जांयते प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥१४॥

अथों अर्थो वा एष आत्मनंः। यत्पत्नीं। यज्ञस्य धृत्या अशिथिलं भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वय स्पुपत्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तिर्मिथुनीकंरोति। ऊनेऽतिरिक्तं धीयाता इति प्रजात्ये। महीनां पयोऽस्योषंधीना स् रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचंष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्यांह। आ-मेवैतामा शास्ते॥१५॥

क्रोति व्रतोपनयंनं क्षेमी यजमानः शास्ते॥————[3]

घृतं च वै मध्रं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्वांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मध्रंषि प्रजननमिवास्ति। तस्मान्मध्रंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनैव यज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्यवेंक्षते॥१६॥

मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। यद्वै पत्नीं यज्ञस्यं करोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष यज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्यै। अमेध्यं वा एतत्करोति। यत्पत्यविक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आहुवनीयंम्भ्युद्दंवति। यज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोऽस् तेजोऽनु प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज् आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्धयित। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि रसायै। स्फ्यस्य वर्त्मन्थ्सादयित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्याह। यथायजुरेवैतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यज्ञेषयज्ञेष भ्वेत्यांह। आम्वेतामा शास्ते॥१८॥

तद्वा अतंः प्वित्रांभ्यामेवोत्पंनाति। यजंमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रें। यजंमान एव प्रांणापानौ दंधाति। पुनुराहारम्ं। एविमेव हि प्रांणापानौ स्श्ररंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरसि तेजोऽसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचेष्टे। त्रिर्यजुषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पुषां लोकानामास्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वाये। अथाऽऽज्यंवतीभ्यामपः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताऽऽहुंः। यथां हु वै योषां सुवर्ण्ष्ट् हिरंण्यं पेश्वलं बिभ्रंती रूपाण्यास्तै। पुवमेता पुतर्हीति। आपो वै सर्वा देवताः॥२०॥

पृषा हि विश्वेषां देवानां तृनूः। यदाज्यम्। तृत्रोभयोंमीमा स्सा। जामि स्यात्। यद्यजुषाऽऽज्यं यजुषाऽप उत्पृनीयात्। छन्दं साऽप उत्पृनात्यजामित्वाय। अथो मिथुन्त्वायं। सावित्रियर्चा। स्वितृप्रं सूतं मे कर्मा स्विति। स्वितृप्रं सूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्णमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नयति। ओषंधीभिः पृशून्। पृशुभिर्यजंमानम्। शुक्रं त्वां शुक्रायां ज्योतिं स्त्वा ज्योतिंष्य् चिंस्त्वाऽर्चिषीत्याह सर्वत्वायं। पर्यां स्या अनंन्तरायाय॥२१॥

र्डुक्षुत् आहु शाुस्ते लोका देवतां भवित षद चं॥————[४]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स एतिमन्द्र आज्यंस्याव-काशमंपश्यत्। तेनावैंक्षत्। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षंते। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्येनान्यानि हवी इष्यंभिघारयंति॥२२॥

अथ केनाऽऽज्यमितिं। स्त्येनेतिं ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंदिभि घारयति। ईश्वरो वा एषोंऽन्धो भविंतोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावेंक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यं घारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दार्शस् वा आज्यम्। छन्दार्शस्येव प्रीणाति। चतुर्जुह्वां गृंह्णाति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृश्न्वेवावं रुन्धे। अष्टावृंप्भृतिं। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृशुषुं दधाति। चतुर्भुवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः प्शवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भूयो गृह्णीयात्। अष्टावुंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे स्रुचंः। चृतुर्जुह्वां गृंह्वाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावंपभृतिं। तस्मांद्ष्टाशंफा। चतुर्ध्रुवायांम्। तस्मा्चतुंः स्तना। गामेव तथ्सङ्स्कंरोति। साऽस्मै सङ्स्कृतेषमूर्जं दुहे। यञ्जुह्वां गृह्वातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदंपभृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्तत्। सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥

अभिघारयंति गृह्णाति ध्रुवायां चतुंष्पदी प्रयाजानूयाजेभ्यस्तद्वे चं॥————[५]

आपो देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्याह। रूपमेवासांमेतन्मंहि-मानं व्याचंष्टे। अग्रं इमं यज्ञन्नयताग्रं यज्ञपंतिमित्याह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रो-ऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्य इत्याह। वृत्र हं हिन्ष्यन्निन्द्र आपो वन्ने। आपो हेन्द्रं विन्नेरे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचंष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविशत्। कृष्णौऽस्याखरेष्ठौऽग्नयै त्वा स्वाहेत्याह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। अथो अग्नेरेव मेधमव रुन्थे। वेदिरसि बुर्हिषे त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बुर्हिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। ब्र्हिरंसि स्रुग्न्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै ब्र्हिः। यजमानः स्रुचः। यजमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेतिं ब्र्हिरासाद्य प्रोक्षंति। एभ्य एवैनं छोकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह स्रुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्युक्षति। प्रजा वै ब्र्हिः। यथा सूत्ये काल आपः पुरस्ताद्यन्ति॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्ग्भव बर्हिषद्ध इति दक्षिणायै श्रोणेरोत्तरस्यै निनयति सन्तंत्यै। मासा वै पितरो बर्हिषदंः। मासानेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वर्धयंन्ति। मासाः पचन्ति समृद्धै। अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यो वर्षित। यत्रैतदेवं क्रियते॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छुतेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मौत्पृथिव्या ऊर्जा भुंअते। ग्रन्थिं वि स्र स्यति। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्गूढं प्रत्यश्चमा यंच्छिति। तस्मौत्प्राचीन् रेतों धीयते। प्रतीचीः प्रजा जायन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यैं। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृंह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। यज्ञप्रषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। युज्ञप्रषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पृतावृद्धै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धौ। तस्मिन्यवित्रे अपि सृजति। यजंमानो वै प्रंस्त्रः। प्राणापानौ पवित्रें। यजंमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णां प्रदसं त्वा स्तृणामीत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्वास्स्थं देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनंथ्स्वासस्थं करोति॥३३॥

बुर्हिः स्तृंणाति। प्रजा वै बुर्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्यः स्तृणाति। प्रजयैवैनं पृश्मिरनंतिदृश्यं करोति। धारयंन्प्रस्तरं परिधीन्परिं दधाति। यजमानो वै प्रस्तरः। यजमान एव तथ्स्वयं परिधीन्परिं दधाति। गृन्ध्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्याह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। मित्रावर्रुणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावर्रुणौ। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्तात् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवेनं पाति॥३५॥

वीतिहाँत्रं त्वा कव् इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण् समर्धयति। द्युमन्त्रं समिधीम्हीत्यांह् समिद्धौ। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह् वृद्धौं। विशो यन्ने स्थ इत्यांह। विशां यत्यौं। उदीचीनाँग्ने नि दंधाति प्रतिष्ठित्यै। वसूनारं रुद्राणांमादित्यानारं सदिस सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदेने प्रस्तररं सांदयति। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुहूः। अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासामेतदेव प्रियं नामं। यद्घृताचीतिं। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवेना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्थ्सुकृतस्यं लोक इत्यांह। सत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सत्य एवेनाः सुकृतस्यं लोकः। सत्य एवेनाः सुकृतस्यं लोके सादयित। ता विष्णो पाहीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुः। यज्ञस्य धृत्यैं। पाहि यज्ञं पाहि यज्ञपंतिं पाहि मां यंज्ञनियमित्यांह। यज्ञाय यज्ञंमानायाऽऽत्मनें। तेभ्यं एवाऽऽशिष्माशास्तेऽनांत्ये॥३७॥

दधाति॥३८॥

स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीणुर्वीर्यसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सादयित

अग्निना वै होत्राँ। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंब्रूहीत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। एकंवि श्वाति-मिध्मदारूणिं भवन्ति। एकवि श्वा वै पुरुषः। पुरुष्ट्याऽऽह्यैं। पश्चंदशेध्मदारूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमास्यः संवथ्सर आप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परि

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यः स्मिध्मितं शिनष्टि। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवः। ऋत्नेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयति। प्राजापत्यो वे वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजमान आहवनीयः। यजमान एव प्राणं दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोपयत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमांघारमा घांरयित। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापंतिः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीतिस्त्रः सं मृङ्कीत्यांह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥ अथो रक्षंसामपंहत्यै। परिधीन्थ्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्। त्रिस्तिः सं माँष्टिं। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथों एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तथ्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्री। आसीनोऽन्यमांघारमा घारयति॥४१॥

तिष्ठंत्रन्यम्। यथाऽनां वा रथं वा युआत्। एवमेव तदंध्वर्युर्यज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढौ। वहंन्त्येनं ग्राम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवंनमिस वि प्रंथस्वेत्यांह। यज्ञो वै भुवंनम्। यज्ञ एव यजंमानं प्रजयां पृशुभिः प्रथयति। अग्ने यष्टंरिदन्नम् इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्वेद्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवता ह्वयति देवयुज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युपभृत्। ताभ्यांमेवैने प्रसूत आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं क्रमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुर्युज्ञः पश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रंतिप्रोच्यात्या ऋांमित। विजिंहाथां मा मा सन्तांष्ट्रमित्याहाहि १ सायै। लोकं में लोककृतौ कृणुतमित्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानंमुसीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुंः। पृतत्खलु वै देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्यांणीत्यांह॥४४॥

इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। समारभ्योध्वी अध्वरो दिविस्पृशमित्यांह् वृद्धौ। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धिनैव यज्ञेन यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अह्नंतो यज्ञो यज्ञपंतिरत्याहानांत्यै। इन्द्रांवान्थ्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री।
यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण
आंघारः। यथ्म ईस्पर्शयेत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणं दंध्यात्।
अस ईस्पर्शयन्नत्या क्रांमिति। यजमान एव प्राणं दंधाित।
पाहि माँउग्ने दुर्श्वरितादा मा सुचंरिते भ्जेत्यांह॥४६॥

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृजिनमनृतं दुश्चेरितम्। ऋजुक्रमं स्त्य स्चेरितम्। अग्निरेवैनं वृजिनादनृताद्दश्चेरितात्पाति।

ऋजुक्में स्त्ये सुचेरिते भजति। तस्मदिवमा शाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्य ध्रुवा समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्रांणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इति। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सभ्योतिषा ज्योतिरङ्कामित्यांह। ज्योतिरेवास्मा उपरिष्टाद्दधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

परिंदधाति प्राणं दंधाति हि युज्ञो घारयित नम् इत्यांह पृश्चाद्वीर्याणीत्यांह् भा इत्यांह भुजेत्यांह ध्रुवैवास्मिन्दधाति त्रीणि च॥————[७]

धिष्णिया वा पृते न्युंप्यन्ते। यद्घ्रह्मा। यद्घोतां। यदंध्वर्युः। यद्ग्रीत्। यद्यजंमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजंमानस्य प्राणान्थ्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशंमप्गृह्य सश्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक शिर्ष्षित। नास्यं प्राणान्थ्सङ्कर्-षति। न प्रमायुंको भवति। पुरस्तांत प्रत्यङ्कासीनः। इडाया इडामा दंधाति। हस्त्या १ होत्रैं। पृशवो वा इडाँ। पृशवः पुरुषः। पृशुष्वेव पृशून्प्रतिष्ठापयति। इडांयै वा एषा प्रजातिः॥५०॥

तां प्रजांतिं यजमानोऽनु प्र जांयते। द्विरङ्गुलांवनिक्ति पर्वणोः। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्यै। स्कृदुपं स्तृणाति। द्विरा देधाति। स्कृद्भि घांरयति। चृतुः सम्पद्यते। चृत्वारि वै पृशोः प्रतिष्ठानांनि। यावांनेव पशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुखंमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव पृशूनुपं ह्वयते। पृशवो वा इडाँ। तस्माथ्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यजंमानेन च। उपंहूतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्येनौ ह्वयंते होताँ। इडायै देवतांनामुपहुवे। उपंहूतः पशुमान्भवित। य एवं वेदं॥५२॥

द्वतानामुपह्वा उपहूतः पशुमान्भवात। य पृव वद॥५२॥
यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भांगुधेयम्।
यामुंपृह्वयंते। प्राणाना स् सा। वाचं चैव प्राणा श्क्षावं रुन्थे।
अथ वा एतर्ह्युपंहूतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहि्षदों
मीमा स्सा। यजंमानं देवा अंब्रुवन्। ह्विर्नो निर्व्पेतिं।
नाहमंभागो निर्वपस्यामीत्यं ब्रवीत्॥५३॥
न मयांऽभागयाऽनुंवक्ष्यथेति वागं ब्रवीत्। नाहमंभागा

पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशंं बर्हिषदं करोति। तानेव तद्वागिनः करोति। चतुर्धा करोति। चतस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। बर्हिषदं करोति॥५४॥

यजमानो वै पुरोडाशंः। प्रजा बर्हिः। यजमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयित। तस्माद्स्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतिष्ठिन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्बांहः। दक्षिणा वा एता हिवर्यज्ञस्यान्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुरोडाशं बर्हिषदं करोतीति। चतुर्धा करोति। चत्वारो होते हिवर्यज्ञस्यर्त्विजः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इद श् होतुंः। इदमंध्वर्योः। इदम्ग्नीध् इतिं। यथैवादः सौम्येँ ऽध्वरे। आदेशंमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तें। तादगेव तत्। अग्नीधे प्रथमाया देधाति॥५६॥

अग्निम्ंखा ह्यद्धिः। अग्निम्ंखामेवर्द्धिं यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंपस्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घारयति। षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। वेदेनं ब्रह्मणे ब्रह्मभागं परिंहरति। प्राजापत्यो वे वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥

स्विता यज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ कामंमन्येनं। ततो होत्रैं। मध्यं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्धोताँ। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवें। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यद्ध्वर्युः। तस्मौद्धविर्यज्ञस्यैतामेवाऽऽवृतमनुं॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। युज्ञस्य प्रतिष्ठित्यै। अग्निमंग्नीथ्सकृथ्संकृथ्सं मृङ्कीत्यांह। परांडिख् ह्यंतर्हिं युज्ञः। इषिता दैव्या होतांर इत्यांह। इषित हि कर्म क्रियतें। भृद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहीत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। स्वृगा दैव्या होतृभ्य इत्यांह। युज्ञमेव तथ्स्वृगा करोति। स्वस्तिर्मानुषेभ्य इत्यांह। युज्ञमेव तथ्स्वृगा करोति। स्वस्तिर्मानुषेभ्य इत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। शुं योर्ब्रूहीत्यांह। शुंयुमेव बार्हस्पत्यं भाग्धेयेन समर्धयति॥५९॥

च्रत्युध्वर्षः प्रजांतिर्ह्वयते वेदांववीद्वरहिषदं करोत्युत्वजी दधाति ब्रह्माऽनुंकरोति च्लारि

अथ सुर्चावनुष्टुग्भ्यां वाजंबतीभ्यां व्यूहति। प्रतिष्ठा वा

अंनुष्टुक्। अत्रं वाजः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूंहति। जातानेव भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। प्रतीचींमुप्भृतम्। जिन्वयमांणानेव प्रतिनुदते। सविषूंच एवापोह्यं सपत्नान् यजमानः। अस्मिँ होके प्रति तिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वा-ऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्रुक्षु प्रंस्त्रमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजंमानः प्रस्तरः। यजंमानमेव तेजंसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

पृभ्य पुवैनं लोकभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमनिक्तः। अभिपूर्वमेव यजमानं तेजसाऽनिक्तः। अक्तः रिहाणा इत्याहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजसाऽनिक्तः। वियन्तु वय इत्याहः। वयं पुवैनं कृत्वाः सुवृगं लोकं गमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायें गोपीथायं। आप्यायन्तामाप ओषंधय इत्यांह। आपं प्रवौषंधीरा प्याययति। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वै वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिमेवावं रुन्धे। दिवं गच्छु ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिर्वे द्यौः। वृष्टिमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरति। तावंदस्यायुंमीयते। आयुष्पा अंग्नेऽस्यायुंर्मे पाहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यावद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरित। तावंदस्य चक्षुंमीयते। चक्षुष्पा अंग्रेऽसि चक्षुंर्मे पाहीत्याह। चक्षुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ध्रुवाऽसीत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। यं परि्धिं पूर्यधंतथा इत्यांह॥६४॥ यथायजुरेवैतत्। अग्नें देव पणिभिंवीयमांण इत्यांह। अग्नयं एवैनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्यांह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्यै। यज्ञस्य पाथ उप समितमित्यांह। भूमानंमेवोपैति। पुरिधीन्प्र हंरति। युज्ञस्य समिष्टि॥६५॥ सुचौ सं प्रस्नावयति। यदेव तत्रं क्रूरम्। तत्तेनं

सङ्स्रावभागाः। तेषां तद्भागधेयम्॥६६॥ तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः।

शमयति। जुह्वामुंपभृतम्। यजमानदेवत्यां वै जुहः।

भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। यजंमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति।

स्ड्स्रावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः

त्रिष्टुग्भविति। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदंसि सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवैने सदंने सादयित। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव प्शूनात्मन्धंत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योर्गोपीथायं। अग्नेऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्ये पाहि दुरिष्ट्रौ पाहि दुरद्मन्यै पाहि दुर्श्वरितादित्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। अविषन्नः पितुं कृणु सुषदा योनिङ् स्वाहेतींध्मस्ंवृश्चनान्यन्वाहार्यपचंनेऽभ्याधायं फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिरिक्तानि वा इध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त एवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्त-मास्वाऽवं रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं बिभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जायते विश्वदानिरिति पुरस्तांथ्स्तम्बयजुषो वेदेन वेदि सम्मार्ष्यनुंवित्त्यै॥६९॥

अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुनत्वाय प्रजांत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रूणि। यद्वेदः। पत्निया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दते प्रजाम्। वेद १ होता-ऽऽहंवनीयाध्स्तृणन्नेति। यज्ञमेव तथ्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्ध-मासात्। त १ सन्तंतुमुत्तंरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥

तं कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतों यज्ञं प्रयुङ्का। तदेनं प्रतिष्ठापयतीति। वाताद्वा अध्वर्युर्य्ज्ञं प्रयुङ्का। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्यांह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्का। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पशुभिर्यजमानः॥७१॥

तिष्ठतीमे लोका गंमयति द्यौर्वृष्टिमेवावं रुन्धे पुर्यधंत्था इत्यांहु सिमंध्ये भागुधेयंन्धत्तमित्यांहु वा

इंध्मस्ं वृश्चंनान्यनुंवित्त्यै लभते यर्जमानः॥———[९]

यो वा अयंथादेवतं युज्ञम्ंपूचरंति। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वै पार्शः। इमं विष्यामि वर्रुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवेनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवताँभ्य आवृंश्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं

सुकृतस्यं लोक इत्याह। अग्निर्वे धाता। पुण्यं कर्म सुकृतस्यं लोकः। अग्निर्वेनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यर्जमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततों ऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्रिये पूर्णपात्रे भेवति। अस्मिँ श्लोके प्रति तिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्गिथुनम्। आपो रेतः प्रजननम्। एतस्माद्वे मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तनयंन्वर्षित। रेतः सिश्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रंजनयन्। यहै यज्ञस्य ब्रह्मंणा युज्यतें। ब्रह्मंणा वे तस्यं विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विमुक्तं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मंणा। आदायेन्त्पत्नी सहाप उपंगृह्णीते शान्त्यै। अञ्जलौ पूर्णपात्रमा नंयति। रेतं एवास्यां प्रजां दंधाति। प्रजया हि मनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥

स्वितृप्रंम्तो यथादेवतं प्रजयेत्यांह सिञ्जन्तृष्ट एकं च॥————[१०]

प्रिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य एवं वेदं। विन्दते परिवेष्टारम्। तमुंत्करे। यं देवा मंनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदपं चेतसः। तानस्मभ्यमिहा कुरु। उपवेषोपं विद्धि नः॥७६॥

प्रजां पृष्टिमथो धनम्। द्विपदो न्श्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंपगान्कुर्विति पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गूहति। तस्मांत्पुर-स्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवंस्यन्ति। स्थविमृत उपंगूहति। अप्रंतिवादिन पृवैनांन्कुरुते। धृष्टि्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इतिं॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहंरति। निर्मुन्नुंद् ओकंसः। सपत्नो यः पृतन्यति। निर्बाध्येन ह्विषाँ। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः पंरावतः। इहि पश्च जना अति। इहि तिस्रोऽति रोचनायावत्। सूर्यो असंद्वि। प्रमान्त्वां परावतम्॥७८॥

इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्वा एष वज्रो ब्रह्मणा सश्शितः। शुचैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यो निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हृतोऽसाववंधिष्मामुमित्यांहु स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तं ध्यांयेत्।

शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टं दिवः शिल्पमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स एतिमन्द्र आपो देवीर्ग्निना धिष्णिया अथ् स्रुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेषो वा एकांदश॥११॥ प्रत्युष्टमयंज्ञ एषा हि विश्वेषां देवानांमूर्जा पृंथिवीमथो रक्षंसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकांले नवंसप्ततिः॥७९॥

प्रत्युष्टमर्पयति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षुत्रायं राज्जन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमंसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायांयोगूम्। कामांय पुश्क्षलूम्। अतिंकुष्टाय माग्धम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नर्मायं रेभम्। नरिष्ठायै भीमलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्त्रीषुखम्। प्रमुदें कुमारीपुत्रम्। मेधायैं रथकारम्। धैर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमाय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धंन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

सुन्धर्ये जारम्। गेहायोपपतिम्। निर्ऋत्ये परिवित्तम्। आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्ये दिधिषूपतिम्। पवित्रांय

भिषजम्। प्रज्ञानाय नक्षत्रदुर्शम्। निष्कृत्यै पेशस्कारीम्। बलायोपुदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्ट्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मत्तम्। गृन्धवाप्रस्राभ्यो व्रात्यम्। सप्देवजनभ्योऽप्रंतिपदम्। अवैभ्यः कित्वम्। इर्यतांया अकितवम्। पिशाचेभ्यो बिदलकारम्। यातुधानैभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उथ्सादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। द्वार्भ्यः स्रामम्। स्वप्नायान्थम्। अधंर्माय बधिरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्चिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्चिनम्। मुर्यादांये प्रश्चिवाकम्॥६॥

ऋत्यैं स्तेनह्रंदयम्। वैरंहत्याय पिशुंनम्। विवित्त्ये क्षुत्तारम्। औपंद्रष्टाय सङ्ग्रहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधाय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजयित्रीम्॥७॥

भार्यं दार्वाह्यरम्। प्रभायां आग्नेन्धम्। नाकंस्य पृष्ठायांभिषेक्तारम्। ब्रुध्नस्यं विष्टपांय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकार्य पेशितारम्। मनुष्यलोकार्य प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकार्य भागदुघम्। वर्षिष्ठाय नाकांय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मेभ्यो हस्तिपम्। ज्वायांश्वपम्। पृष्ट्रीं गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इरांयै कीनाशम्। कीलालांय सुराकारम्। भुद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्त्धम्। अध्यक्षायानुक्षत्तारम्॥९॥

मृन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्। उत्कूलविकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वपुंषे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्ये कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

युम्यै यमुसूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। संवृथ्सरायं पर्यारिणीम्। परिवृथ्सरायाविजाताम्। इदावृथ्सरायापु-स्कद्वंरीम्। इद्वथ्सरायातीत्वंरीम्। वृथ्सराय विजर्जराम्। संवृथ्सराय पर्तिक्रीम्। वनाय वनुपम्। अन्यतोरण्याय दावृपम्॥११॥ सरोंभ्यो धेवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्ँ। उपस्थावंरीभ्यो बैन्दम्ँ। नुङ्कुलाभ्यः शौष्कुलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमेभ्यो मैनालम्। स्वनेभ्यः पर्णकम्। गृहाँभ्यः किरातम्। सानुभयो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भूषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणवृध्मम्। आक्रन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरस्परायं शङ्ख्धमम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्मम्णम्॥१३॥ बीभ्थ्सायं पौल्कसम्। भूत्यं जागर्णम्। अभूत्ये स्वपनम्। तुलायं वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यं जनवादिनम्। व्यृद्धा अपगल्भम्। स्र्श्रारायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पुङ्श्वलूमा लेभते। वीणावादं गणेकं गीताये। यादंसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवृतीम्। तूण्वध्मं ग्रामण्यं पाणिसङ्घातं नृत्ताये। मोदायानुक्रोशंकम्। आनुन्दायं तलवम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया आदिनवदुर्शम्। द्वापुरायं बिहुः सदम्। कल्यं सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पिशाचेभ्यंः सैलगम्। पिपासायं गोव्यच्छम्। निर्ऋत्यं गोघातम्। क्षुधं गोविकर्तम्। क्षुतृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठते॥१६॥

भूम्यै पीठसर्पिणमा लंभते। अग्नयेऽर्स्सलम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वश्शनर्तिनम्। दिवे खंलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षत्रेभ्यः किलासम्। अह्रे शुक्रं पिङ्गलम्। रात्रियै कृष्णं पिङ्गक्षम्॥१७॥

वाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमेपानं व्यानमुदानः संमानं तान् वायवै। सूर्याय चक्षुरा लेभते। मनश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आर्लभते। अतिहरस्वमितदीर्घम्। अतिकृशमत्यर्स्सलम्। अतिशुक्कमितिकृष्णम्। अतिश्रक्षण्-मितिलोमशम्। अतिकिरिट्मितिदन्तुरम्। अतिमिर्मिर्मिति- ब्रह्मणे कुमारीम्॥

मेमिषम्। आशायै जामिम्। प्रतीक्षायै कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय श्रमांय स्न्धये न्दीभ्यं उथ्सादेभ्य ऋत्यै भाया अर्मेभ्यो म्न्यवे युम्यें दशंदश् सरोंभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्कांये बीभ्ध्सायै दशंदश् हसांय सप्ताक्षंराजाय त्रयोंदश् भूम्यै दशं वाचे षडथ् नवैकान्नविर्श्शतिः॥१९॥ ब्रह्मणे युम्यें नवंदश॥१९॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयबाह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपेद्ये। ऋतं प्रपेद्ये। अमृतं प्रपेद्ये। प्रजापेतेः प्रियां तनुवमनौतां प्रपेद्ये। इदम्हं पेश्चद्शेन् वज्रेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूभुंवः सुवंः। हिम्॥१॥

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सुमृयुः। अग्न आयांहि वीतयें। गृणानो ह्व्यदांतये। नि होतां सिथ्स बर्हिषिं। तं त्वां समिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स नः पृथुः श्रवाय्यम्॥२॥

अच्छां देव विवासिस। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नम्स्यंस्तिरः। तमा रेसि दर्शतः। सम्ग्निरिध्यते वृषां। वृषों अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहनः। तर ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणं त्वा व्यं वृषन्ं। वृषाणः समिधीमहि॥३॥

अग्ने दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृंणीमहे। होतांरं विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्। समिध्यमानो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यः। शोचिष्केशस्तमींमहे। सिमंद्धो अग्न आहुत। देवान् यक्षि स्वध्वर। त्व॰ हि हंव्यवाडिसं। आ जुहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यध्वरे। वृणीध्व॰ हंव्यवाहंनम्। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वर्धन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषणनानिं सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥

अग्नें महार असि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेद्धो मन्विद्धः। ऋषिष्ठुतो विप्रानुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मंसरशितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानाम्। र्थीरिध्वराणाम्। अतूर्तो होता। तूर्णिर्हव्यवाट्। आस्पात्रं जुहूर्देवानाम्॥५॥

चुम्सो देवपानंः। अरार इंवाग्ने नेमिर्देवाङ्स्त्वं पेरिभूरेसि। आ वंह देवान् यजंमानाय। अग्निमंग्न आवंह। सोम्मावंह। अग्निमावंह। प्रजापंतिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवार औज्यपार आवंह। अग्निर होत्रायावंह। स्वं महिमान्मा वंह। आ चौग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

अग्निर्होता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो सुचमास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडांमहै देवा ईडेन्यान्। नुमस्यामं नमस्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥

अग्निरहोता नवं॥——[४]

स्मिधो अग्न आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्न आज्यंस्य वेतु। इडो अग्न आज्यंस्य वियन्तु। ब्र्हिरंग्न आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहां प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौ। स्वाहैन्द्राग्नी। स्वाहेन्द्रम्। स्वाहां प्रेवाहं महेन्द्रम्। स्वाहां देवा अौज्यपान्। स्वाहाऽग्नि होत्राञ्चंषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

इ-द्राग्नी पर्श्व च॥————[५]

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विपन्ययाः। सिमिद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्वश् सोमासि सत्पंतिः। त्वश् राजोत वृत्रहा। त्वं भुद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषों वेतु। अग्निः प्रत्नेन् जन्मंना। शुम्भांनस्तुनुबुश् स्वाम्। कृविर्विप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्ठां वयम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य हविषों वेतु॥९॥

स्वा^र षट् चं॥———[६]

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पितः पृथिव्या अयम्। अपार रेतारेसि जिन्वति। भुवो यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचेसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानं दिधेषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥

वय इस्याम् पत्यो रयीणाम्। स वेद पुत्रः पितर् समातरम्। स सूनुर्भृवथ्स भुवत्पुनं मेघः। स द्यामौर्णोदन्तरिक्ष स् स्वंः। स विश्वा भवी अभवथ्स आभवत्। अग्नीषोमा सवेदसा। सहूती वनत् ङ्गिरेः। सन्देवत्रा बंभूवथः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम् सर्कत् अधत्तम्॥११॥

युवर सिन्धूर्र र्भिशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावम् अतं गृभीतान्। इन्द्रांग्नी रोचना दिवः। परि वाजेषु भूषथः। तद्वांश्चेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रा यो अग्नी सहुरी सप्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैंः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तां। एन्द्रं सान्सि॰ र्यिम्॥१२॥

स्जित्वांन स्यासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भेर् दक्षिणेना वसूनि। पितः सिन्धूनामिस रेवतीनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पूर्जन्यो वृष्टिमा इंव। स्तोमैंर्व्थसस्यं वावृधे। महा इन्द्रो नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मृद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृतः कुर्तृभिर्भूत्। पिप्रीहि देवार उंशतो यंविष्ठ। विद्वार ऋतूरर्ऋतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज्स्तेभिरग्ने। त्वर होतॄंणाम्स्यायंजिष्ठः। अग्निइ स्विष्टकृतम्। अयांडग्निरग्नेः प्रिया धामानि। अयाद्थ्सोमंस्य प्रिया धामानि॥१४॥

अयांड्ग्नेः प्रिया धामांनि। अयांद्वजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांड्ग्नीषोमयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रस्य प्रिया धामांनि। अयांण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयांड्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अध्वरा जातवंदाः। जुषता १ ह्विः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व१ हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ठ या ते अद्य॥१५॥

अस्त्वधृत्तृ र्यिं चंर्षणिप्राः सोमंस्य प्रिया धामानीषः षद्वं॥———[७]

उपंहूत रथन्तर स्मह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर स्मह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य स्महान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य स्महान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य स्महान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौः। उपं मा सप्त होत्रौ ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा। इपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा॰ इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मानुवी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव् उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः। य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपंहूते द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतोऽयं यजमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूतः। भूयंसि हिव्ष्करंण उपंहूतः। दिव्ये धामन्नुपंहूतः। इदं में देवा हुविर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपंहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपंहृतस्योपंहृतः॥१८॥

स्हर्षंभा ह्वयतामुपंहूत १ हिवेष्करंण उपंहूतश्चत्वारिं च॥————[८]

देवं ब्र्हिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशः संः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कृविः। सृत्यमंन्मायजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट। याः अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंध्सत। ताः संसनुषीः होत्रांन्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥१९॥

अपिंप्रेः पश्चं च॥———[९]

इदं द्यांवापृथिवी भ्रमंभूत्। आर्ध्मं सूक्तवाकम्। उत नंमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्वश् सूक्तवागंसि। उपंश्रितो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावापृथिवी स्ताम्। शृङ्गये जी्रदान्। अत्रंस्रू अप्रवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौं॥२०॥

वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भुवौं मयोभुवौँ। ऊर्जस्वती च पयंस्वती च। सूप्चर्णा चं स्वधिचर्णा चं। तयोंराविदिं। अग्निरिद॰ ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। सोमं इद॰ह्विरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। अग्निरिद॰ हविरंजुषत॥२१॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। प्रजापंतिरिदश् ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्नीषोमांविदश् ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदश् ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायोऽकाताम्। इन्द्रं इदश् ह्विरंजुषत। अवीवृधतां महो ज्यायोऽकृत। महेन्द्र इदश् ह्विरंजुषत॥२२॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। देवा आँज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवीवृधन्त महो ज्यायोऽकृत। अग्निरहोत्रेणेद॰ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अस्यामृधद्धोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यजंमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। सजात्वनस्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्ष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यं धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यदनेनं हिवषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। व्यम्ग्नेर्मानुषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावांपृथिवी अ॰हंसस्पाताम्। इह गतिंर्वामस्येदं चं। नमों देवेभ्यं:॥२४॥

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे॥२५॥

तच्छुं योर्ष्टौ॥——[११]

आप्यायस्व सन्तैं। इह त्वष्टांरमग्रियं तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नींरुशतीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वाजंसातये। याः पार्थिवासो या अपामिषं व्रते। ता नों देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्ना विंयन्तु देवपंत्नीः। इन्द्राण्यंग्नाय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी शृंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवंदाः। देवानांमुत यो मर्त्यांनाम्। यिजेष्ठः स प्र यंजतामृतावां। व्यम् त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकंर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूिर णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नस्तेजंसा सर्शिशाधि॥२७॥

जनीनामृष्टौ चं॥——[१२]

उपंहूत रथन्तर रसह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥२८॥

उपंहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। उपो अस्मा इडां ह्वयताम्। इडोपंहूता। उपंहूतेडां। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥२९॥

दैव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः।
य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते
द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपंत्रे। उपंहूतेयं
यजमाना। इन्द्राणीवांऽविध्वा। अदितिरिव सुपुत्रा।
उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूता। भूयंसि हिव्ष्करंण उपंहूता।
दिव्ये धामृत्रुपंहूता। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति
तस्मिन्नुपंहूता। विश्वंमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य
प्रियस्योपंहूतस्योपंहूता॥३०॥

सहर्षभा ह्रयतामुपंहूत सपुत्रा षद्वं॥———[१३]

सृत्यं प्रवोऽग्ने महानृग्निर्होतां समिधोऽग्निर्वृत्राण्यग्निर्मूर्धोपंहूतं देवं बुर्हिरिदं द्यांवापृथिवी

तच्छुं योरा प्यांयुस्वोपंहूत्त्र्रयोदश॥१३॥

स्तयं व्यक्ष स्याम वृष्टिद्यांवा त्रिष्शत्॥३०॥

स्त्यमुपंहूता॥

हरिः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तः। वनस्पते मधुना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयो मातुर्स्या उपस्थै। उच्छ्रंयस्व वनस्पते। वर्ष्मंन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवांहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तांत्। ब्रह्मं वन्वानो अजर स्वीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बार्धमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वार्जस्य सिनंता यदिश्विभिः। वाघिद्विविह्वयामहे। ऊर्ध्वो नः पाह्य १ हंसो नि केतुनां। विश्व १ सम्त्रिणन्दह। कृधी न ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अह्नाँम्। सम्पर्य आ विदथे वर्धमानः। पुनन्ति धीरां अपसों मनीषा। देवया विप्र उदिंयर्ति वाचम्। युवां सुवासाः परिंवीत् आगाँत्। स उ श्रेयांन्भवित् जायंमानः। तं धीरांसः क्वय् उन्नंयन्ति। स्वाधियो मनंसा देवयन्तंः। पृथुपाजा अमर्त्यः। घृतनिंणि्क्स्वांहुतः। अग्निर्यज्ञस्यं हव्यवाट्। त॰ स्वाधों यतः स्रुंचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचं ऋर्ग्निमृतयें। त्वं वर्रुण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वस्रुं सुषण्नानिं सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

सुवीरं दुवः स्वांहुतोऽष्टौ चं॥-होतां यक्षदग्नि समिधां सुष्मिधा समिद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्गथे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्ष्तनूनपात्मिदितेर्गर्भं भुवनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यों देवयानांन्यथो अनक्त वेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्रराश रसं नृशस्त्रं नृक्ः प्रणित्रम्। गोभिर्वपावान्थ्स्याद्वीरैः शक्तीवान्नथैः प्रथमया वा हिरंण्यैश्चन्द्री वेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदग्निमिड ईंडितो देवो देवा अविक्षदूतो हं व्यवाडमूरः। उपेमं युज्ञमुपेमां देवो देवहूंतिमवतु वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र च प्रथता इ स्वासस्थं देवेभ्यः। एमेनदद्य वसंवो रुद्रा आंदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं॥४॥

होतां यक्षद्दुरं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनी्रुदातांभीर्जिहंतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् युज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यंस्य होत्यर्ज। होतां यक्षदुषासानक्तां बृहती सुपेशंसा नृ इः पतिंभ्यो योनिं कृण्वाने। सङ्स्मयंमाने इन्द्रंण देवैरेदं बर्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्दैव्या होतांरा मन्द्रा पोतांरा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमद्यान्यः करदिषा स्वंभिगूर्तम्न्य ऊर्जा सतंवसेमं युज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्पसांमुपस्तंमा अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपों वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांर्मचिष्टुमपांक र रेतोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपुमकामकर्शन ४ सुपोषः पोषुः स्याथ्सुवीरों वीरैर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वन्स्पतिंमुपावंस्रक्षद्धियो जोष्टार १ शृशमृत्ररं। स्वदाथ्स्वधितिर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यो हव्यावाङ्गेत्वाऽऽज्यंस्य होतुर्यजं। होतां यक्षदुग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदंसः स्वाहाँ स्तोकाना इं स्वाहा स्वाहां कृतीना इं स्वाहां ह्व्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवां आंज्युपान्थ्स्वाह् । उग्नि र

होत्राञ्ज्षंषाणा अग्र आज्यंस्य वियन्तु होत्र्यंजं॥५॥

प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं सुवीरों वी्रैर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं चृत्वारिं च (अग्निन्तनूनपांतृत्रगुश्वरसंमृग्निमिड ईंडितो बुर्हिर्दुरं उषासानक्ता दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरं वन्स्पितंमृग्निम्। पश्च वेत्वेकों वियन्तु द्विर्वीतामेकों वियन्तु द्विर्वेत्वेकों वियन्तु होत्र्यंजं॥)॥[२]

सिमिंद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिसि जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वं दूतः कृविरेसि प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्यां सम्अन्थ्स्वंदया सुजिह्व। मन्मांनि धीभिरुत युज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरं नंः। नराशश्संस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यजतस्यं यज्ञैः॥६॥

ते सुक्रतंवः शुचंयो धियन्थाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन् ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होताः। स एनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बुर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोरस्या वृंज्यते अग्ने अहाँम्। व्यं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदिंतये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पतिंभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यों भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्ञते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृह्ती सुंरुक्मे। अधि श्रियर् शुक्रिपेशं दधाने। दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचौ। मिमाना यज्ञं मनुषो यज्ञंध्यै॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदथेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारती तूर्यमेत्। इडां मनुष्वदिह चेतयंन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हिरेद स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावापृथिवी जिनेत्री। रूपैरिप श्राद्भवंनानि विश्वां। तमद्य होतिरिषेतो यजीयान्। देवं त्वष्टांरिमेह यंक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्त्मन्यां सम्अन्। देवानां पाथं ऋतुथा ह्वी १ षि। वनस्पतिः शिमृता देवो अग्निः। स्वदंन्तु ह्व्यं मधुंना घृतेनं। सद्यो जातो व्यंमिमीत यज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृत १ ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

प्रौः स्थोनं यजंध्ये विद्वानुष्टौ चं॥————[3]

अग्निरहोतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्यग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वार्जपतिः कृविः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दधद्रत्नांनि दाशुषे॥११॥

अग्निर्होतां नो नवं॥———[४]

अजैंद्गिः। असंनुद्वाज्ञित्रि। देवो देवेभ्यों हृव्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेर्नाभिः कल्पमानः। यज्ञस्यायुः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हव्या देवेभ्यः॥१२॥

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपनयत् मेध्या

दव्याः शामतार उत मनुष्या आरमध्वम्। उपनयत् मध्या दुरंः। आशासाना मेधेपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भेरत। स्तृणीत बर्हिः। अन्वेनं माता मन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीनार् अस्य पदो निर्धत्तात्॥१३॥

सूर्यं चक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छातात्। पुरा नाभ्यां अपिशसों वपामुत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसां बाहू॥१४॥ श्रुला दोषणीं। कृश्यपेवारसां। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रेकपंणिष्ठीवन्तां। षड्विरंशितरस्य वङ्कंयः। ता अनुष्ठ्योच्यावयतात्। गात्रं गात्रम्स्यानूनं कृणुतात्। ऊव्ध्यगोहं पार्थिवं खनतात्। अस्रा रक्षः सर्सृजतात्। वनिष्ठमंस्य मा राविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवंच्छमितारः। अभ्रिंगो शमीध्वम्। सुशमि शमीध्वम्। शुमीध्वमंभ्रिगो। अभ्रिंगुश्चापांपश्च। उभौ देवाना शमीतारौँ। ताविमं पुशू श्रंपयतां प्रविद्वा श्रीं। यथायथाऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥१६॥

भ्नाह्यह् मा रांविष्ट् तथांतथा। [६] जुषस्व सुप्रथेस्तमम्। वचो देवफ्सरस्तमम्। ह्व्या जुह्वान

आसिन। इमं नो यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जातवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्चोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववीतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्ं। तुभ्यई स्तोका घृंतश्चर्तः। अग्ने विप्राय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः सिमध्यसे। युज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य ईश्वोतन्त्यिष्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेदंसो घृतस्यं। कृविशस्तो बृंह्ता भानुनागाः। हृव्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृंतम्। प्र ते वयं दंदामहे। श्वोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्देवशोविंहि॥१८॥

वेववीतय उद्धृंतिश्रीणि च॥———[७] आवृंत्रहणा वृत्रहभिः शुष्मैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अर्वाक्।

युव १ राधोभिरकं वेभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतमुत्तमेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य वपाया मेदंसः। जुषेता १ ह्विः। होत्रर्यजं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रांग्नी ज्ञास उत्वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्यम्। स वां धियं वाज्यन्तीमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हिवः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरं दूत्यांय। हिविष्मंन्तः सद्मिन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो बर्हिरंग्ने। अहाँन्यस्मे सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्नम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यंजं॥२०॥

स्जातानुग्निन्द्वे चं॥————[८]

गीर्भिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टे र्यि यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रांग्री वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः। माच्छेंद्म र्श्मीश्रिति नाधंमानाः। पितृणाश् शक्तीरनुयच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्यां कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्रीधिषणांया उपस्थें। अग्निश् सुंदीतिश् सुदर्शं गृणन्तंः। नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वां दूतमंर्तिश् हंव्यवाहम्ं। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

जात्वेदो हे चं॥———[९]

त्व इ ह्यंग्ने प्रथमो मनोताँ। अस्या धियो अभवो दस्महोताँ। त्व सीं वृषन्नकृणोर्दृष्टरीत्। सहो विश्वंसम् सहंस् सहंध्ये। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः सन्। तं त्वा नर्रः प्रथमं देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिवंस्य्यैः। त्वे र्यिं जांगृवा सो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशंन्तम् ग्निं देर्श्तं बृहन्तम्। वपावन्तं विश्वहां दीदिवा सम्। पदं देवस्य नमसा वियन्तः। श्रवस्यवः श्रवं आपन्नमृक्तम्। नामानि चिद्दिधिरे युज्ञियांनि। भुद्रायां ते रणयन्त सन्दंष्टौ। त्वां वंधन्ति क्षितयंः पृथिव्याम्। त्वश् रायं उभयांसो जनांनाम्। त्वं त्राता तंरणे चेत्योंऽभूः। पिता माता सदिमन्मानुंषाणाम्॥२३॥

सपूर्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तं त्वां वयं दम् आ दीदिवा स्सम्। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तं त्वां वय स्पुधियो नव्यं मग्ने। सुम्नायवं ईमहे देवयन्तंः। त्वं विशो अनयो दीद्यांनः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्भं चंर्षणीनाम्॥२४॥

प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजंन्तमृश्गिं यंज्ञतश् रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शश्मे च मर्तः। यस्त आनंदथ्समिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं पिर् वेदा नमोंभिः। विश्वेथ्सवामा दंधते त्वोतः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विधेम। नमोंभिरग्ने समिधोत ह्व्यैः। वेदीसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते भुद्रायार् सुमृतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्तृतन्थ रोदंसी विभासा। श्रवीभिश्व श्रवस्यंस्तरुत्रः। बृहद्भिवाजैः स्थविरेभिरस्मे। रेवद्भिरग्ने वितृरं वि भाहि। नृवद्वसो सदमिद्धैह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषो बृह्तीरारे अंघाः। अस्मे भुद्रा सौंश्रवसानिं सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुताते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार् सन्तिं। अग्ने वसुं विधृते राजनित्वे॥२६॥

जागृवा १ सो अर्नुग्म्-मार्नुषाणाश्चर्षणीनां यंतेमाश्यान्द्वे चं॥———[१०]

आभेरत शक्षितं वज्रबाहू। अस्मा ईन्द्राग्नी अवत् श्र् शचींभिः। इमे नु ते र्श्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरीं न आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छार्गस्य ह्विष् आत्तांमुद्य। मध्यतो मेद उद्गृतम्। पुरा द्वेषौभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तौन्नुनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः श्वातंत्रियाणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उथ्माद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेताः ह्विः। होत्र्यजं। देवेभ्यों वनस्पते हवीः हिरण्यपणं प्रदिवंस्ते अर्थम्॥२८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां निययं। ऋतस्यं वक्षि पृथिभी रजिष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पतिम्भिहि। पिष्टतंमया रभिष्ठया रश्नयाधित। यत्रैन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धार्मानि। यत्र वनस्पतैः प्रिया पाथा रेसि। यत्रं देवानामाज्यपानां प्रिया धार्मानि। यत्राग्नेरहोतुः प्रिया धार्मानि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीया समिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता हिवः। होत्र्यजी पिप्रीहि देवा उश्तो यविष्ठ। विद्वा ऋतू श्रूत्रंतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज्सतेभिरग्ने। त्व होतृंणामस्यायंजिष्ठः। होतां यक्षद्गि स्विष्टकृतम्। अयांड्गिरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य हिवषः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतेः प्रिया पाथा सि। अयाङ्ग्विवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षद्ग्रेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। होत्र्यंजं॥३०॥

न्त्रमर्थं कृत्वी पाथारंसि सप्त चं॥————[११]

उपों हु यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमितिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनंस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो

ह्वी १ षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयांडुग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य हविषः प्रिया धामांनि॥ ३१॥

अयाङ्गन्स्पतेः प्रिया पाथा रसि। अयाङ्ग्वानां माज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेर्होतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवंदाः। जुषता रहिवः। अग्ने यद्द्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्वर हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। ह्व्या वंह यविष्ठ या ते अद्या ३२॥

धार्मानि भूरेकं च॥———[१२]

देवं बर्हिः सुंदेवं देवैः स्याथ्सुवीरं वीरैर्वस्तौंर्वृज्येताकाः प्रिभ्रियेतात्यन्यात्राया बर्हिष्मतो मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारंः सङ्घाते विङ्वीर्यामंञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ वथ्स ईमेनास्तरुण आमिमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी उषासानकाऽद्यास्मिन् यज्ञे प्रयत्यंह्वेतामपि नूनं देवीर्विशः प्रायांसिष्टाः सुप्रीते सुधिते वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री

वसंधिती ययोर्न्याऽघाद्वेषा रसि युयवदान्यावंक्षद्वसु वार्याणि यजमानाय वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजी। देवी ऊर्जाहुंती इषमूर्जमन्यावंक्षथ्मिण्यः सपीतिमन्या नवेन पूर्वन्दयंमानाः स्यामं पुराणेन नवन्तामूर्जमूर्जाहुंती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश सावाभ्रद्वंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सरंस्वती भारती द्यां भारत्यादित्यैरंस्पृक्ष्रथ्सरंस्वतीम । रुद्रैर्यज्ञमावीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधमादं मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्संस्त्रिशीर्षा षंडक्षः शतमिदंन शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हंतो बृहस्पतिः स्तोत्रमश्विना-ऽऽध्वंर्यवं वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो वन्स्पतिंर्वर्षप्रांवा घृतिनिंणिंग्द्यामग्रेणास्पृंक्षदान्तरिक्षं मध्येनाप्राः पृथिवीमुपंरेणादः हीद्वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं ब्रहिर्वारितीनां निधेधांऽसि प्रच्युंतीनामप्रं-च्युतन्निकाम्धरेणं पुरुस्पार्हं यशस्वदेना बुर्हिषाऽन्या

ब्र्ही इष्यभि ष्यांम वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्ट्कृथ्सुद्रविणा मन्द्रः कृविः स्त्यमंन्माऽऽयजी होता होतुंर्होतुरायंजीयानग्ने यान्देवानयाड्या अपिप्रेर्ये तें होत्रे अमंथ्सत् ता संस्नुषी होताऽमूँ वेस्कृमान्दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेम इस्विष्ट्कृ चाग्ने होताऽमूँ वंसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यजं॥३३॥

देवं बर्हिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवनं वस्धेयंस्य वेता देवीर्द्वारंः। वसुवनं

वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवने वसुधेयंस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहुंती। वसुवने वसुधेयस्यं वीताम्॥३४॥

देवा दैव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराशश्संः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वसुधेयंस्य वेतु। देवं बर्हिवीरितीनाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कविः।

स्त्यमंन्मायुजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट्। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंध्सत। ता श् संस्नुषी श्होत्रांन्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं युज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वस्वने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥३६॥

वीतां वेत्वभूरेकं च॥——[१४]

अग्निम्द्य होतांरमवृणीतायं यजंमानः पर्चन्प्तिः पर्चन्पुरोडाशं बृध्ननिन्द्राग्निभ्यां छाग्रं सूप्स्था अद्य देवो वन्स्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छाग्रेनाघंस्तान्तं मेदस्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवीवृधेतां पुरोडाशेन त्वामद्यर्षं आर्षेय ऋषीणान्नपादवृणीतायं यजंमानो बहुभ्य आ सङ्गतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रसि भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रीह॥३७॥

अ्ग्रिम्द्यैकम्॥———[१५]

अञ्जन्ति होतां यक्ष्यसमिद्धो अद्याग्निरजैद्दैव्यां जुषस्वा वृत्रहणा गीर्भिस्त्वः ह्याभरतमुपोह् यद्देवं बर्हिः सुंदेवं देवं बर्हिर्ग्निमद्य पञ्चंदश॥१५॥ अञ्जन्त्यग्निर्होतां नो गीर्भिरुपों हु यद्विदर्थं वाजिनः सप्तित्रिरंशत्॥३७॥ अञ्जन्तिं सूक्ताब्रूंहि॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषौंऽग्नौ कामान्प्रवेशयति। यौंऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैति। सयदिनिष्ट्वा प्रयायात्। अकांमप्रीता एनं कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुिक्षेतयः पृथंक्। अग्ने कामाय येमिर् इति। कामानेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनं कामा अनु प्रयांन्ति। तेज्स्वी वीर्यावान्भवति। सन्तंतिर्वा एषा यज्ञस्यं। योंऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंत्तिरेवास्य सा। तं प्राश्चमुद्धृत्यं। मन्सोपंतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥

मनसैव युज्ञश् सन्तंनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः। भूतिंमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्ग्निरंपक्षायंति। यावच्छम्यंया प्रविध्येत। यदि तावंदपक्षायेत्। तश् सम्भरेत्। इदं तृ एकं प्र उं तृ एकम्॥३॥ तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरिध। प्रिये देवानां पर्मे जनित्र इति। ब्रह्मणैवेन् सम्भरित। सेव ततः प्रायंश्चित्तः। यदि परस्तरामपक्षायेत। अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तः। ओषंधीर्वा एतस्यं प्शून्पयः प्रविंशति। यस्यं ह्विषं वथ्सा अपार्कृता धर्यन्ति॥४॥

तान् यद्दुह्यात्। यातयांमा ह्विषां यजेत। यन्न दुह्यात्। यज्ञपुरुर्न्तरियात्। वायव्यां यवागून्निर्वपेत्। वायुर्वे पर्यसः प्रदापयिता। स पुवास्मै पयः प्रदापयित। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मै ह्विषे वृथ्सान्पाकुंर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयित। ये यर्जमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायं दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छतिं। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं पुवारभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुंर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुंरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मै सुमीचीं

दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयो-ऽवं रुन्धे। अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृथ्सान्पाकुंर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांग्धेयेन् व्यर्धयति। ये यजमानस्य सायं च प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर्थं ह्विरार्तिमार्च्छति॥७॥

पुन्द्रं पश्चंशरावमोद्नं निर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं यंजेत्। अग्निम्ंखा पृव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता पृवोभर्याः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयः। पयंसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तरस्मे हिविषे वथ्सान्पाकुंर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्थो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यल्यंनालम्भुका भवंति। तामंपुरुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेति। अर्थ एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥

दुधाति यज्ञ उत् एक्-धर्यन्ति रुन्धे कुर्यादार्च्छत्यपार्कुर्यात्पृथिवी त्वमृष्टौ चं (सर्वान् वि वै यदिं परस्तुरामोषंधीरन्यतुरानुभयांनुर्धो वै॥)॥———[१]

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनायतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापृत्ययूर्चा वंल्मीकवपायामवं नयेत्। प्राजापृत्यो वै वल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्धा पुनंर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यंयूर्चाऽन्तंः परिधि निनयेत्। द्यावापृथिव्योग्री। ११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदवेवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्याऽऽत्मञ्जायेत। किलासो वास्यादंर्श्वसो वा। यत्प्रत्येयात्। यृज्ञं विच्छिन्द्यात्। स जुंहुयात्। मित्रो जनानकल्पयति प्रजानन्॥१२॥ मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरनिमिषाऽभि

चेष्टे। स्त्यायं ह्व्यं घृतवं ज्ञुहोतेतिं। मित्रेणैवैनंत्कल्पयति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः।

यत्पूर्वस्यामाहुत्या हुतायामुत्तराऽऽहुतिः स्कन्दैत्। द्विपाद्भिः पुशुभिर्यजमानो व्यृध्येत। यदुत्तरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुंष्पाद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गुह्या नामांनि। तत्रं ह्व्यानिं गाम्येतिं वानस्पत्ययुर्चा स्मिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनंजुंहुयात्। वनस्पतिनैव यज्ञस्यार्तां चानांतां चाऽऽहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गांरः स्कन्देंत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक इं स्यात्॥१४॥

यद्दं श्चिणा। ब्रह्मणे च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रे च पत्निये च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदुद ई:। अग्नीधे च पृशुभ्यंश्च यजंमानाय चाक ई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौं ऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशौन्तः प्रह्रियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्नेनाभिनिदंध्यात्। मा तंमो मा युज्ञस्तंम्नमा

यर्जमानस्तमत्। नर्मस्ते अस्त्वायते। नर्मो रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हिर्सीर्मुं मा हिर्सीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंश्वङ्गो वृष्भो जातवेंदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्थ्सुप्रतींकः। मा नों हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहांम। गोपोषं नों वीरपोषं चं यच्छेतिं। ब्रह्मंणैवैनं प्र हंरति। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥१६॥

वै प्रजापंतिः स्थापयति प्रजानन्नभि जुंहुयाथ्स्याँद्भियेत् जहांम् त्रीणि च (यद्विष्यंण्णेन प्राजापृत्यया् यत्कीटा मध्यमेन् यदवंवृष्टेन् यत्पूर्वंस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारो यद्विक्षणा यत्प्रत्यग्यदुदङ्कं॥॥

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यंते। यस्याऽऽहिंताग्ने-रिग्नर्मध्यमानो न जायंते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजाया होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भवित॥१७॥

अजस्य तु नाश्जीयात्। यद्जस्याँश्जीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्माद्जस्य नाश्यम्। यद्यजात्र विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्ते होत्व्यम्॥ एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्ग्रौह्मणः। अग्नावेवास्यौग्निहोत्रः हुतं भवति॥१८॥

ब्राह्मणं तु वंस्त्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्वाँह्मणं वंस्त्या अंपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तं भांग्धेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माँद्वाह्मणो वंस्त्यै नाप्रध्येः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान् वै दंर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भा स्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्दर्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँद्दर्भा नाध्यांसित्व्याः। यदिं दर्भान्न विन्देत्। अपसु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांस्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। आप्स्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥

यामेवापस्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न परिचक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यांमेध्या चं तुनुवौ सः सृज्येते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयः सःसृज्यन्तै। अग्नये विविचये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। मेध्यां चैवास्यांमेध्यां चं तुनुवौ व्यावंतियति। अग्नये व्रतपंतये पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपेत्। अग्निमेव व्रतपंतिङ् स्वेनं भाग्धेयेनोपं धावति। स एवैनं व्रतमा लम्भयति॥२१॥

गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा पृतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदिग्नहोत्रम्। तद्यथ्सवैत्। रेतो उस्य वाजिन्ड् स्रवेत्। गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकरित्यांह। रेते पृवास्मिन्वाजिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तर्दधाति। इन्द्र इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनाना रे रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पतिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवास्मैं प्रजाः प्र जंनयति। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतदित्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचेरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

अजाऽग्नावेवास्याँग्निहोत्रर हुतं भविति भवत्यासीत परिचक्षीत लम्भयित दधाित देवानां

बृह्स्पितिः पश्चं च (वि वै यद्यन्यम्जायां ब्राह्मणस्यं दर्भस्तम्बेंऽफ्सु होत्व्यम्॥)॥ \longrightarrow [3]

याः पुरस्तांत्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टाथ्स्वतंश्च याः। ताभी रिश्मपंवित्राभिः। श्रृद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनंस्स्पतिंना देवेनं। वातांद्यज्ञः प्रयुज्यताम्। तृतीयंस्ये दिवः। गायत्रिया सोम् आर्मृतः॥२४॥

सोमपीथाय सन्नियतुम्। वकंलमन्तरमा देदे। आपों देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्राणि शुन्धत। उपातुङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुन्धत। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वथ्सेषु पय इन्द्रांय ह्विषे ध्रियस्व। गायत्री पंर्णवल्कनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अग्निं गृह्णामि सुरथं यो मंयोभूः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमहें। आदित्यं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतां देवताभ्यः। वसूत्रुद्रानादित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषया। इमामूर्जं पश्चद्शीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परि गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हं व्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरिदमें षां मियं। आमावास्य हिविरिदमें षां मियं। अन्तराऽग्नी पृशवंः। देवस इसदमा गंमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः परिं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयाँ। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पिंतृणामृग्निः। अवांहुव्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं करत्। अजंस्रं त्वा॰ संभापालाः॥२८॥

विज्ञयभाग् समिन्धताम्। अग्ने दीदांय मे सभ्य। विजित्ये श्ररदंः श्रतम्। अन्नमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्ररदंः श्रतम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिर्बुध्नियो नियंच्छत्। इदमहम्ग्निज्येष्ठभ्यः। वस्भयो यृज्ञं प्रब्रंवीमि। इदमहमिन्द्रंज्येष्ठभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यों युज्ञं प्र ब्रंबीमि। इदमहं वर्रुणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यों युज्ञं प्र ब्रंबीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन मामिन्द्र स॰ सृंज। अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्मे राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥ व्रतानां व्रतपते व्रतं चरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्मे

राध्यताम्। इमां प्राचीमुदींचीम्। इष्मूर्जमि सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशुष्काग्राम्। हरांमि पशुपामहम्। यत्कृष्णों रूपं कृत्वा। प्राविंश्स्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामेकविश्शतिधा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्परिधी इस्तिस्रः समिधः। यज्ञायुरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षणं धृष्टिम्। सं भेरामि सुसम्भृतां। या जाता ओषधयः। देवेभ्यंस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव शिवमंस्तु मे॥३२॥

आच्छेता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्तम्। अपंरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कतमचनाहम्। पुनेरुत्थायं बहुला भवन्तु। स्कृदाच्छिन्नं बर्हिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्थ्सींदन्तु मे पितरंः सोम्याः। पितामहाः

त्रिवृत्पंलाशे दुर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। युज्ञे पवित्रं पोर्तृतमम्। पयो हुव्यं कंरोतु मे। इमौ प्रांणापानौ। युज्ञस्याङ्गांनि सर्वृशः। आप्याययंन्तौ सश्चरताम्। पवित्रे

प्रपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

हव्यशोधने। प्वित्रें स्थो वैष्ण्वी। वायुर्वां मनसा पुनातु॥३४॥

अयं प्राणश्चापानश्चं। यजमानमपि गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूतां पोतारौ। पवित्रे हव्यशोधने। त्वया वेदिं विविदः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तंनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिष्शोऽसि तन्तूनाम्। पवित्रेण सहागंहि॥३५॥

शिवय र ज्ञुंरिभ्धानीं। अग्नियामुपं सेवताम्। अप्रंस्र साय यज्ञस्यं। उखे उपंदधाम्यहम्। पृशुिभः सिन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां परिवेषमधारयन्। इन्द्रांय हिवः कृण्वन्तः। शिवः शृग्मो भवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्याऽऽयुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः पिवत्रमितनिताः। आपो धारय मातिगः। देवेनं सिवत्रोत्पूताः। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिः। गां दोहपिवते रज्जुम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। एता आ चंरन्ति मधुंमृद्दुहांनाः। प्रजावंतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥

बह्वीर्भवंन्तीरुप्जायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु

गावः। पूषा स्थं। अयुक्ष्मा वंः प्रजया स॰ सृंजामि। ग्यस्पोषेण बहुलाभवन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वमाना घृतं चं। जीवो जीवन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं यृज्ञं पृंथिवी च् सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वार्तेन वायुः। यजमानाय द्रविणं दधातु॥३८॥

उथ्सं दुहन्ति कुलशं चतुंर्बिलम्। इडाँ देवीं मधुंमती र सुवर्विदम्। तदिंन्द्राग्नी जिंन्वत र सूनृतांवत्। तद्यजंमान-ममृत्त्वे दंधातु। कामधुक्षः प्र णौं ब्रूहि। इन्द्रांय ह्विरिंन्द्रियम्। अमूं यस्याँ देवानांम्। मृनुष्यांणां पयो ह्तिम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हृव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृथ्सेभ्यों मनुष्येंभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तंतिरसि। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः परिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमपि गच्छतु॥४०॥

पूर्णवुल्कः पुवित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवाना १ हव्यशोधंनौ। प्रातुर्वेषायं गोपाय। विष्णों ह्व्य १ हि रक्षंसि। उभावृग्नी उंपस्तृण्ते। देवता उपंवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यं गोपंतये पुशून्॥४१॥

आर्भृत इमं गृह्णाम् पूर्वस्ताः पूर्वः परिगृह्णामि सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेभ्य आर्दित्य व्रतपते सुस्म्भृतां मे सह पुंनातु गहि नो विश्वरूपा दधातु पुनर्गच्छतु पृश्न्न (याः पुरस्तांदिमामूर्जमिह प्रजा इह पृश्ववोऽयं पितृणामुग्निः।)॥———[४]

देवां देवेषु पराँकमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु। द्वितीयास्तृतीयेषु। त्रिरेकादशा इह मांऽवत। इदश् शंकेयं यदिदं क्रोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं करिष्ये भेषजम्। इदं में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्।

इदम्हर सेनांया अभीत्वंयै॥४२॥

मुख्नपोहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भांहि। महुत इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोनिः। अग्निर्ह्व्याऽनुं मन्यताम्। खर्मङ्क्ष त्वचंमङ्क्षा सुरूपं त्वां वसुविदम्। पृशूनां तेजंसा। अग्नये जुष्टमभि घारयामि। स्योनं ते सदेनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्थ्सीदामृते प्रतिं तिष्ठ। ब्रीहीणां मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथस्नुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उथ्स्नांति जनिता मंतीनाम्। यस्त आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वितस्थे। आत्मन्वान्थ्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवान्गंच्छ सुवंर्विन्द यजंमानाय मह्यम्। इरा भूतिः पृथिव्ये रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितरो देवाः। योऽहमस्मि स सन् यंजे। यस्यास्मि न तमन्तरेमि। स्वं मं इष्टश् स्वं दत्तम्। स्वं पूर्तश् स्वश् श्रान्तम्। स्वश् हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुंपद्रष्टा। वायुरुंपश्रोता। आदित्योऽनुख्याता। द्यौः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेमी संविक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भरतमुद्धेरेमनुंषिश्च। अवदानांनि ते प्रत्यवंदास्यामि। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवृद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनंः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यांयतां पुनेः। अज्यांयो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्धः स्विष्टमिदः ह्विः। मनुना दृष्टां घृतपंदीम्। मित्रावरुणसमीरिताम्। दृक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्येकतोमुंखाम्॥४७॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भक्षिवाणः स्याम। सर्वात्मानः सर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां क्रुप्तिंरसि। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पंन्तां मे दिशः॥४८॥

देवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवीं मे कल्पन्ताम्। सुंवृथ्सरो में कल्पताम्। क्रुप्तिरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेभ्यः। इदं भूतस्याध्यक्षेभ्यः॥४९॥

विधेमं ह्विषां वयम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्ता निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद॰ हविः॥५०॥

सोम्याना ५ सोमपीथिनाम्। निर्भृक्तो ब्राह्मणः। नेहा ब्राह्मणस्यास्ति। समंङ्कां बुर्हिर्ह्विषां घृतेनं। समादित्यैर्वसुंभिः सं मुरुद्धिः। समिन्द्रेण विश्वेभिर्देवेभिरङ्काम्। दिव्यं नभो गच्छतु यथ्स्वाहाँ। इन्द्राणीवांविधवा भूयासम्।

487

अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥

उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। सञ्जानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिर्जरमा रंभेताम्। दशंते तनुवों यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजंमानो घृतेनं। नारिष्ठयौः प्रशिष्मीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजंमानोऽमृतोंऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जो भागः शंतऋत्। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतमः हहो। अहं देवानाः सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिमेष्टं न मिथुर्भवाति। अहं नारिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदाभ्यामिन्द्रो अदंधाद्भाग्धेयम्। अदारसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् यज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नो विदद्भिभामो अशंस्तिः॥५३॥

मा नो विदद्वृजना द्वेष्या या। ऋष्मं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष स् सहस्रिणम्। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहाँ। अमावास्यां सुभगां सुशेवाँ। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नों दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्याये स्वाहां। अभि स्तृंणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिं मा हि सीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यजंमानस्य ब्रुध्ने॥५४॥

अभीत्वंर्ये करोमि क्रमीत्पिताऽऽत्मनं एक्तो मुंखां मे दिशोऽध्यक्षेभ्यो हृविर्गार्हपत्या कल्पयुत्रशंस्तिः सा नों दोहताः सुवीर्यः सुप्त चं॥—————————[५]

परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तः। अपा॰ रस् ओषंधीना॰ सुवर्णः। निष्का इमे यजंमानस्य सन्तु कामृदुर्घाः। अमुत्रामुष्मिं श्लोके। भूपंते भुवंनपते। मृह्तो भूतस्यं पते। ब्रह्माणं त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवंनपतिः। अहं महतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवनं सिवता प्रसूत् आर्त्विज्यं करिष्यामि। देवं सिवतरेतं त्वां वृणते। बृह्स्पित्ं दैव्यं ब्रह्माणम्। तदहं मनसे प्र ब्रंवीमि। मनों गायित्रये। गायत्री त्रिष्टुअं। त्रिष्टुअगंत्ये। जगंत्यनुष्टुभें। अनुष्टुक्पङ्क्षी। पङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वैभ्यो देवेभ्यः। विश्वे देवा बृह्स्पतंये।

बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भवः सुवंः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मंनुष्यांणाम्। बृहंस्पते यज्ञं गोपाय। इदं तस्मै हुर्म्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनसा तपस्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित मानुषीषु। चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका भुवंनस्य मध्यें। मुर्मृज्यमांना महृते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। भूमिंभूत्वा मंहिमानं पुपोष। ततो देवी वंधयते पयार्स्स। यज्ञियां यज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्वरिश्च। यो मां हृदा मनसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन हृदंयेनेष्णृता चं। तस्यैन्द्र वज्रेण शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृदु प्रथमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदंनाय बर्हिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकंस्य पृष्ठे पंरमे व्योमन्। चतुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका वयुनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥

सा में धुक्ष्व यर्जमानाय कामान्। शिवा चं मे शुग्मा चैधि।

स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इष्मूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्षूत्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्वं पुष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्न्नाद्यं मे पिन्वस्व। प्रजां पश्नमें पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु मैं। अविक्षोभाय परिधीं दंधामि। धूर्ता धुरुणो धरीयान्। अग्निर्द्वेषा देसि निरितो नुंदातै। विच्छिनद्यि विधृतीभ्या स्प्तान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। विशो यन्त्राभ्यां विधमाम्येनान्। अह स्वानां मृत्तमों उसानि देवाः। विशो यन्ने नुदमां ने अरांतिम्। विश्वं पाप्मानममंतिं दुर्मरायुम्॥६१॥

सीदंन्ती देवी सुंकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृंती स्वधृंती। प्राणान्मयिं धारयतम्। प्रजां मियं धारयतम्। पृशून्मियं धारयतम्। अयं प्रस्तर उभयंस्य धृतां। धृतां प्रयाजानां मृतानूं याजानां म्। स दांधार समिधों विश्वरूपाः। तस्मिन्थ्सुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंह देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा

सम्भृंताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृं व्यान् ये चं जिन् ष्यमाणाः। दोहें यज्ञ सुदुघांमिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मथ्सपत्नाः। यो मां वाचा मनसा दुर्मरायुः। हृदाऽरांतीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

ड्दमंस्य चित्तमधंरं ध्रुवायाः। अहमृत्तंरो भूयासम्। अधंरे मथ्सपत्नाः। ऋषभोऽिस शाक्तरः। घृताचीना स्पूनः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदंसि सीद। स्योनो में सीद सुषदंः पृथिव्याम्। प्रथीय प्रजयां पृश्भिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्यामन्तरिक्षे। अहमृत्तंरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मथ्सपत्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शतधार् उथ्सः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। यज्ञोऽसि सर्वतः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापंतिरसि सर्वतः श्रितः॥६५॥

स्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शृतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। इदिमिन्द्रियम्मृतंं वीर्यम्ं। अनेनेन्द्रांय प्शवोंऽचिकिथ्सन्। तेनं देवा अवतोप् माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओजंः सनेयम्। शृतं मियं श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंरत्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिश्रद्धलमिन्द्रें प्रजापितः। इदं तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपिरेष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिध् मां धिनोत्। अयं वेदः पृथिवीमन्विविन्दत्। गुहां सतीं गहने गह्वरेषु। स विन्दतु यर्जमानाय लोकम्। अच्छिदं युज्ञं भूरिकर्मा करोत्। अयं युज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्रा यर्जुषा देवतांभिः॥६७॥

तेन लोकान्थ्सूर्यंवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमंश्याम्। यो नः कनीय इह कामयांतै। अस्मिन् युज्ञे यजंमानाय मह्मम्। अप तिमेन्द्राग्नी भुवनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा सिर्ष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं माँजिमी अग्निमंत्रादम्त्राद्यांय। उपंहूतो द्योः पिता। उप मां द्योः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृंथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नीभात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामा-ज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञ र सिम्मं दंधातु। बृह्स्पतिंस्तनुतािम्मं नंः। विश्वे देवा इह मांदयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्चािमं। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैदेवा नि वृश्चत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्टाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदः। यं चाऽऽहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्ने सन्दंह। याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा सस्वा॰सम्॥७१॥

वार्जं जिगिवाश्सम्। वाजिनं वाज्जितम्। वाज्जित्यायै सम्मार्जिम। अग्निमंत्रादम्त्राद्याय। वेदिर्बर्हिः शृतश् हृविः। इध्मः परिधयः सुर्चः। आज्यं यज्ञ ऋचो यज्ञंः। याज्याश्च वषद्वाराः। सं मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मस्त्रहंने हुते॥७२॥ दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां

सहस्रकाण्डेन। द्विषन्त र शोचयामसि। द्विषन्में बहु शोचतु।

ओषंधे मो अह १ श्रुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्ष्ट्विमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नर्मः। उपं ते नर्मः। उपं ते नर्मः। त्रिष्फ्लीक्रियमाणानाम्। यो न्युङ्गो अंवृशिष्यंते। रक्षंसां भागधेयम्। आपस्तत्प्र वहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच शूर्पं। आशिश्लेषं दृषि यत्कपालें। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजामि। विश्वे देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बह्धाः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोमि। उद्यन्नद्यमित्र महः। स्पत्नांन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिह। निम्नोचन्नधंरान्कृधि॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य। उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नुत्तंरां दिवम्ँ। हृद्रोगं ममं सूर्य। हृरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥

अथों हारिद्रवेषुं मे। हुरिमाणुं नि दंध्मसि। उदंगाद्यमादित्यः। विश्वेन सहसा सह। द्विषन्तुं मम र्न्थयन्। मो अहं द्विष्तो रंधम्। यो नः शपादशंपतः। यश्चं नः शपंतः शपात्। उषाश्च तस्मैं निम्नुक्चं। सर्वं पाप॰ समूहताम्॥७७॥

यो नेः स्पत्नो यो रणेः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। अवसृष्टः परापत। शरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विंश। मैषां कश्चनोच्छिषः॥७८॥

पितः प्रजापंतये तप्स्वी वाचा सौभंगाय पृशून्में पिन्वस्व दुर्मरा्युं देवयानांनग्रेऽन्तिरिक्षेऽहमुत्तरो भूयासं प्रजापंतिरिस सुर्वतः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाज्जितं पृथिवी ह्वंयतामग्निराग्नींधाद्वश्चत सस्वा॰स॰ हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृषि दध्मस्यूहतामृष्टौ चं॥————[६]

सक्षेदं पंश्य। विधंतिर्दं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पिनेष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो विरेष्ठो अक्षिमिविभाति। अनु द्यावांपृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्षुत्रस्य योनिः। क्षुत्रमंस्यृतस्य योनिः। ऋतमंसि भूरा रंभे। श्रृद्धां मनंसा। दीक्षां तपंसा। विश्वंस्य भुवंनुस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्रायतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाक्कर गायत्रीं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर त्रिष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर् जर्गतीं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्करानुष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाक्कर पृङ्किः प्रपंद्ये॥८१॥

तान्ते युनज्मि। आऽहं दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नीम्। गायत्रेण् छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतर सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं चे मे सत्यं चांभूताम्। ज्योतिरभूवर् सुवंरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्र्ध्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरक्षं दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां

दीक्षयां दीक्षितः। ययां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षं त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। दोक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। वाक्ता दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। सामांनि त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विष्श्चापंचितिश्च॥८६॥

आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्न सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितेह सींद। देवानार् सुम्नो महते रणांय। स्वास्स्थस्तनुवा संविशस्व। पितेवैधि सूनव आ सुशेवः। शिवो मां शिवमा विश। सत्यं मं आत्मा। श्रद्धा मेऽक्षितिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंसूता मा दिशों दीक्षयन्तु। स्त्यमंस्मि। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककुञ्जांतवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतींकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्थ्सधस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥

विश्वं देवा यर्जमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्त सप्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्तपंदा अभूम। सख्यं ते गमेयम्॥८९॥

स्ख्याते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते पृथिवी पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्तेऽन्तरिक्षं पादः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्यास्ते द्यौः पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते दिशः पार्दः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न् इष्मूर्जं धुक्ष्व। तेजं इन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्न्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानां धेनु स् सुद्धामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबतु। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नंराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वसुंमती स् रुद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नाभां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्येत्। देवस्यं सिवतुः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। तस्यारं सुपूर्णाविध् यो निविष्टो। तयोदिवानामिधं भागधेयम्। अप जन्यं भ्यं नुंद। अपं चुकाणि वर्तय। गृहर सोमंस्य गच्छतम्। न वा उं वेतन्प्रियसे न रिष्यसि। देवार इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्तिं सुकृतो नापिं दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता देधातु॥९२॥

कृधि मीढुषेऽहुंतस्य च सप्त चं॥=

-[८]

यद्स्य पारे रजंसः। शुक्रं ज्योतिरजांयत। तन्नः पर्ष्दिति द्विषंः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषें। उदुंस्र तिष्ठ प्रति तिष्ठ मारिषः। मेमं यज्ञं यज्ञमानं च रीरिषः। सुवर्गे लोके यर्जमान हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। यस्मौद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः सुमज्ञास्थाः। ततो नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमो रुद्रायं मीढुषे॥९४॥ य इदमकः। तस्मै नमः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उंवेतन्प्रियसे। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतंनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहुंतस्य हुतस्यं च। हुतस्य चाहुंतस्य च। अहुंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रौग्नी अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथौम्। मा यजमानं तमो विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः सोमंमिमं पिबात्। स॰सृष्टमुभयंं कृतम्॥९५॥

अनागसंस्त्वा वयम्। इन्द्रेण् प्रेषिता उपं। वायुष्टें अस्त्वश्याभूः। मित्रस्तें अस्त्वश्याभूः। वर्रणस्ते अस्त्वश्याभूः। अपाङ्क्षया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानां ककुभः प्रयुतों नपातारः। व्युनेन्द्र हं ह्वयत। घोषेणामीवा इश्चातयत॥ ९६॥

युक्ताः स्थ वहंत। देवा ग्रावांण इन्द्रिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्माथ्स्धस्थात्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ सुंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसं म् आसुंषवुः। सम्रे रक्षाः स्यविषषुः। अपहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्ञरा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा त्नूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽिस शृतं कृंतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुंणं यमाहुः। यं मित्रमाहुर्यमुं स्त्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मै त्वा तेभ्यंस्त्वा।

मियं त्यिदिन्द्रियं महत्। मियं दक्षों मियं ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धमीं वि भातु मे। आकूँत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमिह॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवंनािन विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंडशी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गणे॥१००॥

प्रते महे विदर्थे शश्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषो हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतं नयः। हरिभिश्चार् सेचेते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरेः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमिस। अधिपतिं माम्। आयुष्मन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रेश्च सम्राङ्वरुंणश्च राजां। तो ते भृक्षं चेऋतुरग्नं एतम्। तयोरन् भृक्षं भेक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजापंतिर्विश्वकर्मा। तस्य मनो देवं युज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानं मे विन्द। नमों रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयंने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोंपायित् त हेवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मि। यमस्यं बिलिना चरांमि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनुणा अस्मिन्नंनुणाः परंस्मिन्। तृतीये लोके अनुणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वांन्यथो अंनुणा आक्षीयम। इदमूनु श्रेयों-ऽवसानमा गंन्म। शिवे नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोम्द्धनंवदश्वंवदूर्जस्वत्। सुवीरां वीरेरनु सश्चरेम। अर्कः प्वित्र र जंसो विमानः। पुनातिं देवानां भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा संविदाने। घृतं दुंहाते अमृतं प्रपींने। प्वित्रम्को रजंसो विमानः। पुनातिं देवानां भुवंनानि विश्वां। स्वज्योतिर्यशों महत्। अशीमहिं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥

च॥_____[९]

उदंस्ताम्फ्सीथ्सविता मित्रो अंर्यमा। सर्वान्मित्रान-

वधीद्युगेनं। बृहन्तं मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तरिक्षे। बृहति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृहता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिष्नया यूयं दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्ते द्रफ्सो यस्तं उदर्षः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वं भुवनमाविवेशं। स नः पाह्यरिष्ट्रो स्वाहाँ। अनुं मा सर्वो युज्ञोऽयमेतु। विश्वे देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियुश्छन्दा रेसि निविदो यजूरेषि। अस्यै पृथिव्ये यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तनिमनुं वर्तस्व। अनुंवीरैरनुं राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरनु सर्वेरु पुष्टेः। अनुं प्रजया-ऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नो यज्ञमृंज्धा नंयन्तु। प्रतिक्षत्रे प्रति तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रति तिष्ठामि गोषुं। प्रति प्रजायां प्रति तिष्ठामि भव्यै। विश्वंमन्याऽभि वावृधे। तद्न्यस्यामधिश्रितम्। दिवे चं विश्वकंमणे। पृथिव्यै चांकरं नमः। अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कांनृष्भो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवंना। स्कन्नो युज्ञः प्र जंनयतु।

अस्कानजीन प्राजीन। आ स्कन्नाञ्जायते वृषाँ। स्कन्नात्प्र जीनषीमिह। ये देवा येषामिदं भागधेयं बुभूवं। येषां प्रयाजा उतानूंयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वर्रुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। उत त्या नो दिवां मितिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप् स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप् स्निधंः। शम्श्रिर्ग्निभिस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येति जीवान्। त्रिवृद्यद्भुवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपींषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मवे। अपश्चाद्द्यवने नरैं। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रोऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपहूतस्योपहूतो भक्षयामि॥११०॥

उद्रुष इंन्ड्रियेण गा मृतिरंरुपा अंगात्रीणि च॥——[१०] ब्रह्म प्रतिष्ठा मनसो ब्रह्म वाचः। ब्रह्म युज्ञाना ५

ह्विषामार्ज्यस्य। अतिरिक्तं कर्मणो यर्च हीनम्। युज्ञः

पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितम्त्याश्रांवितम्। वर्षद्वृतमृत्यनूँक्तं च यज्ञे। अतिरिक्तं कर्मणो यच्चं हीनम्। यज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कुल्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतं देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा अभिदुंच्छुनायते। अन्यत्रास्मन्मंरुतस्तिन्निधे-तन। तृतं म् आपस्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथाय शस्यते। अय संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समृतृण्णुतर्भुवः। उद्वयं तमस्परि। उदुत्यं चित्रम्॥११२॥

ड्मं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नां अग्ने स त्वन्नां अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजापते। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि। मेषान्नुंगादपंरो अर्धमेतम्। शृतं जीवन्तु श्ररदः पुरूचीः। तिरो मृत्युं दंधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वषडिनष्टेभ्यः स्वाहां। भेषजं दुरिष्ट्रो स्वाहा निष्कृंत्ये स्वाहां। दौरांध्ये स्वाहा देवींभ्यस्तनूभ्यः स्वाहां॥११३॥

ऋद्धै स्वाहा समृद्धै स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयामहे। ततों नो अभयं कृधि। मघंवञ्छुग्धि तव तन्नं ऊतयें। वि द्विषो वि मृधो जिह। स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृधो वृशी। वृषेन्द्रः पुर एतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भिर्यदतो न ऊनम्॥११४॥

आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनौज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो यज्ञः। यज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकत्रा मनसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतौ क्रतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा॰ ऋतुशो यंजाति॥११५॥

देवा इश्चित्रं तुनूभ्यः स्वाहोनं पुरुषसम्मितोऽग्ने तदस्य कल्पय पश्चं च॥———[११]

यद्देवा देव्हेडंनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्या-स्तस्मांन्मा मुश्चत। ऋतस्यर्तेन् मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचाऽनृंतमूद्मि। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकृम। करोतु मामनेनसम्॥११६॥

ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन् त्वः संरस्वति। ऋतान्मां मुश्रुताः हंसः। यद्न्यकृतमारिम। सृजात्शुः सादुत वां जामिश्र्सात्। ज्यायंसः शश्सांदुत वा कनीयसः। अनौज्ञातं देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवद्धांम्॥११७॥

शिश्त्रैर्यदर्नृतं चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यद्धस्ताम्यां चकर् किल्बंषाणि। अक्षाणां वृग्नुमुंप्जिघ्नंमानः। दूरेप्श्या च राष्ट्रभृचं। तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानि। अदींव्यत्रृणं यद्हं चकारं। यद्वादांस्यन्थ्सञ्चगारा जनेम्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मयिं माता गर्भे सित॥११८॥

प्रनिश्चकार् यत्प्रिता। अग्निर्मा तस्मादेनसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि स्सितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनुणो भंवामि। यदन्तिरक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहि सिम। अग्निर्मा तस्मादेनसः। यदाशसां निशसा यत्पराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूर्तनं यत्पुराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः। अति क्रामामि दुरितं यदेनः। जहांमि रिप्रं पर्मे स्थस्थै। यत्र् यन्तिं सुकृतो नापि दुष्कृतः। तमा रोहामि सुकृतां नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनः। त्रित एतन्मंनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदानशे। अग्निर्मा तस्मादेनसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्रमुंश्चत्। दुरिता यानि चकृम। करोतु मामनेनसम्। दिवि जाता अफ्सु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपंः। ता नंः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तं दुरितं चरांम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुंराणम्। हिरंण्यवर्णास्तत् उत्पुंनीत नः। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्रे स त्वन्नों अग्रे। त्वमंग्रे अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवद्धारं स्ति पंराशसांऽऽन्शेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नुस्नीणिं च (यहेवा देवां ऋतेनं सजातशर्साद्यद्वाचा यद्धस्तां-यामदींव्यं यन्मियं माता यदां पिपेष यदन्तिरक्षं यदाशसाऽतिं क्रामामि त्रिते देवा दिवि जाता अपस् जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वन्नों अग्रे स त्वन्नों अग्रे त्वमंग्ने अयासिं।)॥———[१२]

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिद्ः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गानि स्विधिता परूर्षेष। तथ्मन्ध्रथ्स्वाज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमध्सङ्क्षयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त् आप्यांयतां तत्ते। निष्ट्यांयतां देव सोम। यत्ते त्वचं बिभिदुर्यच् योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनंसि त्मनां॥१२२॥

त्वया तथ्सोम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सुन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्योन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहूतास्तवं स्मः। आ नो भज्ञ सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीद्विरं आवृणानः। अनांगास्तनुवो वावृधानः। आ नो रूपं वहतु जार्यमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्वां घृतेनं। प्रियाण्यङ्गानि तवं वर्धयंन्तीः। तस्मैं ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्थ्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या सम् चक्षुंषा त्वम्। सः श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त् आस्थित् शम् तत्तं अस्तु। जानीतान्नः सङ्गनेन पथीनाम्। एतं जानीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य॥१२४॥

यदागच्छांत्पथिभिर्देवयानैंः। इष्टापूर्ते कृणुतादाविरेस्मे। अरिष्टो राजन्नगृदः परेहि। नमंस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकुमारोह सह यजंमानेन। सूर्यं गच्छतात्पर्मे व्योमन्। अभूद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमहं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रत्ना भजंति मानुवेभ्यः। श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिर्हेतिः। उग्रा श्तापाष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्ते॥१२५॥

त्मना जार्यमानोऽस्य दधत्पश्चं च॥———[१३]

यिद्दिक्षि मनसा यर्च वाचा। यद्वाँ प्राणेश्वक्षुंषा यच्च श्रोत्रंण। यद्वतंसा मिथुनेनाप्यात्मनाँ। अन्द्र्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षाये तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिय तेजं इन्द्रियम्। यद्वचा साम्ना यजुंषा। पृशूनां चर्मन् ह्विषां दिदीक्षे। यच्छन्दोभिरोषंधीभिर्वन्स्पतौँ। अन्द्र्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्॥१२६॥

शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिय तेजं इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्षत्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजापंतिः सोमो वरुणो येन् राजां। विश्वे देवा ऋषंयो येनं प्राणाः। अन्द्र्यो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिय तेजं इन्द्रियम्। अपा पृष्पंमस्योषंधीना् रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं॥१२७॥ अग्नेः प्रियतंम हिवः स्वाहां। अपां पृष्पंमस्योषंधीना र रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषधीना १ रसंः। सोमंस्य प्रियं धामं। विश्वेषां देवानां प्रियतंम १ ह्विः स्वाहां। वय १ सोम व्रते तवं। मनंस्तुनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कृत्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मांदयध्वम्। सोम्यांस इह मांदयध्वम्। कव्यांस इह मांदयध्वम्। अनंन्तरिताः पितरः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतं न आगन्। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पर्णं वनस्पतिरव॥१२९॥

अभि नंः शीयता १ र्याः। सर्चतां नः शचीपितः। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा १ रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमागंन्म। यद्गोजिद्धेन्जिदंश्वजिद्यत्। पूर्णं वनस्पतेरिव। अभि नंः शीयता १ र्याः। सर्चतां नः शचीपितिः॥१३०॥

वनस्पतांवुद्धो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियं धामांशीमहीवाभिनंः शीयता॰ र्यिरेकं च॥ [१४]

सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ताद्देवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य

पारें ऽनागस् उदंस्ताम्फ्सीद्वह्मं प्रतिष्ठा यद्देवा यत्ते ग्राव्णणा यद्दिवीक्षे चतुर्दश॥१४॥
सर्वान्भूतिमेव यामेवाफ्स्वाहुंतिं व्रतानां पर्णवल्कः सोम्यानांमस्मिन् यज्ञेऽग्ने यो नो
ज्योग्जीवाः प्रोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हंपत्यस्त्रिष्टशद्वंत्तरशतम्॥१३०॥
सर्वाञ्छचीपतिः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्चनता स् सङ्गृह्णानीति। द्वादंशारत्नी रश्ना भंवति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावं रुन्धे। मौञ्जी भंवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्ज-मेवावं रुन्धे। चित्रा नक्षंत्रं भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥ यदंश्वमेधः समृद्धे। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपदातीनृत्विजंः समावंहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ष्ट्ये।

केश्रम्श्रु वंपते। नुखानि नि कृन्तते। द्तो धांवते। स्नाति। अहंतं वासः परिंधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वार्चं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गुप्त्यै। रात्रिं जागरयंन्त आसते।

सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्रौ॥२॥

कर्म धत्ते पश्च च॥———[१]

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापृत्यः समृंद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृंता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्नो वा अन्नं जायते। यदेवान्नोऽन्नं जायंते। तदवं रुन्धे। तासुं ब्रह्मौद्नं पंचित। रेतं पुव तद्दंधाति॥३॥ चतुंः शरावो भवति। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति। उभ्यतों रुक्मौ भंवतः। उभ्यतं पुवास्मिन्नुचं दधाति। उद्धंरित शृत्वायं। सूर्पिष्वान्भवित मेध्यत्वायं। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्चंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। चृत्वार्रि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योती ध्रूष्यवं रुन्धे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नश्नान्युंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओंदनः। रेत आज्यम्। यदाज्यें रशनान्युनत्तिं। प्रजापंतिमेव रेतंसा समंध्यति। दर्भमयीं रशना भंवति। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छति। यदर्श्वः। प्वित्रं वै दुर्भाः॥५॥ यद्भमियीं रशुना भवंति। पुनात्येवैनम्। पूतमेंनुं मेध्यमा लंभते। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य महिमोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजां महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राश्ञन्ति। महिमानंमेवास्मिन्तद्देधति। अश्वस्य वा आलेब्यस्य रेत उदेकामत्। तथ्सुवर्णः हिरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् हिरंण्यं ददांति। रेर्त एव तद्धाति। ओद्ने दंदाति। रेतो वा ओदनः। रेतो हिरंण्यम्।

रेतंसैवास्मिन्नेतों दधाति॥६॥

यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंतयेऽप्रंतिप्रोच्याश्चं मेध्यं बृप्ताति। आ देवताभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यः प्रंतिप्रोच्यं। न देवताभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्चं मेध्यं भन्थ्स्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यास्मितिं। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं ब्रह्मति॥७॥

न देवतांभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इतिं रश्नामादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनोंर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनों हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह यत्यैं। व्यृंद्धं वा पृतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्कंण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्येत्यिधं वदित् यजुष्कृत्ये। यज्ञस्य समृंद्धौ॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारत्नी रश्ना कंर्त्व्या(३) त्रयोदशार्त्नी(३)-रितिं। ऋष्भो वा एष ऋंतूनाम्। यथ्संवथ्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासों विष्टपम्। ऋष्भ एष युज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋषभस्यं विष्टपम्॥ एवमेतस्यं विष्टपम्॥ त्रयोदशमंर्त्नि ॥ रंशनायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर्ं सङ्स्क्रोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदथेषु कृव्येत्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिंमेवोपावंति। ऋतस्य सामन्थ्यरमारपन्तीत्यांह। सृत्यं वा ऋतम्। सृत्येनैवनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवनम्सीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। युन्ताऽसीत्यांह। युन्तारंमेवैनं करोति। धूर्ताऽसीत्यांह। धूर्तारंमेवैनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वान्रमित्यांह। अग्नावेवैनं वश्वान्रे जुंहोति। सप्रथसमित्यांह॥११॥

प्रजयैवेनं पृश्भिः प्रथयित। स्वाहांकृत् इत्यांह। होमं एवास्येषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयित। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धर्ताऽसिं ध्रुण् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। कृष्ये त्वा क्षेमांय त्वा रय्ये त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैन ई स्वृगा करोति। स्वाहाँ त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वः। यस्यां एव देवताया आलुभ्यतें। तयैवैन इ समर्धयति॥१२॥

बुध्राति समृद्धा उपादंधात्यसीत्यांहु सप्रंथसमित्यांह देवेभ्य इत्यांहु पश्चं च॥———[३]

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्ताःत्रयति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नंयति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृंहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसित् तम्भ्यंमीति वरुण इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। पूरो मर्तः पुरः श्वेति शुनंश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव व पाप्मा भ्रातृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य भ्रातृंव्यः हन्ति। सैभुकं मुसंलं भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौड्श्रक्षेयो हंन्ति। पुड्श्रक्वां वे देवाः शुचं न्यंदधः। शुचैवास्य शुचर्ं हन्ति। पाप्मा वा एतमींपस्तित्यांहुः। योऽश्वमेधेन् यजंत इति। अश्वंस्याधस्पदमुपांस्यति। वृज्जी वा अश्वंः प्राजापत्यः। वञ्जेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यमवंक्रामित। दक्षिणाऽपं प्रावयति॥१४॥

पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्रावयति। ऐषीक उंदूहो

भंवति। आयुर्वा ड्रषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेत्स्शाखोपसम्बद्धा भवति। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेत्सः। स्वादेवेनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तात्प्रत्यश्चेमभ्युदूहित। पुरस्तादेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाति। अहं च त्वं चं वृत्रहितितं ब्रह्मा यजमानस्य हस्तं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे पुव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरध्जमित्रत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजिंत्ये॥१५॥

भुवृति प्रावयति मिमीते पर्श्वं च॥————[४]

चृत्वारं ऋत्विजः समुंक्षन्ति। आभ्य एवैनं चत्सभ्यों दिग्भ्योंऽभि समीरयन्ति। शृतेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्युः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अयश् राजां वृत्रं वंध्यादितिं। राज्यं वा अध्वर्युः। क्षत्रश्र राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रं दंधाति। शृतेनां राजभिरुग्रैः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उदङ्गिष्ठन्त्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ट्वा। अय र राजांप्रतिधृष्यों ऽस्त्विति। बलं वै ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलेनेवास्मिन्बलें दधाति। श्तेनं सूतग्राम्णिभिः सह होतां। पृश्चात्प्राङ्गिष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन् मेध्येनेष्ट्वा। अय॰ राजाऽस्यै विशः॥१७॥

बहुग्वे बंहुश्वायें बहुजाविकायें। बहुव्रीहियवायें बहुमाषितलायें। बहुहिरण्यायें बहुहस्तिकाये। बहुदास-पूरुषायें रियमत्ये पृष्टिंमत्ये। बहुरायस्पोषाये राजास्त्विति। भूमा वे होतां। भूमा सूतग्रामण्यः। भूम्रेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्तेनं क्षत्तसङ्ग्रहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो देक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ट्वा। अयर राजा सर्वमायुरेत्विति। आयुर्वा उद्गाता। आयुंः क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंदि-धाति। श्तरशंतं भवन्ति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। चृतुः श्ता भंवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

ब्रह्मा विश उक्षिति दिश एकं च॥-----[५]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दिति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दित। यन्निक्तमनालब्धमुध्सृजन्ति। यथ्स्तोक्यां अन्वाहं। सर्वहुतंमेवेनं करोत्यस्कंन्दाय। अस्कंन्नर् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वाह। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीत। अपरिमिता अन्वांह। अपरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्री। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपंः। ता अवं रुन्धे। अस्यां जुहोति। इयं वा अग्निवैश्वानरः॥२१॥

अस्यामेवैनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापितः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेध स्र स्थापयामि। तेन ततः स्र स्थितेन चरामीतिं। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमाय स्वाहेत्यांह। सोमायैवैनं जुहोति। स्वित्रे स्वाहेत्यांह। स्वित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या एवेनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण एवेनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय एवेनं जुहोति। अपां मोदांय स्वाहेत्यांह। अद्भा एवेनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं एवेनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहेत्यांह। वर्रुणायैवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशाँक्षरा विराट्। अर्न्न विराट्। विराजैवान्नाद्यमर्व रुन्धे। प्र वा एषों-ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोतिं। पुनंः पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। एता १ ह वाव सौं ऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्केन्दाय। अस्केन्नर् हि तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दंति॥२४॥ अभिजित्यै वैश्वान्रः संवित्र एवैनं जुहोति वायवं एवैनं जुहोति च्यवते पट् चं॥——[६] प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीतिं पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टन्प्रोक्षंति। प्रजापंतिर्वै देवानांमन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यमेवास्मिन्वीर्यं दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामंत्रादो वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यां त्वेति दक्षिणतः। इन्द्राग्नी वै देवानामोजिष्ठौ बलिष्ठौ। ओर्ज एवास्मिन्बर्लं दधाति। तस्मादर्श्वः पशूनामोर्जिष्ठो बिलेष्ठः। वायवे त्वेति पश्चात्। वायुर्वे देवानांमाशुः सारसारितंमः॥२५॥ जवमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पश्नामाशुः

सारसारितंमः। विश्वेंभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्यंत्तर्तः। विश्वे वै देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं एवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवेभ्यस्त्वेत्यधस्तात्। देवा वै देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपरिष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषिमन्तो हरस्वनंः। त्विषिंमेवास्मिन् हरों दधाति। तस्मादश्वंः पशूनां त्विषिमान् हरस्वितमः। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेत्यांह। एभ्य एवैनं लोकेभ्यः प्रोक्षंति। सते त्वाऽसंते त्वाऽन्धस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्यांह। तस्मांदश्वमेधयाजिन सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यत्प्रांजापत्योऽश्वंः। अथ कस्मादिनमुन्याभ्यों देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंताः। तं यद्विश्वेंभ्यस्त्वा भूतेभ्य इतिं प्रोक्षति। देवतां एवास्मिन्नन्वा यांतयति। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

सार्सारितमोऽपंचिततमः प्राजापृत्योऽश्वः पश्चं च॥_____[७]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दित। एवं वा एतदश्वस्य स्कन्दित। यद्रोक्षित्मनांलब्धमृथ्मृजन्ति। यदेश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सूर्वहृतंमेवेनं करोत्यस्कन्दाय। अस्कन्नु हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दित। ईङ्काराय स्वाहेङ्गृताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अश्वचिर्तानिं। चरितेरेवेन् समर्धयित॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचिर्तानि। नैता होत्व्यां इति। अथो खल्बांहुः। होत्व्यां एव। अत्र वावैवं विद्वानश्वमेधः सङ्स्थांपयति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्मांद्धोत्व्यां इतिं। बृहि्धां वा एनमेतदायतंनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मे जनयति॥२९॥

यस्यांनायत्नैंऽन्यत्राग्नेराहंतीर्जुहोति। सावित्रिया इष्टाः पुरस्तांध्स्वष्टकृतंः। आहुवनीयैंऽश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन एवास्याहंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। तदांहः। यज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। यज्ञस्य कृष्ट्यैं। सुवर्गस्यं लोकस्यानंख्यात्या इतिं। अथो खल्वांहः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभिर्यजंमानं व्यंधयेत्। अवं सुवर्गाल्लोकात्पंद्येत। पापीयान्थस्यादितिं। सुकृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृश्भिर्व्यर्धयित। अभि सुंवर्गं लोकं जयित। न पापीयान्भवित। अष्टाचंत्वारिश्शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारिश्शदक्षरा जगंती। जाग्तोऽश्वः प्राजापृत्यः समृद्धे। एक्मितिरिक्तं जुहोति। तस्मादेकः प्रजास्वर्ध्वकः॥३१॥

प्र यशः श्रेष्ठांमाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यवांऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियं नांमधेयम्। प्रियेणैवैनं नामधेयंनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयेते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥ आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवैनं गमयति। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्यांय त्वा भविष्यते त्वेत्युथ्मृंजित सर्वत्वायं। देवां आशापाला एतं देवेभ्योऽश्वं मेधांय प्रोक्षितं गोपायतेत्यांह। शृतं वै तत्प्यां राजपुत्रा देवा आशापालाः। तेभ्यं एवैनं परिं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमृंक्तः परां परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितिः स्वाहेतिं चतृषु पथ्सु जुंहोति॥३४॥

पुता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनं बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जंहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वं मेध्य रक्षंन्ति। तेषां य उद्दचं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथ य उद्दचं न गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽबुलोंऽश्वमेधेन यजेते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्। हुन्येतांस्य युज्ञः। चृतुः शृता रक्षिन्ति। युज्ञस्याघांताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्वित्तिः॥३६॥ गुच्छुति भुवतः पृथ्सु जुंहोति न गच्छंन्ति नवं च॥-----[९]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

स्प्त जुंहोति। स्प्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहमेव दीक्षामवं रुन्धे। त्रीणि वैश्वदेवानिं जुहोति। चत्वायौद्धहुणानिं। स्प्त सम्पंद्यन्ते। स्प्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे॥३८॥

एकंविश्शतिं वैश्वदेवानिं जुहोति। एकंविश्शतिर्वे देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्वप्रस्यं विष्टपम्॥ तथ्स्वाराज्यमुच्यते॥३९॥

त्रिष्शतंमौद्भहुणानिं जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्यै। एषां लोकानां क्रुस्यै। अप वा एतस्मांत्र्याणाः क्रामन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे। पूर्णाहुतिमंत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥

रु-धे प्राणान्दीक्षामवं रुन्ध उच्यते क्रामन्ति तिष्ठति॥**——————[१०**]

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। यज्ञस्योद्यंत्ये। स्वाहाऽऽिधमाधीताय स्वाहां। स्वाहा-ऽधीतं मनसे स्वाहां। स्वाहा मनः प्रजापंतये स्वाहां। काय स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेतिं प्राजापृत्ये मुख्ये भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्ये स्वाहाऽदित्ये मृह्यै स्वाहाऽदित्ये सुमृडीकाये स्वाहेत्याह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सरंस्वत्ये स्वाह्य सरंस्वत्ये बृह्त्ये स्वाह्य सरंस्वत्ये पावकाये स्वाहेत्यांह। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवेन्मुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे न्रियंषाय स्वाहेत्यांह। पृश्वो वे पूषा। पृश्मिरेवेन्मुद्यंच्छते। त्वष्ट्रे स्वाह्य त्वष्ट्रं तुरीपांय स्वाह्य त्वष्ट्रं पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्ट्रं तुरीपांय स्वाह्य त्वष्ट्रं पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्ट्य वे पंशूनां मिथुनाना र्रं रूपकृत्। रूपमेव पृश्वं दधाति। अथों रूपरेवेन्मुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाह्य विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाह्य विष्णंवे निभूयपाय स्वाहेत्यांह। यज्ञो वे विष्णंः। यज्ञायेवेन्मुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिमुंत्तमां जुंहोति। प्रत्युत्तं ब्ये स्वत्वायं॥४३॥

युच्छुते पुरुरूपांय स्वाहेत्यांहाष्टौ चं॥———[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रांतः सवनम्। प्रातः सवनादेवैनं गायत्रियाश्छन्दसो-ऽिं निर्मिमीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौऽऽप्नोति। गायत्रीं छन्दः। सवित्रे प्रसवित्र एकांदशकपालं मध्यन्दिन। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभं माध्यं दिन् सवनम्। माध्यं दिनादेवैन सवनात्रिष्टुभश्छन्दसोऽिं निर्मिमीते॥४४॥

अथो मार्ध्यं दिनमेव सर्वनं तेनाँऽऽप्नोति। त्रिष्टुभं छन्दं। सवित्र आंसवित्रे द्वादंशकपालमपराह्ने। द्वादंशाक्षरा जगंती। जागंतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवैनं जगंत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथों तृतीयसवनमेव तेनाँऽऽप्नोति। जगंतीं छन्देः। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः पराँ परावतं गन्तौं। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमंतिः स्वाहेति चतंस्र आहूंतीर्जुहोति॥४५॥

चतंस्रो दिशंः। दिग्भिरेवैनं परिंगृह्णाति। आश्वंत्थो व्रजो भविति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वी रूपं कृत्वा। सो ऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्या श्वत्थत्वम्। यदाश्वत्थो व्रजो भवंति। स्व एवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥ त्रिष्टुभुष्छन्द्सोऽधि निर्मिमीते जुहोति नवं च॥_____[१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रंह्मवर्चसं देधाति। तस्मौत्पुरा ब्रौह्मणो ब्रंह्मवर्चस्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांजन्यं इषव्यंः शूरों महारथो जांयतामित्यांह।

राजुन्यं एव शौर्यं मंहिमानं दधाति। तस्मौत्पुरा राजन्यं

इषव्यंः शूरों महारथोंऽजायत। दोग्ध्रीं धेनुरित्यांह।

धेन्वामेव पयो दधाति। तस्मौत्पुरा दोग्ध्री धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्गानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मांत्पुरा वोढांऽनुङ्वानंजायत। आशुः सिप्तिरत्यांह। अश्वं एव जवं दंधाति। तस्मांत्पुरा-ऽऽशुरश्वोऽजायत। पुरेन्धियोंषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्माध्स्री युंवतिः प्रिया भावंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ ह वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। स्भेयो युवेत्यांह। यो वै पूर्ववयसी। स स्भेयो युवा। तस्माद्युवा पुमान्प्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ हु वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। निकामेनिकामे नः पर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिकामे हु वै तत्रं पर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिकामे हु वै तत्रं पर्जन्यो वर्षित। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। फिलन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फिलन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। योगक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते हु वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते॥४९॥
अनुङ्गानित्यांह जायते वर्षित सुष्ठ चं॥———[१३]

प्रजापंतिर्देवेभ्यों युज्ञान्व्यादिंशत्। स आत्मन्नेश्वमेधमंधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव युज्ञः। यदेश्वमेधः। अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पृतानंन्नहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंन्नहोमां जुहोति॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्यंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्यंन जुहोतिं। अग्निमेव तत्प्रींणाति। मधुंना जुहोति। मृहृत्यै वा एतद्देवतांयै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोति॥५१॥

मह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकेर्जुहोतिं॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रीणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यल्लाजाः। यल्लाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रीणाति। क्रम्बैर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानार्थं रूपम्। यत्क्रम्बाः। यत्क्रम्बैर्जुहोतिं॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रींणाति। धानाभिर्जुहोति। नक्षंत्राणां

वा पृतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिर्जुहोतिं। नक्षेत्राण्येव तत्प्रीणाति। सक्तुंभिर्जुहोति। प्रजापेतेवां पृतद्रूपम्। यथ्सक्तंवः। यथ्सक्तुंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजांपितमेव तत्प्रीणिति। म्सूस्यैंर्जुहोति। सर्वासां वा एतद्देवतांना एतद्देवतांना एतद्देवतांना एतद्देवतां प्रीणिति। प्रियङ्गृतण्डुलैर्जुहोति। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणिति। प्रियङ्गृतण्डुलैर्जुहोति। प्रियङ्गां ह व नामैते। एतैर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यत्प्रियङ्गृतण्डुलैर्जुहोति। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशान्नांनि चिरादृध्स्रस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धे॥५५॥

जुहोति मधुंना जुहोति पृथुंकैर्जुहोति क्रम्बैर्जुहोति सक्तंभिर्जुहोति प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति च्रावारि च (अन्नहोमानाऽऽज्येनाभ्रेर्मधुंना तण्डुलैः पृथुंकैर्लाजैः क्रम्बैर्धानाभिः सक्तंभिर्मसूर्यैः प्रियङ्गुतण्डुलैर्द्शान्नांनि द्वादंश।)॥———[१४]

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। त॰ सृष्ट॰ रक्षा ईस्यजिघा॰सन्। स एतान्प्रजापंतिर्न्क॰ होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा इस्यपाहन्। यन्नंक॰ होमां जुहोतिं। यज्ञादेव

स युज्ञाद्रक्षाङ्स्यपाहन्। यन्नक्तं हामा जुहाता युज्ञाद्व तैर्यजमानो रक्षाङ्स्यपं हन्ति। आज्यंन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षाङ्स्यपं हन्ति॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदंं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त पुवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जंहोति। शरीरवदेवावं रुन्थे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपंहत्यै। आज्यंनान्ततो जुंहोति॥५७॥

प्राणो वा आज्यम्। उभयतं एवास्यं प्राणं दंधाति। पुरस्तां चोपरिष्टाच। एकंस्मे स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। द्वाभ्याः स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रति तिष्ठति। अस्मि इश्वामुष्मि ईश्व। श्वाताय स्वाहेत्यां ह। श्वतायुर्वे पुरुषः शतवीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मै स्वाहेत्यांह। अपंरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

एव युज्ञाद्रक्षा्र्ड्स्यपंहन्त्यन्तुतो जुंहोति शृताय स्वाहेत्यांह सप्त चं॥————[१५] प्रजापंतिं वा एष ईंफ्स्तीत्यांहुः। यौंऽश्वमे्धेन् यजंत्

इति। अथों आहुः। सर्वाणि भूतानीति। एकंस्मै स्वाहेत्यांह।

प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाऽऽप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याः इ

स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

पुक्वदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। शताय स्वाहेत्यांह। शतायुर्वे पुरुषः शतवीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। अयुताय स्वाहां नियुताय स्वाहां प्रयुताय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्थे। अर्बुदाय स्वाहेत्यांह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचंमेवावं रुन्थे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्यांह। यो वै वाचो भूमा। तन्न्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानमवं रुन्थे। समुद्राय स्वाहेत्यांह॥६१॥

स्मुद्रमेवाऽऽप्रोति। मध्याय स्वाहेत्याह। मध्यमेवाऽऽप्रोति। अन्ताय स्वाहेत्याह। अन्तमेवाऽऽप्रोति। प्राधीय स्वाहेत्याह। प्राधमेवाऽऽप्रोति। उषसे स्वाहा व्युष्ट्रो स्वाहेत्याह। रात्रिवी उषाः। अहुर्व्युष्टिः। अहोरात्रे एवावे रुन्थे। अथो अहोरात्रयोरेव प्रति तिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्युंष्ट्रौ स्वाहोंदेष्यते स्वाहोंद्यते स्वाहेत्यनुंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

एकोत्तरं जुंहोति प्रयुतांय स्वाहेत्यांह समुद्राय स्वाहेत्याहाहुर्व्युष्टिः सप्त चं॥——[१६]

विभूमात्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयोनिमधेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्यंद्वावाञ्चंहोति। सर्वमेवैन्मस्कंन्नः सुवर्गं लोकं गंमयति। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेतिं पूर्वहोमाञ्चंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। पृथिव्ये स्वाहा- उन्तरिक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अग्रये स्वाहा सोमाय स्वाहेतिं पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। द्वाहेतिं पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्वं एव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित॥६३॥

पृथिव्यै स्वाहाऽन्तिरक्षाय स्वाहेत्येकिविश्शिनीं दीक्षां जुंहोति। एकिविश्शितवें देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्धाः। भवो देवानां कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋतूनेवास्मै कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तरित्यै॥६४॥

अविङ्यज्ञः सङ्कांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्यै। भूतं भव्यं भिवष्यदिति पर्याप्तीर्जुहोति।

सुवर्गस्य लोकस्य पर्याप्त्यै। आ में गृहा भवन्त्वत्याभूर्जुहोति।

सुवर्गस्यं लोकस्याभूँत्यै। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंभूत्यै। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानिं जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामति॥६५॥

दुद्धः स्वाह्य हर्नूभ्या्ड् स्वाहेत्यंङ्गहोमाञ्जहोति। अङ्गंअङ्गे वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मनस्तेनं मुञ्जति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपैरेवैन्ड् समर्धयित। ओषंधीभ्यः स्वाह्य मूलेंभ्यः स्वाहेत्यंषिधिहोमाञ्जहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेंभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति। मूलेंभ्योऽन्याः। ता पुवोभयी्रवं रुन्थे॥६६॥

वन्स्पतिभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जहोति। आरुण्यस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धै। मेषस्त्वां पचतैरंवृत्वित्यपाँव्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवार्व रुन्धे। कूप्याँभ्यः स्वाहाद्धः स्वाहेत्यपाः होमाँ अहोति। अपसु वा आपः। अत्रं वा आपः। अद्भो वा अत्रं जायते। यदेवाद्योऽत्रं जायते। तदवं रुन्धे॥६७॥

पूर्वेदीक्षा जुंहोति पूर्व पुव द्विपन्तं भातृंव्यमितं कामृत्यनंन्तरित्यै कामिति रुन्धे जायंत् एकं

===

अम्भार्शसे जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्शसे। तस्य वस्वोऽधिपतयः। अग्निज्योतिः। यदम्भार्शसे जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्थे। वसूनार्श्व सायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्थे। नभार्शसे जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्शसे॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभार्शसे जुहोति। अन्तरिक्षमेवावं रुन्थे। रुद्राणार् सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्थे। महार्श्स जुहोति। असौ वै लोको महार्श्स। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥

यन्महा रेसि जुहोति। अमुमेव लोकमवं रुन्धे। आदित्याना र सायुंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्धे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेति युव्यानि जुहोति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। मृयोभूर्वातों अभि वांतूस्ना इतिं गृव्यानिं जुहोति। पृश्नामवंरुद्धै। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहेतिं सन्ततिहोमाञ्जहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तत्यै॥७०॥

स्तितय स्वाहाऽसिताय स्वाहेति प्रमुक्तीर्जुहोति।
सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुक्ती। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरक्षाय
स्वाहेत्याह। यथायजुरेवैतत्। दृत्वते स्वाहाऽद्-तकाय
स्वाहेति शरीरहोमाञ्जेहोति। पितृलोकमेव तैर्यजमानोऽव
रुन्धे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्तिति परिधीन् युनक्ति।
इमे वे लोकाः परिधयः। इमानेवास्मै लोकान् युनक्ति।
सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रे॥७१॥

यः प्राण्तो य आंत्मदा इति महिमानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यजंमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रंह्मवर्चसी जांयतामिति समंस्तानि ब्रह्मवर्चसानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे। जित्र बीजमिति जुहोत्यनंन्तरित्ये। अग्रये समंनमत्पृथिव्ये समंनम्दिति सन्नतिहोमाञ्जंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्ये। भूताय स्वाहां भिवष्यते स्वाहेति भूताभव्यौ होमौ जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। सर्वस्याप्त्रैं। सर्वस्यावरुद्धे। यदऋन्दः प्रथमं जायमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याप्त्रैं। सर्वस्य जित्यैं। सर्वमेव तेनौप्रोति। सर्वं जयति। योऽश्वमेधेन यजंते॥७३॥

य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञ रक्षा ईस्यजिघा रसन्। स पृतान्युजापंतिर्नक्त रहोमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा इस्यपंहन्। यन्नक रहोमां जुहोतिं। यज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षा इस्यपंहन्ति। उषसे स्वाहा व्युष्टे स्वाहेत्यंन्ततो जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टिं॥ ७४॥ व नगरिस पूर्वे ज्योतिः सन्ति समष्टे भूतं यजी नवं च॥———[१८]

पुक्यूपो वैकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपां भवन्ति। पुक्विश्शिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकतूनां यूपां भवन्ति। राज्ञंदाल एकंविश्शत्यरिवरश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्ये। नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्तिं। अवंद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेंजुनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रुक्षुशाखायांमुन्येषां

पशूनामंवद्यन्ति। वेत्सशाखायामश्वस्य। अपसुयोनिर्वा अश्वः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पशून्नियुञ्जन्ति। आरोकेष्वारण्यान्धारयन्ति। पृशूनां व्यावृत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशूल्लँभेन्ते। प्रार्ण्यान्ध्सृंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥ ७६॥

अश्वस्य व्यावृत्त्यै त्रीणि च॥——[१९]

राञ्चंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवावृभितों भवतः। पुण्यंस्य गृन्धस्यावंरुद्धौ। भ्रूणहत्यामेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गन्धेनोभयतः परि

गृह्णाति। षङ्गेल्वा भंवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुद्धै। षद्घांदिराः। तेजसोऽवंरुद्धै॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोमपीथस्यावंरुद्धै। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शितिर्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रिः। शृतं पृशवीं भवन्ति॥७८॥

श्वातायुः पुरुषः श्वतिन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्माँथ्मृत्यात्। दक्षिणृतौंऽन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। उत्तर्तोऽश्वस्येतिं। वारुणो वा अर्थः॥७९॥

पुषा वै वर्रुणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यति। शृतदेवत्यं तेनावं रुन्धे। चितेंऽग्नाविधं वैत्से कटेऽश्वं चिनोति। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवेनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूप्रं चिनोति। पृश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥

प्राणापानावेवास्मिन्थ्सम्यश्ची दधाति। अर्श्वं तूप्रं गोमृगमितिं सर्वहृतं एताञ्चंहोति। एषां लोकानांमभिजित्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मांनमेवेन् सतंनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं छोके भवति। य एवं वेदं। अथो वसोरेव धारां तेनावं रुन्धे। इलुवर्दाय स्वाहां बलिवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वा इलुवर्दः। परिवथ्सरो बंलिवर्दः। संवथ्सरादेव परिवथ्सरादायुरवं रुन्धे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमे ध्याजी जरसां विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥

तेजुसोऽवंरुद्धै भवुन्त्यश्वी गोमृगमिलुवर्दश्चत्वारि च॥————[२०]

पुक् वि शाँ ऽग्निर्भं वित। पुक् वि श्राः स्तो मंः। एकं-विश्वातिर्यूपाः। यथा वा अश्वां वर्षभा वा वृषांणः सङ्स्फुरेरन्ं। पुवमेव तथ्स्तोमाः सङ्स्फुरन्ते। यदेक वि श्वाः। ते यथ्सं मृच्छेरन्ं। हुन्येतास्य युज्ञः। द्वाद्वा पुवाग्निः स्यादित्यां हुः। द्वाद्वाः स्तो मंः॥८२॥

एकांदश् यूपाः। यद्वांदशौंऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशौक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एंकादशः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह एवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशौंऽग्निः स्याँद्वादशः स्तोम् एकांदश् यूपौः। यथा स्थूरिणा यायात्। तादक्तत्। एकविश्श एवाग्निः स्यादित्यांहुः। एकविश्शः स्तोमः। एकविश्शित्यूपौः। यथा प्रष्टिभिर्यातिं। तादगेव तत्॥८४॥

यो वा अंश्वमेधे तिस्रः कुकुभो वेदं। कुकुद्ध राज्ञां भवति। एकुविर्शों ऽग्निर्भवति। एकुविर्शः स्तोमंः। एकंविर्शतिर्यूपाः। एता वा अंश्वमेधे तिस्रः कुकुभंः। य एवं वेदं। कुकुद्ध राज्ञां भवति। यो वा अंश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाणि

वेदं। शिरों हु राज्ञां भवति। एकविश्शांऽग्निर्भवति। एकविश्शः स्तोमंः। एकंविश्शतिर्यूपाः। एतानि वा अश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाणि। य एवं वेदं। शिरों हु राज्ञां भवति॥८५॥

द्वाद्शः स्तोमः स एव तच्छिरों हु राज्ञां भवित षट चं॥————[२१]

देवा वा अंश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यदंश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदंश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञांत्यै। न वै मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्रातोद्रायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमपुरुध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञो-ऽञ्जंसा नयंति। एवमेवैन्मश्वंः सुवर्गं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंमन्वा रंभन्ते। सुवर्गस्यं लोकस्य समध्ये। हिं करोति। सामैवाकंः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥

वडंबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मेध्य इत्याह। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतिरुद्गीथः। उद्गीथमेवावं रुन्थे। अथों ऋख्सामयोरेव प्रतिं तिष्ठति। हिरण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरण्यम्। ज्योतिरेव मुंखतो दंधाति। यर्जमाने च प्रजासुं च। अथो हिर्णयज्योतिरेव यर्जमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥

तथ्स उपार्करोति च्त्वारि च॥———[२२] पुरुषो वै युज्ञः। युज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वे पुशून्नियुञ्जन्ति।

यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंक्के। अश्वं तूपरं गोमृगम्। तानिशिष्ठ आलंभते। सेनामुखमेव तथ्सङ्श्यंति। तस्माद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्रीवं पुरस्तां हुलाटें। पूर्वाग्निमेव तं कुंरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाग्निं पुरस्तौथ्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्चम्। अत्रं वै पूषा। तस्मौत्पूर्वाग्नावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वै रांजन्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्येनैवेनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राजन्यौऽन्नादो भावुंकः। आग्नेयौ कृष्णग्रींवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्मौद्राजुन्यों बाहुबुलीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशसुक्थौ

स्कथ्योः। स्कथ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्माँ द्राज्ञन्यं अरु ब्रिंगि वृद्धे। शितिपृष्ठो बांर्हस्पृत्यो पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमे वोपरिष्टा द्धते। अथां क्वचे एवेते अभितः पर्यूहते। तस्माँ द्राज्ञन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृषोद्रम् धस्ताँ त्। प्रतिष्ठा मे वेतां कुरु ते। अथां इयं वे धाता। अस्यामे व प्रति तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छें। उथ्से धमे व तं कुरु ते। तस्मां दुथ्से धं भये प्रजा अभिस ॥ श्रीयन्ति॥ ९१॥

कुरुते धत्ते कुरुते पर्श्व च॥----[२३]

साङ्ग्रहण्या चतुंष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिर्ने किश्चन सांवित्रमा ब्रह्मंन्प्रजापंतिर्देवैभ्यः प्रजापंती रक्षारंसि प्रजापंतिमीपसित विभूरंश्वनामान्यम्भार्श्स्येकयूपो राज्ञुंदालमेकविर्शो देवाः पुरुषस्त्रयोविरशितः॥२३॥

साङ्गहुण्या तस्मांदश्वमेधयाजी यत्परिमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्मांद्राजुन्यं एकंनवतिः॥९१॥

साङ्ग्रहण्या सङ्श्रंयन्ति॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥नवमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तमाँप्रोत्। तमास्वाऽष्टांद्शिभिरवां-रुन्थ। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। युज्ञमेव तैरास्वा यजंमानो-ऽवं रुन्थे। संवथ्सरस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंशु मासाः पश्चर्तवंः॥१॥

संवथ्सरौंऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। संवथ्सरमेव तैराह्वा यजंमानोऽवं रुन्थे। अग्निष्ठेंऽन्यान्पशूनुंपाकरोतिं। इतरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवन्वालंभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदार्ण्येः सर्थस्थापर्यंत्। व्यवस्थेतां पितापुत्रौ। व्यध्वांनः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ स्यांताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्कंरा अरेण्येष्वाजायेरन्। तदांहुः। अपेशवो वा एते। यदांर्ण्याः। यदांर्ण्येः सर्इस्थापयेत्। क्षिप्रे यजमानमरेण्यं मृतर हरियुः। अरेण्यायतना ह्यांर्ण्याः पृशव इति। यत्पृशून्नालभेत। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। यत्पर्यंग्निकृतानुथ्मृजेत्॥३॥

यज्ञवेशसं कुर्यात्। यत्पशूनालभंते। तेनैव पृशूनवं रुन्धे। यत्पर्यग्निकृतानुथ्मृजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न यंज्ञवेशसम्भविति। न यजमानुमरंण्यं मृतः हंरन्ति। ग्राम्यैः सङ् स्थापयित। एते वै पृशवः क्षेमो नाम। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्वानः क्रामन्ति। समन्तिकं ग्रामयोग्रीमान्तौ भवतः। नक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

ऋतवंः स्यातामुध्सुजेथ्स्यंतुस्त्रीणिं च॥-----[१]

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेतिं। स एतानुभयान्पशूनंपश्यत्। ग्राम्या इश्चांरण्या इश्चं। तानालंभता तैर्वे स उभौ लोकाववां रुन्ध। ग्राम्येरेव पृशुभिरिमं लोकमवां रुन्ध। आर्ण्येरमुम्। यद्ग्राम्यान्पशूनालभेते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरण्यान्॥५॥

अमुं तैः। अनंवरुद्धो वा एतस्यं संवथ्सर इत्यांहुः। य इतइंतश्चातुर्मास्यानिं संवथ्सरं प्रयुङ्क इतिं। एतावान् वै संवथ्सरः। यचांतुर्मास्यानिं। यदेते चांतुर्मास्याः पृशवं आलुभ्यन्तैं। प्रत्यक्षंमेव तैः संवथ्सरं यजमानोऽवं रुन्धे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवथ्सरं प्रयुङ्के। संवथ्सरः सुवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गं तु लोकं नापराभ्रोति। प्रजा वै प्शवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादिशनाः पृशवं आलभ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृश्न् यर्जमानोऽवं रुन्धे। प्रजापंतिर्विराजंमसृजत। सा सृष्टाऽश्वंमेधं प्राविंशत्। तान्दिशिमेरनु प्रायंङ्कः। तामाप्रोत्। तामास्वा दिशिमेरवांरुन्ध। यद्दिशिनं आलभ्यन्तें॥७॥

विराजमेव तैराह्वा यजंमानोऽवं रुन्थे। एकांदश द्शत् आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्ठुप्। त्रेष्टुंभाः पृशवंः। पृश्नेवावं रुन्थे। वैश्वदेवो वा अश्वंः। नानादेवत्याः पृशवो भवन्ति। अश्वंस्य सर्वृत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्माद्धहरूपाः पृशवः समृद्धौ॥८॥ आरुण्यां श्लोको दिशनं आलुभ्यन्ते नानांरूपाः पृशवो हे चं॥———[२]

अस्मै वै लोकायं ग्राम्याः पृशव आलंभ्यन्ते। अमुष्मां आरुण्याः। यद्ग्राम्यान्पशूनालभंते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्थे। यदारुण्यान्। अमुं तैः। उभयान्पशूनालंभते। गाम्या इश्चांरण्या इश्चं। उभयौर्लोकयो रवंरु खै। उभयौन्पशूना-र्लभते॥ ९॥

ग्राम्या इश्वां रुण्या इश्वं। उभयंस्या न्ना द्यावं रुद्धे। उभयाँ न्युश् नालंभते। ग्राम्या इश्वां रुण्या इश्वं। उभयेषां पश् नामवं रुद्धे। त्रयं स्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोका नामास्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मां ध्यत्यात्॥१०॥

अस्मिँ होते। यथ्संमानीभ्यों देवताभ्योऽन्यें उन्ये पृशवं आलभ्यन्तें। अस्मिन्नेव तह्नोके कामान्दधाति। तस्माद्सिँ होके बहुवः कामाः। त्रयाणां त्रयाणाः सह वपा जुहोति। त्र्यावृतो व देवाः। त्र्यावृत इमे लोकाः। एषां लोकानामास्यें। एषां लोकानां क्रस्यें। पर्याग्निकृतानारण्यान्थ्सृंजन्त्यहि रसाये॥११॥

अवंरुद्धा उभयाँन्पृशूनालंभते सुत्यादिहर्श्सायै॥_____[3]

युअन्तिं ब्रुध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रुध्नः। आदित्यमेवास्मैं युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अरुषः। अग्निमेवास्मैं युनक्ति। चरंन्तमित्यांह। वायुर्वे चरन्ं। वायुमेवास्मैं युनक्ति। परितस्थुष् इत्यांह॥१२॥ ड्मे वै लोकाः परितस्थुषंः। इमानेवास्मैं लोकान् यंनक्ति। रोचंन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षंत्राणि वै रोंचना दिवि। नक्षंत्राण्येवास्मैं रोचयति। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामांनेवास्मैं युनक्ति। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्मैं युनक्ति॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्ता एता एवास्में देवतां युनिक्ता। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्ध्रे। केतुं कृण्वन्नंकेतव इति ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवैन् र राज्ञां गमयति। जीमूतंस्येव भवित् प्रतीकमित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजिंत्ये॥१४॥

परा वा एतस्यं यज्ञ एति। यस्यं पृशुरुपाकृतोऽन्यत्र वद्या एति। एतः स्तोतरेतनं पृथा पुन्रश्वमावंतियासि न् इत्याह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं प्रस्तांद्वधात्यावृत्त्ये। यथा व ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यदंस्योपाकृतस्य लोमांनि शीयंन्ते। यद्वालेषु काचानावयंन्ति। लोमांन्येवास्य तथ्सम्भरिन्त॥१५॥ भूर्भुवः सुव्रिति प्राजापृत्याभिरावयिन्त। प्राजापृत्यो वा अश्वः। स्वयेवनं देवत्या समर्धयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावाता। सुव्रिति परिवृक्ती। एषां लोकानांम्भिजित्यै। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिर्ण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिश्चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। सहस्रं भवन्ति। सहस्रंसिम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः क्रांमिन्ति। यौऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण् छन्द्सेति मिहंष्यभ्यंनिक्त। तेजो वा आज्यम्। तेजो गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवं रुन्धे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्द्रसेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियं त्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवं रुन्धे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्रसेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवं रुन्धे। पत्नयो ऽभ्यं अन्ति। श्रिया वा पृतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी(३)ञ्छाची(३)न् यशोममाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहंरन्ति। प्रजामेवान्नादीं कुंवते। एतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्धे प्रजापत् इत्यांह। प्रजायांमेवान्नाद्यं दधते। यदि नावजिघ्रेंत्। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंघ्रापयेत्। अवं हैव जिंघ्रति। आकान्ं वाजी क्रमेरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुमन्नयते। पृषां लोकानांमभिजित्यै। समिद्धो अञ्जन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूप्त्वायं॥१९॥

परित्स्थुष इत्यांहमे एवास्मै युनक्त्यभिजित्यै भरन्त्यश्वम्धो रुन्थे रूपिक्षेत्रति त्रीणि च॥[४]
तेजसा वा एष ब्रह्मवर्चसेन् व्यृद्धते। यौऽश्वम्धेन् यजते।

होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेजंसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समंध्यतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणतआंयतनो वै ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वै ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्मादक्षिणोऽधौं ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तर्तो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्तआयतनो वै होताँ। आग्नेयो वै होताँ। तेजो वा अग्निः। तेज एवास्यौत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरो-ऽर्धस्तेजस्वितंरः। यूपंमभितों वदतः। युजमानदेवत्यो वै यूपंः। यजंमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्च्सेनं च समर्धयतः। किङ् स्विदासीत्पूर्वचित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्वचित्तिः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवं रुन्धे। किङ् स्विंदासीद्वृहद्वय् इत्याह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वमेवावं रुन्धे। किङ् स्विंदासीत्पिशङ्गिलेत्याह। रात्रिर्वे पिशङ्गिला। रात्रिमेवावं रुन्धे। किङ् स्विंदासीत्पिलिप्पिलेत्याह। श्रीवे पिलिप्पिला। अन्नाद्यंमेवावं रुन्धे॥२२॥

कः स्विदेकाकी चंरतीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावं रुन्धे। क उंस्विज्ञायते पुन्रित्यांह। चन्द्रमा वै जांयते पुनंः। आयुरेवावं रुन्धे। किङ् स्विद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। किङ् स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनं महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। पृच्छामिं त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्याह। वेदिवैं परो-ऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं त्वा भुवंनस्य नाभिमित्यांह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत इत्यांह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतः। सोम्पीथमेवावं रुन्धे। पृच्छामिं वाचः पंरमं व्योमेत्याह। ब्रह्म वै वाचः पंरमं व्योम। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्धे॥२४॥

होतां भवति वै वृष्टिः पूर्विचैत्तिरन्नाद्यमेवावं रुन्धे महदित्यांहु सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतंश्चत्वारिं

===

अप् वा एतस्मौत्राणाः क्रांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेति संज्ञप्यमान् आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्राणा अपंक्रामन्ति। अवन्तीः स्थावन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियं त्वाँ प्रियाणांम्। वर्षिष्ठमाप्यांनाम्। निधीनां त्वां निधिपति ह्वामहे वसो ममेत्यांह। अपैवास्मै तद्भुंवते॥२५॥

अथों धुवन्त्येवैनम्। अथो न्यंवास्मैं हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये युज्ञे धुवंनं तुन्वतें। नुवकृत्वः परियन्ति। नव वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपेक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। सुभंगे काम्पीलवासिनीत्यांह। तपं एवैनामुपंनयति। सुवर्गे लोके सम्प्रोर्ण्वाथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवैनौं लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै पृशवो गर्भः। प्रजामेव पृशूनात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यथ्सूचीभिरसिप्थान्कल्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्ये। गायत्री त्रिष्टुङ्गगतीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रज्ता हरिण्यः। अस्य वै लोकस्य रूपमंयस्मय्यः। अन्तरिक्षस्य रज्ताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यः। अवान्तरिद्दशा रज्ताः। ऊर्ध्वा हरिण्यः। दिशं पुवास्मै कल्पयित। कस्त्वौ छाति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि र्सायै॥२९॥

हुवृते क्राम्-त्यूण्र्वाथामित्यांह जगतीत्यांह कल्पयृत्येकं च॥———[६]

अप वा प्तस्माच्छ्री राष्ट्रं क्रांमित। यौंऽश्वमेधेन यजेते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्याह। श्रीवै राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियंमेवास्मै राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयति। वेणुभारिङ्गराविवेत्यांह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मै पर्यूहति। अथाँस्या मध्यंमेधतामित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावं रुन्थे। शीते वातं पुनित्रवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातंः। क्षेमंमेवावं रुन्थे। यद्धंरिणी यवमत्तीत्यांह। विड्वे हंरिणी। राष्ट्रं यवंः। विशं चैवास्मै राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। न पुष्टं पृशु मंन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पश्त्र पुष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदयंजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वेशीपुत्रं नाभिषिश्चन्ते। इयं यका शंकुन्तिकत्यांह। विश्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमंश्वमेधः। विशं चैवास्में राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलमिति सर्पतीत्यांह। तस्माँद्राष्ट्राय विशंः सर्पन्ति। आहंतं गुभे पस इत्यांह। विश्वे गर्भः॥३२॥

राष्ट्रं पर्सः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्ं घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्यांह। इयं वे माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत् इत्यांह। श्रीर्वे वृक्षस्याग्रम्। श्रियंमेवावं रुन्धे॥३३॥ प्रसुंलामीतिं ते पिता गभे मुष्टिमंत स्यदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रं मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विशं घातुंकम्। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये यज्ञेऽपूतं वदंन्ति। दिध्काळणों अकारिष्मितिं सुरिभमतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै सुर्भयः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवात्मानं पवयन्ते॥३४॥ ग्राष्ट्रस्य मध्यं पृष्यंति गर्भं रुन्थे दक्षते च्लारिं च॥—————[७]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुं नाशंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋध्रवदिथ्सः। यो मेतः पुनः सम्भरदितिं। तं देवा अश्वमेधेनैव सम्भरन्। ततो वै त आध्रवन्। योऽश्वमेधेन् यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भरत्यृध्नोतिं। पुरुष्मालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुर्रुषः। विराजमेवार्लभते। अथो अत्रुं वै विराट्। अत्रमेवार्व रुन्धे। अश्वमार्लभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापितमेवार्लभते। अथो श्रीर्वा एकशफम्। श्रियमेवार्व रुन्धे। गामार्लभते॥३६॥

युज्ञो वै गौः। युज्ञमेवार्लभते। अथो अन्नं वै गौः। अन्नमेवार्व

रुन्थे। अजावी आर्लभते भूम्ने। अथो पृष्टिवै भूमा। पृष्टिमेवावे रुन्थे। पर्यम्निकृतं पुरुषं चार्ण्याः श्लोध्सृंजन्त्यहि स्मायै। उमौ वा एतौ पृशू आर्लभ्येते। यश्लांवमो यश्लं पर्मः। तें उस्योभयं यज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिंता अभिह्नंता भवन्ति। नैनं दृङ्क्ष्वंः पृशवों युज्ञे बृद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिंता अभिह्नंता हि स्मिन्ति। यौंऽश्वमे्धेन् यज्ञंते। य उं चैनमे्वं वेदं॥३७॥

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चृतुष्टोमेनं कृतेनायांनामुत्तरेहन्। एकवि १ प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकवि १ शात्प्रंतिष्ठायां ऋतनन्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानि।

लुभुते गामालंभते पर्मों ऽष्टौ चं॥______

पृक्वि शात्प्रतिष्ठायां ऋतूनन्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवेः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिष्ठाये। देवतां अभ्यारोहित। शक्वरयः पृष्ठं भेवन्त्यन्यदेन्यच्छन्देः। अन्यैऽन्ये वा एते पृशव आलेभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अहं एवैष बुलिर्ह्हियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्वारण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इति। गुव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहं नालंभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पशूनवं रुन्धे। प्राजापत्या भंवन्ति। अनंभिजितस्याभिजिंत्यै। सौरीर्नवं श्वेता वशा अंनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्तत एव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्धे। सोमाय स्वराज्ञें ऽनोवाहावंन ड्वाहावितिं द्वन्द्विनंः पशूनालंभते। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पशुभिर्वा एष व्यृध्यते। यौंऽश्वमेधेन यजंते। छगलं कल्मार्षं किकिदीविं विंदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पशूना लंभते। पशुभिरेवात्मान समर्धयति। ऋतुभिर्वा एष व्यृध्यते। यौंऽश्वमेधेन यजते। पिशङ्गास्त्रयो वासन्ता इत्यृंतुपशूनालंभते। ऋतुभिरेवात्मान समर्धियति। आ वा एष पशुभ्यों वृश्यते। यों ऽश्वमेधेन यजंते। पर्यग्निकृता उथ्मृंजन्त्यनाँब्रस्काय॥४०॥

ल्यन्ते ल्यते लाष्ट्रान्यश्नालंभवेऽहो चं॥————[९]
प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे
मंहिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंत्रादोंऽभवत्। यः कामयंत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे
मंहिमानौं गृह्णीत। महानेवात्रादो भंवति। यज्ञमानदेवत्यां
वै वपा। राजां महिमा। यद्वपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति।

समदं दधाति॥४२॥

यजंमानमेव राज्येनोंभ्यतः परिंगृह्णाति। पुरस्तांथ्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टाथ्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा एतेऽश्वं एव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्व्पां मंहिम्नोभ्यतः परियजंति। तानेवोभयांन्त्रीणाति॥४१॥

वृश्वदेवो वा अश्वंः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदं दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्राभ्यां मृण्डूकां जम्भ्यंभिरिति। आज्यंमवदानं कृत्वा प्रंतिसङ्ख्यायमाहुंतीर्जुहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन समर्धयति। न देवताभ्यः

चतुर्दशैतानंनुवाकाञ्चंहोत्यनंन्तरित्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चद्रशम्। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमासशः संवथ्सर औप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तेंऽब्रुवन्नग्नयंः स्विष्टकृतः। अर्श्वस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंत्मुदंहरन्त। ततों देवा अभंवन्॥४३॥ पराऽस्रेराः। यथ्स्विष्टकुद्भो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याऽभिभूत्यै। भवंत्यात्मनाँ। पराँऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृग्कुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशूनन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिरहूयतें। न तत्रं रुद्रः पृशूनभिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्रफनं द्वितीयामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वा एकंशफम्। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृश्नन्तर्दधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहुंतिरहूयतें। न तत्रं रुद्रः पृश्नमिमंन्यते। अयस्मयेन कमण्डलुंना तृतीयाम्। आहुंतिं जुहोत्यायास्यो व प्रजाः। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिरहूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमंन्यते॥४५॥ द्यात्यभवन्मत्रते प्रजा अन्तर्दधाति हे चं ॥——[११]

अश्वस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयं-मभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोति। समेधमेवेनमालंभते। आज्यंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधौंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिरंशतं जुहोति। षद्गिरंशदक्षरा बृह्ती॥४६॥

बृहत्यंर्धयति स्थापयति पश्चं च॥

बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रया समर्धयति। तायद्भूयंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। पृशून्मात्रया व्यर्धयेत्। षद्भिर्शतं जुहोति। षद्भिर्शयक्षरा बृह्ती। बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृशूनेव मात्रया समर्धयति॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वे पुरुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयति। तदांहुः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ(३)न्द्विपदा(३) इति। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीयर् हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौ द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठायपति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। प्रप्रतिष्ठायांश्च्यवेत। द्विपदां अन्ततो जुंहोति प्रतिष्ठित्ये॥४८॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सोंऽस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टि- त्वम्। यथ्संवथ्स्रमिष्टिंभियंजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

ड्यं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा इमां कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्यंतुमर्ह्तीतिं। यथ्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृ-प्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुक्तः परौं परावतं गन्तौः। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्य यत्यै धृत्यैं।॥५०॥

यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते। अश्वमेव तदन्विच्छति। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वस्यैव यत्यै धृत्यैं। तस्मांथ्सायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते। अश्वमेव तदन्विच्छति। तस्माद्दिवां नष्टेष एति। यत्प्रातिरिष्टिभिर्यजंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवेन्मन्विच्छति। अथों अहोरात्राभ्यांमेवास्मै योगक्षेमं केल्पयति॥५१॥

भवन्ति धृत्यां एन्मन्विच्छ्त्येकं च॥

[१३]

अपु वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रं क्रांमित। यौंऽश्वमेधेन यजंते।

ब्राह्मणौ वींणागाथिनौ गायतः। श्रिया वा पृतद्रूपम्। यद्वीणौ। श्रियमेवास्मिन्तद्धंतः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणाँ उस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राँह्मणौ गार्यताम्॥५२॥

प्रभःशंकास्माच्छीः स्यात्। न वै ब्राँह्मणे श्री रंमत् इति। ब्राह्मणाँऽन्यो गायँत्। राजन्याँऽन्यः। ब्रह्म वै ब्राँह्मणः। क्षत्रः राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायंताम्। अपाँस्माद्राष्ट्रं ऋांमेत्॥५३॥

न वै ब्राँह्मणे राष्ट्र रंमत् इति। यदा खलु वै राजां कामयते। अथं ब्राह्मणं जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गांयेत्। नक्त रं राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्षुत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षुत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतं भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इति ब्राह्मणो गायैत्। इष्टापूर्तं वै ब्राँह्मणस्यं॥५४॥

इष्टापूर्तेनैवैन् स समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यमु संङ्गाममंहिन्नितिं राजन्यः। युद्धं वै राजन्यंस्य। युद्धेनैवैन् स समर्धयित। अक्नृप्ता वा एतस्यत्व इत्यांहुः। यौंऽश्वमेधेन् यजंत इतिं। तिस्रोंऽन्यो गायंति तिस्रोंऽन्यः। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवेः। ऋतूनेवास्में कल्पयतः। ताभ्या स् सङ्स्थायांम्। अनोयुक्ते चं शते चं ददाति। शतायुः पुरुषः श्तोन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति॥५५॥

गायेंताङ्कामेद्वाह्यणस्यं कल्पयतश्चत्वारिं च॥———[१४]

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यबोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यबे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाल्लोकादेव मृत्युमवंयजते। नैनं लोकेलोके मृत्युर्विन्दित। यदमुष्मै स्वाहाऽमुष्मै स्वाहेति जुह्वंथ्मश्रक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिंलोके मृत्युः॥५६॥

अश्नया मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं ह्लोके ऽवंयजते। भ्रूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्या ऽथं। कस्मां द्यज्ञे ऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाऽऽहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्रे

भेषुजं केरोति। एता हू वै मुण्डिम औदन्यवः। भ्रूणहृत्याये प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापिं प्रजायां ब्राह्मण हिन्ते। सर्वस्मे तस्मे भेषुजं करोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहंतिं जुहोति। वर्रुणो वै जुम्बकः। अन्तत एव वर्रुणमवयजते। खुलुतेर्विक्रिधस्यं शुक्रस्यं पिङ्गाक्षस्य मूर्धं जुंहोति। एतद्वै वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणेव वर्रुणमवयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोतिं मूर्धं जुंहोति द्वे चं॥———[१५]

वारुणो वा अर्थः। तं देवतंया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोति। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायत्यांह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवेनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमः प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवेनं देवतंया समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावं रुन्धे। अधिपतिर्स्यधिपतिं मा कुर्वधिपतिर्हं प्रजानां भूयासमित्यांह। अधिपतिमेवैन रे समानानां करोति। मां धेहि मिये धेहीत्यांह। आशिषं-मेवैतामा शांस्ते। उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलंब्याय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुहोति। एषां लोकानांम्भिजिंत्यै॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। यौंऽश्वमेधेन् यजंते। आग्नेयमैंन्द्राग्नमाश्विनम्। तान्पशूनालंभते प्रतिष्ठित्यै। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावं रुन्धे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षुत्रमिन्द्रंः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे एवावं रुन्थे। यदाँश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धै। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रति तिष्ठति। अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपाल इति दशंहविष्मिष्टिं निर्वपति। दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इतिं याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥

अधिपतय इत्यांहाभिंजित्या ऐन्द्राग्नो भवंति रुन्ध् एकं च॥———[१६]

यद्यश्वमुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयमुष्टाकंपालं निर्वपेत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमुष्टाकंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवेनं भिषज्यति। यथ्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना् राजाः। याभ्यं पुवैनं विन्दति॥६३॥ ताभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत एवैनं भिषज्यति। एताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो है्व भंवति। पौष्णां चरुं निर्वपेत्। यदिं श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लोण्यंस्य भिषक्। स एवैनं भिषज्यति। अश्लोणो है्व भंवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्विपेत्। यदिं महुती देवतांऽभिमन्येत।
पृतद्देवत्यों वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतंया भिषज्यति।
अगदो हैव भंवति। वैश्वान् द्वादंशकपालं निर्विपेन्मृगाखरे
यदि नाऽऽगच्छैंत्। इयं वा अग्निवैश्वान्रः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां
परिरोधमानयति। आहैव सुत्यमहंगच्छिति। यद्यंधीयात्॥६५॥
अग्नयेऽ५होमुचेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पयंः। वायव्यं
आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वः। अ५हंसा वा एष
गृहीतः। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येतिं। यद५होमुचे

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। सौर्य रेतंः। यथ्सौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवेनु स समर्धयति। यजंमानो वा अश्वः।

निर्वेपंति। अर्हंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अर्थः।

रेतंसा वा एष व्यृध्यते॥६६॥

गर्भेर्वा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधाय प्रोक्षितोऽध्येति। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरवैन ५ स समर्धयति। अथो यस्यैषाऽश्वमेधे प्रायंश्वित्तिः क्रियते। इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥

विन्दत्यश्लोंणो हैव भंवत्यधीयादंध्यते गर्भेरेवैन् स समर्धयति द्वे चं॥———[१७]

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्थ्सङ्स्थिते निर्वपेत्। द्वादशभिवेष्टिंभिर्यजेतेतिं। यदिष्टिंभिर्यजेत। उपनामुंक एनं यज्ञः स्यौत्। पापीयाङ्तु स्यौत्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा रेसि। य ईजानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयुं अतिति। सर्वा वै सङ्स्थिते यज्ञे वागाँ प्यते॥६८॥

साप्ता भंवति यातयाँम्री। ऋरीकृतेव हि भवत्यर्रष्कृता। सा न पुनंः प्रयुज्येत्यांहः। द्वादंशैव ब्रंह्मौदनान्थ्स इस्थिते निर्वपेत्। प्रजापंतिर्वा ओंदनः। यज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं यज्ञो भंवति। न पापीयान्भवति। द्वादंश भवन्ति। द्वादेशमासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रति तिष्ठति॥६९॥

आप्यते संवथ्सर एकं च॥ पुष वै विभूर्नामं युज्ञः। सर्वर् ह वै तत्रं विभु भंवति।

यत्रैतेनं युज्ञेन् यजन्ते। एष वै प्रभूनीमं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रं प्रभु भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यजन्ते। एष वा ऊर्जस्वान्नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्रोर्जस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यजन्ते। एष वै पर्यस्वान्नामं युज्ञः॥७०॥

सर्वर् ह वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं यज्ञेन यजन्ते।

पृष वै विर्धृतो नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र विर्धृतं भवति। युत्रेतेन युज्ञेन यजन्ते। एष वै व्यावृत्तो नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र व्यावृत्तं भवति। युत्रेतेन युज्ञेन यजन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र प्रतिष्ठितं भवति॥७१॥ युत्रेतेन युज्ञेन यजन्ते। एष वै तेज्ञस्वी नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र तेज्ञस्वी नामं युज्ञः। सर्वर् हु वै तत्र तेज्ञस्वि भवति। युत्रेतेन युज्ञेन यजन्ते। एष वै ब्रह्मवर्चसी नामं युज्ञः। आ ह वै तत्र ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी

यत्रेतेन युज्ञेन यजन्ते। एष वे तेज्स्वी नाम युज्ञः। सर्वेश् ह वे तत्रं तेज्स्वि भंवति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वे ब्रह्मवर्च्सी नामं युज्ञः। आ ह वे तत्रं ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जायते। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वा अंतिव्याधी नामं युज्ञः। आ ह वे तत्रं राज्ञन्योंऽतिव्याधी जायते। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वे दीर्घो नामं युज्ञः। दीर्घायुंषो ह वे तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते। एष वे क्रुप्तो नामं युज्ञः। कल्पंते ह वे तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं युज्ञेन यर्जन्ते॥७२॥ पर्यस्वान्नामं युज्ञः प्रतिष्ठितं भवति यत्रैतेनं युज्ञेन यजन्ते षट्वं (एष वै विभूः प्रभूरूर्जस्वान्पर्यस्वान्

विश्रंते व्यावृंतः प्रतिष्ठितस्तेज्ञ्स्वी ब्रह्मवर्चस्यतिव्याधी दीर्घः क्रुप्तो द्वादंशा।।।——[१९]
तार्प्यणाश्वर् संज्ञंपयन्ति। युज्ञो वै तार्प्यम्।
युज्ञेनैवैन्र समर्धयन्ति। यामेन साम्ना प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते।
यम्लोकमेवैनं गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर्थः
संज्ञंपयन्ति। एतद्वै पंशूनार रूपम्। रूपेणैव पशूनवं रुन्थे।

रुक्मो भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वीं भवति। प्रजापंतेरास्यैं। अस्य वे लोकस्यं रूपं तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्मः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकं तार्प्यणाँऽऽप्रोति॥७४॥

हिरण्यकशिपु भंवति। तेज्सोऽवंरुखै॥७३॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिवर्ध हिरण्यकशिपुनां। आदित्य रूक्मेणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुंज्य र सलोकतांमाप्रोति। एतासांमेव देवतांना सायुंज्यम्। सार्थितार्थ समानलोकतांमाप्रोति। योंऽश्वमेधेन यज्ञंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥

अवंरुध्या आप्नोत्यृष्टौ चं॥———[२०]

आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस

आदित्येभ्यः। अमुमांदित्यमश्वई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तैंऽब्रुवन्। यन्नो नैष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्वद् सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माँद्यज्ञे वरो दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्छ्वयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यथ्मद्यो वाजाँन्थ्समजंयत्। तस्माद्वाजी नामं। यदसुंराणां लोकानादंत्त। तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिमुंप्वपंति। योनिमन्तमेवेनमायतंनवन्तं करोति॥७७॥

योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानाम्। यदंकिश्वमेधौ। प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानाम्। यदंकिश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधैंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिं चिनोतिं। तावंकिश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावं रुन्धे। अथों अर्काश्वमेधयोरेव प्रतिं तिष्ठति॥७८॥

नामं करोति सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनश्चत्वारिं च॥————[२१]

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुं भूतं मेधायालंभन्त। तमालभ्योपावसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इतिं। एकं वा एतद्देवानामहंः। यथ्संवथ्सरः। तस्मादश्वः पुरस्तांथ्संवथ्सर आलंभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वः। यथ्सद्यो मेधोऽभंवत्॥७९॥

तस्मादश्वम्धः। वेदुकोऽश्वमाशुं भवति। य एवं वेदं। यद्वै तत्प्रजापतिरालुब्योऽश्वोऽभवत्। तस्मादश्वः प्रजापतेः पशूनामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिंरूपो जायते। य एवं वेदं। सर्वाणि भूतानि सम्भृत्यालंभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। यौऽश्वम्धेन् यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वै तद्देवा एतान्देवतांम्। पृशुं भूतं मेधायालंभन्त। युज्ञमेव। युज्ञेनं युज्ञमयजन्त देवाः। कामप्रं युज्ञमंकुर्वत। तेऽमृतृत्वमंकामयन्त। तेऽमृतृत्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन यजंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यज्ञते काम्प्रेणं। अपुंनर्मारमेव गच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तांत्प्राजापत्यमृष्भं तूपरं बंहरूपमालभते। सर्वेभ्यः कामेभ्यः। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्य जित्यैं। सर्वमेव तेनाँऽऽप्नोति। सर्वं जयति। योँऽश्वमेधेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

यजते। य उ चेनम्व वेद॥८२॥ मेधोऽभंब्द्यजंत एत् वेदं॥—————[२२]

यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यथ्मायं प्रांतर्जुहोति। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्वति। यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य पदेपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंशपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य पृदेपंदे जुहोति। एतदंनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य पृदेपंदे जुह्वति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवंति। यदंग्निहोत्रं जुहोति। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदनुकृति ह स्मृ वै पुरा। अंश्वस्य मेध्यंस्य

विवर्तनेविवर्तने जुह्नति॥८४॥

पदे अग्निहोत्रं जुहोति त्रीणि च॥———[२३]
प्रजापंतिस्तमंष्टादशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युअन्ति तेज्साऽपंप्राणा
अपुश्रीरूष्वां प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमेनं प्रजापंतिरकामयत महान्वैं श्वदेवो वा अश्वोऽश्वंस्य

प्रजापंतिं पितर्ं यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य लोमंनी त्रयोविश्शतिः॥२३॥ प्रजापंतिरस्मिँ ह्लोक उत्तरतः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्प्रातः प्र वा एष एभ्यो

प्रजापंतिस्तं यंज्ञऋतुभिरपश्रीर्ब्राह्मणौ सर्वेषु वारुणो यद्यश्वन्तदांहरेष वै विभूस्तार्प्येणांदित्याः

लोकेभ्यः सर्वरं हु वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चुत्वार्यशींतिः॥८४॥

प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

हरिंः ओम्॥

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः

प्रपाठकः समाप्तः॥

॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नेः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति न्स्ताक्ष्यो अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवाः संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रेवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमृतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्वस्करिंद्या। वाय्वश्वां रिश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः। देवीः पंर्जन्यसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥ अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पारघम्। अपाँघ्रामपं चावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वर्ज्ञं देवीरजीता ॥ भवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥॥॥

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादित्य-मण्डलम्। सर्वेरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादंत्ते। सर्वस्माद्भवंनाद्धि। तस्याः पाकविंशेषेण। स्मृतं काल-विशेषंणम्। नदीव प्रभवात्काचित्। अक्षय्याध्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सोरुः सतीं न निवंति। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवथ्सर् श्रिंताः। अणुशश्च मंहश्श्च। सर्वे समव्यत्रितम्। सतैः सर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः संन्न निवर्तते। अधिसंवथ्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥ अणुभिश्च मंहद्भिश्च। सुमारूढः प्रदृश्यंते। संवथ्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यंते। पुटरों विक्लिधः पिङ्गः। पृतद्वेरुण्लक्षेणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। सहस्रं तत्र नीयंते। एक १ हि शिरो नाना मुखे। कृथ्स्रं तंदतुलक्षंणम्॥६॥

उभयतः सप्तेन्द्रियाणि। जिल्पतं त्वेव दिह्यंते। शुक्रकृष्णे संवंध्सर्स्य। दक्षिणवामंयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्। विष्रं रूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वाहि माया अवंसि स्वधावः। भृद्राते पूषिन्निह रातिरस्त्विति। नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृश्ववंः। नाऽऽदित्यः संवध्सर एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वे संवध्सरस्य प्रियतंमः रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पथ्स्यमानो भ्वति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहरंणं द्यात्॥७॥

साकुआना र सप्तर्थमाहुरेक जम्। षडुं द्यमा ऋषेयो देवजा इतिं। तेषांमिष्टानि विहिंतानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपशः। को नुं मर्या अमिथितः। सखा सखांयमब्रवीत्। जहांको अस्मदीषते। यस्तित्याजं सखिविद्र सखांयम्। न तस्यं वाच्यपि भागो अस्ति। यदी रेश्रणोत्यलक रेश्णोति॥८॥ न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामितिं। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनेनादाभिधावः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृत्गाः। शुक्लकृष्णो च षष्टिंको। साराग्वस्त्रेर्ज्रदेक्षः। वसन्तो वसुंभिः सह। संवथ्सरस्यं सिवतुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू ॥ परिरक्षंतः। एता वाचः प्रंयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। एतदेव विजानीयात्। प्रमाणं कालपंर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तिन्नुबोधंत। शुक्कवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते संह। निजहंन पृथिंवी ॥ सर्वाम्॥१०॥

ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणि वासा १सि। आदित्यानां निबोधंत। संवथ्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिर्दंदता १ सह। अदुःखो दुःखचं क्षुरिव। तद्मां ऽऽपीत इव दश्यंते। शीतेनां व्यथंयन्तिव। रुरुदं क्ष इव दश्यंते। ह्यादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या वै प्रजा भ्रं १श्यन्ते। संवथ्सरात्ता भ्रं १श्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवथ्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

अक्षिदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्नणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधेत। कनकाभानि वासार्सा। अहतांनि निबोधेत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रंदः। एता वाचः प्रंयुज्यन्ते। श्रद्यंत्रोपदृश्यंते॥१२॥ अभिधून्वन्तोऽभिष्नंन्त इव। वातवंन्तो मुरुद्गंणाः। अमृतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैवंस्तिवंणैरिव। विशिखासंः कप्रदिनः। अनुद्धस्य योथस्यंमानस्य। नुद्धस्येव लोहिनी। हेमतश्चक्षंषी विद्यात्। अक्ष्णयोः क्षिपणोरिव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवेलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृंहे। एता वाचः प्रंवदुन्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिरीः। ता अग्निः पवंमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वतपसः। मरुंतः सूर्यत्वचः। शर्म सप्रथा आवृंणे॥१४॥

अतितामाणि वासार्सि। अष्टिवंजिशतिष्ठिं च। विश्वे देवा विप्रहरन्ति। अग्निजिंह्वा असश्चेत। नैव देवों न मृर्त्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्षंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुरार्त्तिः। पृथिव्यामपरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्नेरूपेण। धनुज्यांमिछ्निथ्स्वंयम्। तिदेन्द्रधनुं-रित्यज्यम्। अभ्रवंणेषु चक्षंते। एतदेव शंयोर्बार्हंस्पत्यस्य। एतद्रुंद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्बिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवृग्योऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवृग्येणं युज्ञेन यज्तेत। रुद्रस्य स शिरः प्रतिद्धाति। नैन र् रुद्र आरुको भवति। य एवं वेदं॥१६॥

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिंरः प्रदृश्यंते। नैव रूपं नं वासार्साः। न चक्षुः प्रतिदृश्यंते। अन्योन्यं तु नं हिङ्स्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षंणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयुनं प्रंति। त्वं करोषि न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमपासंतामिति।

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नम्न्ते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्नोति। य एवं वेद। स खलु संवथ्सर एतैः सेनानीभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानिभेवहति। स द्रफ्सः। तस्यैषा भवंति॥१८॥

अवंद्रफ्सो अर्शुमतींमतिष्ठत्। इयानः कृष्णो दशिनिः सहस्रैः। आवर्तिमन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उपस्रुहि तं नृमणामथंद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिंव्यर्शुमंती। तामन्ववंस्थितः संवथ्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यान्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मै दुद्याताम्। यो द्रुद्यति। भ्रश्यते स्वर्गाञ्चोकात्। इत्यृतुमंण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वर संनिर्व्चनाः॥१९॥

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्रङः। स्वर्णरो ज्योतिषिमान् विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंतपुष्कलं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेमिमृति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाज्योतिर्लभृन्ते। तान्थ्सोमः कश्यपादधिनिर्धमित। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्थ्सप्त सूर्यानिति। पश्चकर्णो वाथ्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥

आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेरं गृन्तुम्। अपश्यमहमेथ्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेरुम्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिष्ठितपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातिष्ठितपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिवमनुप्रविष्टाः। तान्न्वेतिं पृथिभिर्दक्षिणावान्। ते अस्मै सर्वे घृतमांतपन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। सप्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता। तेभिः सोमाभी रक्षंण इति। तदंप्याम्नायः। दिग्भ्राज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते श्तर श्तं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्ञिन्थ्सहस्रू सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वादतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनींकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥

केदमभ्रं निविशते। क्वाय र संवथ्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं देव रात्री। क्व मासा ऋतवः श्रिताः। अर्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्तुंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविश्वन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अफ्सु निविश्वन्ते। आपः सूर्ये सुमाहिताः॥२६॥

अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युथ्सूर्ये स्माहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तंरा भूतम्। येनेमे विधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंथ्सस्य वेदंना। इरावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दश्स्ये॥२७॥

व्यंष्टभ्राद्रोदंसी विष्णंवेते। दाधर्थं पृथिवीम्भितों म्यूखैंः। किं तद्विष्णोर्बलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायंणम्। एको युद्धारंयद्देवः। रेजती रोद्सी उंभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराँदीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धारंयद्देवः। यद्विष्णोरेकमुत्तंमम्॥२८॥

अग्नयों वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमाश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः पेरं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा। आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुण्यकृतो जंनाः। ततों मध्यममायन्ति। चतुमंग्निं च सम्प्रति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यमः। त्वं नस्तद्कृह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वैत्थाऽस्तो गृंहान्॥३०॥

कृश्यपदि्रिताः सूर्याः। पापान्निर्प्रन्ति सर्वदा। रोदस्योन्तर्देशेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्वैः। तेऽशरीराः प्रपद्यन्ते। यथाऽपुण्यस्य कर्मणः। अपौण्यपादेकेशासः। तृत्र तेंऽयोनिजा जंनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमांनाः स्वकर्मभिः॥३१॥

आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्तं वास्रवैः। अपैतं मृत्युं जंयित। य पृवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिंथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्थ्सप्त वांस्वाः। रोहंन्ति पूर्व्यां रुहंः॥३२॥

ऋषिंरह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिंथिरिति। कश्यपः पश्यंको भ्वति। यथ्सवं परिपश्यतींति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुरुष्स्य। तस्येषा भवंति। अग्ने नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मञ्जंहराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥

अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नंयांपाश्च। पुङ्किरांधाश्च सप्तमः। विसर्पेवाऽष्टमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिता इति। यथर्त्वेवाग्नेरर्चिर्वर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकांर्चिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका- दशंस्रीक्स्य। प्रभाजमाना व्यंवदाताः॥३४॥

अङ्गारिर्बम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशांनुर्विश्वावंसुः।
मूर्धन्वान्थ्र्सूर्यवृचाः। कृतिरित्येकादश गंन्धर्वगणाः। देवाश्च
महादेवाः। रश्मयश्च देवां गर्गिरः॥३६॥
नैनं गरों हिन्स्ति। य एवं वेद। गौरी मिमाय सिल्लानि
तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी
बभूवृषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमित्रिति। वाचों विशेषणम्।
अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्रमिष्यामः। व्राहवंः
स्वत्पसः॥३७॥
विद्युन्महसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधांश्चेत्येते। ये
चेमेऽशिंमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमिवेर्षन्त।

वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तभिर्वा

तैरुदीरिताः। अमूँ होकानभिवंर्षन्ति। तेषांमेषा भवंति।

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। कपिला

अंतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं

वैद्युतों हिनस्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पाराशर्यः।

य एवं वेद। अथ गन्धर्वगणाः। स्वानभ्राट्।

विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छमिति। न त्वकांम १ हन्ति॥३५॥

समानमेतदुदंकम्॥३८॥

उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पूर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्नय इति। यदक्षरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। महर्षिमस्य गोप्तारम्। जमदंग्निमकुर्वत। जमदंग्निराप्यांयते। छन्दोभिश्चतुरुत्तरेः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नंः प्रदिशो दिशंः। तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

सहस्रवृदियं भूमिः। परं व्योम सहस्रंवृत्। अश्विनां भुज्यूंनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्त्रीपुमम्। शुक्रं वांमन्यद्यंज्तं वांमन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥ विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भद्रा वां पूषणाविह

रातिरंस्तु। वासाँत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौँ। द्यावांभूमी च्रथः स्थ सखायौ। ताविश्वनां रासभाँश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगत र् सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेघे। रियं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूहथुर्नीभिरौत्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिङ्गिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षपस्त्रिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पत्ङ्गेः। समुद्रस्य धन्वंन्नार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैः शतपंद्धिः षडिश्वः। सवितारं वितन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरिश्वेव। सवितारेप्सोऽभवत्। त्य सुतृप्तं विदित्वैव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्थ्सोमंतृपसुषु। स सङ्ग्रामस्तमों द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिंपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवां ऽत्येत्यन्ये। रक्षसांनन्विताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थों अश्विना। ते एते द्युंः पृथिव्योः। अहंरहुर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोंरेतौ वृथ्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोंरेतौ वृथ्मौ। अग्निश्चांदित्यश्चं। रात्रेर्वथ्मः। श्वेत आंदित्यः। अह्योऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती पुव भंवतः। तयोरेतौ वृथ्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती पुव भंवतः। तयोरेतौ वृथ्सौ॥४६॥

उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तौ तावेव प्रतिपद्येत। सेय र रात्रीं गुर्भिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा एतदुल्बणम्। यद्रात्रौं रूश्मयः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्। एवमेतस्यां उल्बणम्। प्रजियष्णुः प्रजया च पश्भिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वृथ्मः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

प्वित्रंवन्तः परिवाज्ञमासंते। पितैषां प्रत्नो अभिरंक्षिति व्रतम्। मृहः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्। प्वित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतः। अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तथ्समांशत। ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सुद्ये ततंक्षुः॥४८॥ ऋषंयः स्प्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षेत्रैः शङ्कृतोऽवसन्। अर्थ सिवतुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहितास उच्चा। नक्तं दर्दश्चे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्यानि वरुणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तथ्संवितुर्वरेण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तथ्मंवितुर्वृणीमहे। व्यं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठ सर्वधातमम्। तुरं भगस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भंविष्यामः। नाम् नामैव नाम मैं॥५०॥

नपुरसंकं पुमार्ङ्स्र्यस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयिष्ट्रे यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्थ्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः स्तीः। ता उमे पुर्स आंहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्यः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानाथ्मंवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमनङ्गुलिरावयत्। अग्रीवः प्रत्यमुश्चत्। तमजिह्वा असश्चंत।

-[88]

ऊर्ध्वमूलमेवाक्छा॒खम्। वृक्षं यो वेद् सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्धध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसित॰ रुदितं गीतम्॥५२॥

वीणांपणवलासितम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृष्युः स्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्चाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतंनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुञ्चत्॥५३॥

सोऽजिंह्वो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगंरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तथ्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमग्ने रथं तिष्ठ। एकांश्वमेक्योजनम्। एकचक्रमेक्धुरम्। वातभ्रांजिगृतिं विभो। नृ रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥

नास्याक्षों यातु सर्जाति। यच्छ्वेतांन् रोहिंताङ्श्चाग्नेः। र्थे युंकाऽधितिष्ठंति। एकया च दशिभश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विर्शित्या च। तिसृभिश्च वहसे त्रिर्शाता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥ आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृषि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

पुवमेतं निंबोधत। आम्-द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। याहि म्यूरेरोमभिः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिंन्न पाशिनः। द्धन्वेव ता इंहि। मा म्-द्रैरिंन्द्र हरिंभिः। यामि म्यूरेरोमभिः। मा मा केचिन्नियेमुरिंन्न पाशिनः। नि्धन्वेव तां (२) इंमि। अण्भिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतैः। कालैर्हरित्वंमापृत्तैः। इन्द्राऽऽयांहि सहस्रंयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवथ्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचरास्त्व। सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योश सुब्रह्मण्योम्। इन्द्राऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितः।

____[१२]

अष्टौदिग्वासंसोऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्तामृरथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खादग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्तः स्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता चं। विश्वरूपेरिहाऽऽगंताम्। रथेनोदकवर्त्मना। अपसुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषों वासार्श्यस च। कालावयवानामितः प्रतीज्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तरिक्षे शब्दं कंरोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्श्यां चक्रे। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदरणमिस। ब्रह्मण उदीरणंमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

[अपंक्रामत गर्भिण्यंः]
अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्ममां महींम्। अहं वेद्
न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। अष्टयोन्यृष्टपुंत्रम्।
अष्टपंदिदम्नतिरक्षम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न
चामृत्युरघाऽऽहंरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मूं
दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं महीमू षु। अदितिद्यौरिदितिर्न्तिरक्षिम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पश्चजनाः। अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदितेः। ये जातास्तन्वः परि। देवां (२) उपप्रैथ्सप्तभिः॥६२॥

पुरा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिभिः पुत्रेरिदंतिः। उपप्रैत्पूर्व्यं युगम्। प्रजायं मृत्यवे तंत्। पुरा मार्ताण्डमाभरदिति। ताननुक्रमिष्यामः। मित्रश्च वर्रुणश्च। धाता चार्यमा च। अश्रशंश्च भगश्च। इन्द्रश्च विवस्वा श्रेश्वेत्येते। हिर्ण्यगर्भो हुस्सः श्रेचिषत्। ब्रह्मजज्ञानं तदित्पदिमिति। गर्भः प्राजापृत्यः। अथु पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥

[यथास्थानं गंर्भिण्यः]

योऽसौ तपत्रुदेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ योंऽस्तमेतिं। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायाऽस्तमेतिं। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायाऽस्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरापूरिष्ठाः। असौ योऽपक्षीयिति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंक्षीयिति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृपत् मोथ्मृंपत॥६५॥

ड्मे मासाँश्चार्धमासाश्चं। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रस्पत् मोथ्संपत। ड्म ऋतवंः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रस्पत् मोथ्संपत। अय संवथ्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोथ्सृप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोथ्संपिति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोर्थ्यंप। इयर रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणैरपंप्रसर्पति चोर्थ्यंपति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृप् मोर्थ्यंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुंनर रीढुम्॥६७॥

> س اه

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुष्स्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीद्वम्॥६८॥

आरोगस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पटरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुंन १ रीढुम्॥६९॥

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्त्रीकृस्य। प्रभ्राजमानाना श्रहाणा स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदाताना श्रहाणा स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युताना श्रहाणा स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजताना श्रहाणा स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणा श्रहाणा स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणा श्रहाणा स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्रयामाना श्रहाणा स्थाने स्वतेजंसा भानि। किपलाना श्रहाणा स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहिताना श्रहाणा स्थाने स्वतेजंसा भानि। अधिलोहिताना स्थाने स्वतेजंसा भानि। अधिलोहिताना स्थाने स्वतेजंसा भानि। स्थाने स्वतेजंसा भानि।

अवपतन्तानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। वैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। प्रभाजमानीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। व्यवदातीनाः रुद्राणीनाः स्थाने स्वतेर्जना भानि। वासुकिवैद्युतीना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। रजताना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। श्यामाना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। किपलाना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। अतिलोहितीना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। अध्वाना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। अवपतन्तीना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युतीना १ रुद्राणीना १ स्थाने स्वते जंसा भानि। अ भूर्भुवः स्वंः। रूपाणि वो मिथुनं मा नो मिथुन १ रिद्वम्॥ ७१॥

अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्विदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपिदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणिदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपिदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरिदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपिदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। पिङ्कराधस उदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। विसर्पिण उपिदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं

-[२०]

मा नो मिथुंन १ रीह्वम्॥७२॥

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपीं न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपीं न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आ यस्मिन्थ्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोंजवसो वः पितृभिंदिक्षिणत उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमां व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपैरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुरन्तिरक्षे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। पुवा ह्यंव। पुवा ह्यंग्ने। पुवा हि वायो। पुवा हीन्द्र। पुवा हि पूषन्। पुवा हि देवाः॥७४॥ आपंमापाम्पः सर्वाः। अस्माद्स्मादितोऽम्तः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिर्द्धया। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः॥७५॥

देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पारघम्। अपाष्ट्रामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्ञं देवीरजीताङ्श्च। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥७६॥

भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृन्भिः। व्यशेम देवहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदिधातु। केतवो अरुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठा र श्तधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सर्रस्वति। मा ते व्योम सन्दिशे॥७७॥

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भंवति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावांन् पशुमान् भंवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चुन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं॥८२॥

योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। पूर्जन्यो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य पुवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं॥८३॥

आयतंनवान् भवति। संवथ्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवथ्सरस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवथ्सरस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। यौऽपसु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

इमे वै लोका अपसु प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रसमुदंयरसत्र्। सूर्ये शुक्रर समाभृतम्। अपार रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपा॰ रसंः। तेंऽमुष्मिन्नादित्ये समाभृंताः। जानुद्व्रीमृत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्व्रम्॥८५॥

पुष्करपर्णैः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्विहायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति।
कस्मौत्प्रणीतेऽयम्ग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्पस् ह्ययं
चीयतें। असौ भुवंनेप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं एता
अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे
चात्रमास्येषुं॥८६॥

अथो आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। एतद्धं स्मृ वा आहुः शण्डिलाः। कमृग्निं चिन्ते। सृत्रियमृग्निं चिन्वानः। स्वथ्सरं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिन्ते। सावित्रमृग्निं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कमृग्निं चिन्ते॥८७॥

नाचिकेतम्भिं चिंन्वानः। प्राणान्प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिंनुते। चातुर्होत्रियम्भिं चिंन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिंनुते। वैश्वसृजम्भिं चिंन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिंनुते। उपानुवाक्यमाशुम्भिं चिंन्वानः॥८८॥ ड्माँ ह्लोकान्प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिनुते। ड्ममांरुणकेतुकम् ग्निं चिन्वान इति। य एवासौ। ड्तश्चाऽमृतंश्चाऽव्यतीपाती। तिमितिं। यों उग्नेर्मिथूया वेदं। मिथुन्वान्नेवति। आपो वा अग्नेर्मिथूयाः। मिथुन्वान्नेवति। य एवं वेदं॥८९॥

[२२]

आपो वा इदमांसन्थ्मिललमेव। स प्रजापंतिरेकः

सृंजेयमितिं। तस्माद्यत्पुरुंषो मनंसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदित। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। कामस्तदग्रे समंवर्ततािधं। मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्॥९०॥
सतो बन्धुमसंति निरंविन्दन्न। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेतिं। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कांमो भवंति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तस्वा। शरीरमधूनुत। तस्य

पुष्करपर्णे सम्भवत्। तस्यान्तर्मनंसि कामः समवर्तत। इदः

ये नखाः। ते वैखानुसाः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तुरुतः कूर्मं भूत १ सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्।

यन्मा १ समासीत्। ततो ५ रुणाः केतवो वातंरशना ऋषंय

उदंतिष्ठन्न्॥९१॥

मम् वैत्वङ्गार्सा। समंभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहिम्हास्मितिं। तत्पुरुंषस्य पुरुष्वत्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्रं समंभूः। त्विमदं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायाऽऽपः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यग्र इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दंक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथांरुणः केतुरुंत्तर्त उपादंधात्। एवाहीन्द्रेति। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथांरुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूषित्रितिं। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इति। ततो देवमनुष्याः पितरंः। गन्धवांपस्रस्श्रोदंतिष्ठन्। सोध्वां दिक्। या विप्रुषों विपरांपतन्न्। ताभ्योऽसुरा रक्षार्रस पिशाचाश्चोदंतिष्ठत्र्। तस्मात्ते परांभवत्र्। विप्रुङ्ग्रो हि ते समंभवत्र्। तदेषाऽभ्यनूँक्ता॥९६॥

आपो ह् यह्नंहृतीर्गर्भमायत्रं। दक्ष्वं दर्धाना जनर्यन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त सर्गाः। अद्भो वा इदश्समंभूत्। तस्मादिदश्सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवतिं। तस्मादिदश्सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवतिं। तस्मादिदश्सर्वश् शिथिलम्वाऽध्रवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वावत्। प्रजापंतिर्वावत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविशत्। तदेवारभ्यन्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंमभि संविवेशेतिं। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवरुद्धं। तदेवानुप्रविशति। य एवं वेदं॥९८॥

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपाः रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यिबुर्वृष्टिः। तान्येवावंरुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पृता वै ब्रह्मवर्चस्या आपंः। मुख्त एव ब्रह्मवर्चसमवंरुन्थे। तस्मान्मुख्तो कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिणत उपंदधाति। एता

ब्रंह्मवर्चिसतंरः॥९९॥

वै तेजस्विनीरापंः। तेजं एवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धस्तेजस्वितंरः। स्थावरा गृंह्णाति। ताः पश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थांवराः। पश्चादेव प्रतिंतिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥ ता उत्तरत उपंदधाति। ओर्जमा वा एता वहन्तीरिवोद्गंतीरिव आक्रजंतीरिव धावंन्तीः। ओजं पुवास्यौत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धं ओजस्वितरः। सम्भार्या गृह्णाति। ता मध्य उपंद्रधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति।

पुल्वल्या गृंह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥ असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतिंतिष्ठति। दिक्ष्पंदधाति। दिक्षु वा आपः। अन्नं वा आपः। अच्छो वा अर्न्न जायते। यदेवाच्छोऽन्नं जायंते। तदवंरुन्धे। तं वा पुतमंरुणाः केतवो वातंरशना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मोदारुणकेतुकः॥१०२॥ तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अरुंणासश्च। ऋषयो वातंरशनाः। प्रतिष्ठा 🔻 शतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसमिति। श्तरांश्चैव सहस्रंशश्च प्रतिंतिष्ठति। य एतमग्निं चिन्ते। य उंचैनमेवं वेद॥१०३॥

जानुद्घीमुंत्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपा॰ संवत्वायं। पुष्करपर्णं रुकां पुरुषमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपर्णम्। सत्य रुकाः। अमृतं पुर्रुषः। एतावद्वा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्तिं॥१०४॥

तदवंरुन्धे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेधमवंरुन्धे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य सम्ष्रो। आपंमापामपः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्रस्करिंद्या इति। वाय्वश्वां रश्मिपतंयः। लोकं पृंणच्छिद्रं पृंण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरमजाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेतिं। पश्चचित्रंय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावानेवाग्निः। तं चिन्ते। लोकं पृंणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादंः। अन्तरिक्षं पादंः। द्यौः पादंः। दिशः पादंः।

प्रोरंजाः पादंः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य एतम्ग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित पृता अबीष्टका उपंदधाति। अग्निहोत्रे देशपूर्णमासयौः। पृशुबन्धे चांतुर्मास्येषुं। अथो आहुः। सर्वेषुं यज्ञऋतुष्विति। अथं ह स्माहारुणः स्वांयम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा पृतेषां वीर्याणि। कम्ग्निं चिनुते॥१०७॥

स्त्रियम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंन्ते। सावित्रम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंन्ते। नाचिकेतम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंन्ते। चातुर्होत्रियम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंन्ते। वैश्वसृजम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंन्ते।

उपानुवाक्यंमाशुम्भि चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। इममारुणकेतुकम्भिं चिंन्वान इतिं। वृषा वा अभिः। वृषांणौ सङ्स्फांलयेत्। हुन्येतांस्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तर्वेद्याङ् ह्यंभिश्चीयतें। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥ प्राजापत्यो वा पृषौंऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावांन् भवति। य एवं वेदं। पृशुकांमश्चिन्वीत। संज्ञानं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव संज्ञानेऽग्निं चिनुते। पृशुमान् भंवति। य एवं वेदं॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिंः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषुजम्। भेषुजमेवास्मैं करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर श्रीक्षेन्वीत। वज्रो वा आपंः॥१११॥

वर्त्रमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहं रित। स्तृणुत एनम्। तेर्जस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्चसकामः स्वर्गकामिश्चन्वीत। एतावृद्वा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवं रुन्थे। तस्यैतद्वृतम्। वर्षित न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृत्स्यानंन्तिरत्यै। नाफ्सु मूत्रंपुरीषं कुंर्यात्। न निष्ठीवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा एषोंऽग्निः। एतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पुंष्करपूर्णानि हिरंण्यं वाऽधितिष्ठेंत्। एतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोद्कस्याघातुंकान्येनंमोद्कानिं भवन्ति। अघातुंका आपंः। य एतम्ग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

२६]

ड्मानुंकं भुंवना सीषधेम। इन्द्रेश्च विश्वें च देवाः। युज्ञं चं नस्तन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रंः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्भिः। अस्माकं भूत्विवता तनूनाम्। आप्नेवस्व प्रप्लेवस्व। आण्डीभेवज् मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखनिधनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरींचयः स्वायम्भुवाः। ये शरीराण्यंकल्पयत्र्। ते ते देहं कंल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिष्ठत् मा स्वप्त। अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंक्रा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्ययोध्या। तस्यारं हिरण्मंयः कोशः। स्वर्गो लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुंरीम्। तस्मैं ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदुः। विभ्राजमाना्र् हरिणीम्। यशसां सम्प्रीवृंताम्। पुरं हिरण्मंयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽप्राजिता। पराङेत्यंज्याम्यी। पराङेत्यंनाश्की। इह चामुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मुन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं ऋियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अशृतांसः शृंतासृश्च॥११७॥

युज्वानो येऽप्यंयुज्वनंः। स्वंर्यन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमुग्निं चं ये विदुः। सिकंता इव संयन्ति। रिश्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्लिभिः। अपंत वीत वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तु-भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारीषु कनीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गिरेषु च ये हुताः। उभयान् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतिमन्नु श्ररदंः॥११९॥ अदो यद्वह्मं विल्बम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायंसाम्। कामप्र्यवंणं मे अस्तु। स ह्यंवास्मि स्नातंनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहाऽऽहिंत॥१२०॥

विशीं णीं गृधंशीर्णीं च। अपेतों निर्ऋति हंथः।

परिबाधः श्वेतकुक्षम्। निजङ्गः शब्लोदंरम्। स् तान् वाच्यायया सह। अग्ने नाश्य सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मन्युं कृत्यां चे दीधिरे। रथेन किश्शुकावंता। अग्ने नाश्येय सन्दर्शः॥१२१॥

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीढुषें। स नी यवसंमिच्छतु। इदं वचः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंर्न्तद्यंयोत। मृयोभूर्वातो विश्वकृष्टयः सन्त्वसमे। सुपिप्पूला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

पुनंमांमैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्भंगः। पुनुर्बाह्मणमैतु मा। पुनुर्द्रविणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतः पृथिवीमस्कान्। यदोषंधीर्प्यसंर्द्यदापः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय

वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म आजांयते पुनः। तेनं मामुमृतं कुरु। तेनं सुप्रजसं कुरु॥१२३॥

-[३०]

अद्यस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोऽधेहि सप्लान्नः। ये अपोऽश्रन्तिं केच्न। त्वाष्ट्रीं मायां वैंश्रवणः। रथर् सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चऋर सहस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बुलिम्। यस्मै भूतानिं बुलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वानं॥१२४॥

असाम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिभृतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुद्रुशने चं ऋौश्चे चं। मैनागे चं महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगम्नता। सुर्हायं नगरं तवं। इति मन्नाः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बिलुर् हरैत्। हिरुण्यनाभये वितुदयें कोबेरायायं बंलिः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नंम इति। अथ बलि हत्वोपंतिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैंश्रवणः। ब्राह्मणां वयु स्मः। नर्मस्ते अस्तु मा मां हि सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रंयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्ये सीदेति। अथ तमग्निंमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुञ्जीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्धान्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्थाः नं सिद्धान्ते। यस्ते विघातुंको भ्राता। ममान्तर्हृंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्।
मिय स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं
वैश्वणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामांय मह्यम्ं।
कामेश्वरो वैश्वणो दंदातु। कुबेरायं वेश्वणायं। महाराजाय
नमंः। केतवो अरुंणासश्च। ऋषयो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः
श्वतथां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा
भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमुडीका सरंस्वति। मा
ते व्योम सन्दिशी॥१२९॥

संवथ्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा भैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्भिरग्निं परि्चरेत्। पुनर्मामैत्त्विन्द्रियमि-त्येतेनऽनुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरद्भिः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

अंसश्चयवान्। अग्नये वायवे सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापृतये। चन्द्रमसे नेक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवंध्सराय। वरुणायारुणायेति व्रंतहोमाः। प्रवृग्यवंदादेशः। अरुणाः काण्डऋषयः। अरण्येऽधीयी्रत्र्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वे जिप्तवा॥१३१॥

महानाम्नीभिरुदक र सं इस्पृश्य। तमाचाँ यो द्द्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीरालुभते। सुमृडीकेति भूमिम्। एवमंपवृगे। धेनुर्दक्षिणा। करसं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा शुक्लम्। यंथाशक्ति वा। एव इस्वाध्यायंधर्मेण। अरण्यंऽधीयीत। तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुंण्यो भवति॥१३२॥

भूद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भूद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवा संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहितं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नेः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

-[8]

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतये नमो विष्णंवे बृह्ते करोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह वै देवानां चासुराणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां वय इं स्वर्गं लोक में ष्यामो वय में ष्याम इति तेऽसुंराः सन्नह्य सहंसैवाचंरन् ब्रह्मचर्यंण तपंसैव देवास्तेऽस्रा अमुह्य इस्ते न प्राजान इस्ते पर्रा ८ भवन्ते न स्वर्ग लोकमायन् प्रसृतेन वै यज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन्न प्रसृतेनासुरान् पराभावयन् प्रसृतो ह वै यंज्ञोपवीतिनों यज्ञोऽप्रंसृतोऽनुंपवीतिनो यत्किं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यजंत एव तत्तरमाँ चज्ञोपवीत्येवाधीयीत याजये चजेत वा यज्ञस्य प्रसृंत्या अजिनं वासों वा दक्षिणत उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धरतेऽवं धत्ते सव्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत १ संवीतं मानुषम्॥१॥

रक्षा रेसि ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमतिष्ठन्त तान

तस्मादुत्तिष्ठन्तु ह वा तानि रक्षा ईस्यादित्यं योधयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानिं ह वा पुतानि रक्षा रेसि गायत्रिया-ऽभिमन्नितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तदुं हु वा एते ब्रह्मवादिनः पूर्वाभिमुखाः सुन्ध्यायां गायत्रियाऽभिमन्निता आपं ऊर्धं विक्षिंपन्ति ता एता आपों वज्रीभूत्वा तानि रक्षा रेसि मुन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रदक्षिणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मानुमवंधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तुं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान्थ्सकलं भुद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मेति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥ यद्वेवा देवहेळेनं देवांसश्चकृमा वयम्। आदिंत्यास्तस्मांन्मा मुश्रतर्तस्यर्तेन मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंत-मूदिम। तस्मान इह मुंश्रत विश्वे देवाः सजोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन त्व र संरस्वति। कृतान्नः पाह्येनंसो यत्किं चानृतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावरुणो सोमो धाता बृहस्पतिः।

ते नों मुश्चन्त्वेनंसो यदन्यकृतमारिम। सजातश एसादुत

प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत तानि वरंमवृणीताऽऽदित्यो

नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति

जांमिश्र्साञ्चायंसः शश्सांदुत वा कनीयसः। अनाधृष्टं देवकृतं यदेन्स्तस्मात् त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमधीवन्द्या ५ शिश्नेर्यदनृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकृम यानि दुष्कृता। येन त्रितो अंर्णवान्निर्बभूव येन सूर्यं तमसो निर्मुमोचं। येनेन्द्रो विश्वा अजंहादरांतीस्तेनाहं ज्योतिषा ज्योतिरानशान आक्षि। यत्कुसींदमप्रतीत्तं मयेह येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्ते दधामि। यन्मियं माता यदां पिपेष यदन्तरिक्षं यदाशसातिं कामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नों अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

यददीं व्यत्रृणमृहं बुभूवादिंथ्सन्वा सञ्जगर् जनेंभ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रंश्च संविदानौ प्रमुंश्चताम्। यद्धस्तांभ्यां चकर् किल्बिषाण्यक्षाणां वृग्नुमुंपजिन्नंमानः। उग्नं पृश्या चं राष्ट्रभृच् तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानि। उग्नं पश्ये राष्ट्रभृत्किल्बिषाण् यदक्षवृत्तमनुंदत्तम्वत्। नेन्नं ऋणानृणव

इथ्संमानो यमस्यं लोके अधिरञ्जुरायं। अवं ते हेळ् उद्त्वमिम् मं वरुण तत्त्वां याम् त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कंसको विकुंसको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूराद्दूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मथ्समृंच्छातै तमंस्मे प्रसुंवामिस। दुःशुर्सानुशुर्साभ्यां घणेनांनुघणेनं च। तेनान्योऽ(१)स्मथ्समृंच्छातै तमंस्मे प्रसुंवामिस। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगंन्मिह् मनंसा सर शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥

आयुंष्टे विश्वतीं दधद्यम्ग्निर्वरेण्यः। पुनस्ते प्राण आयांति परायक्ष्म स्वामि ते। आयुर्दा अंग्ने ह्विषो जुषाणो घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चार् गर्व्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयुंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण सश्शिंशाधि। मातेवास्मा अदिते शर्म यच्छ विश्वं देवा जरंदष्ट्रियंथाऽसंत्। अग्न आयूर्षेष पवस आ सुवोर्ज्निषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनाम्।

अग्ने पर्वस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दर्धद्वयिं मिय पोषम्॥६॥

अग्निर्ऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सपलान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अस्मे दीदिहि सुमना अहेळ्ञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सपलान्प्रत्यजाताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमानो वयः स्याम प्रणुंदा नः सपलान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सपतान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सित। ता इस्त्वं वृत्रहं जिह् वस्वस्मभ्यमाभेर। अग्ने यो नोऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यः। तं वयः समिधं कृत्वा तुभ्यमग्नेऽपि दध्मसि॥७॥

यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात। उषाश्च तस्मैं निम्रुक्ष् सर्वं पाप समूहताम्। यो नंः सपत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्क्तानंग्ने सन्दंह याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। यो अस्मभ्यंमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषंते जनंः। निन्दाद्यो अस्मान्दिफ्साँच सर्वाङ्क्तान्मंष्म्षा कुरु। सर्शितं मे ब्रह्म सर्शितं वीर्या(१)म्बलम्। सर्शितं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मिं पुरोहितः। उदेषां बाहू अतिरमुद्धर्चो अथो बलम्। क्षिणोमि ब्रह्मणाऽमित्रानुन्नयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म् आगात्पुनश्चक्षुः पुनः श्रोत्रं म् आगात्पुनः प्राणः पुनराकूतं म् आगात्पुनश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्। वैश्वानरो मेऽदंब्धस्तनूपा अवंबाधतां दुरितानि विश्वा॥८॥

वैश्वानराय प्रतिवेदयामो यदीनृण संङ्गरो देवतांसु। स पुतान्पाशांन् प्रमुचन् प्रवेंद् स नो मुश्रातु दुरितादवद्यात्। वैश्वानुरः पर्वयात्रः पवित्रैर्यथ्मं ङ्गरमभिधावा म्याशाम्। अनोजानन्मनंसा याचंमानो यदत्रैनो अव तथ्सुंवामि। अमी ये सुभगें दिवि विचृतौ नामु तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्बेद्धकमोर्चनम्। विजिहीर्ष्व लोकान्कृधि बन्धान्मुंश्चासि बद्धंकम्। योनेरिव प्रच्युंतो गर्भः सर्वान् पथो अनुष्व। स प्रंजानन्प्रतिंगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथमजा ऋतस्यं। अस्माभिर्दत्तं जरसंः परस्तादच्छिन्नं तन्तुंमनुसश्चरेम॥९॥

तृतं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्त् येषां दत्तं पित्र्यमायंनवत्। अबुन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छादातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रंभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यद्वां पूर्तं परिविष्टं यदुग्रौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती स रिभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहि श्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्दुरिता यानिं चकुम। भूमिंर्माताऽदिंतिनीं जनित्रं भ्राताऽन्तरिंक्षम्भिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भेवासि जामि मित्वा मा विविध्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदंन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्त्रोणाङ्गेरह्नंताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरं च पुत्रम्। यदन्नमद्यमृतेन देवा दास्यन्नदांस्यनुत वा करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मादनृणं कृणोतु। यदन्रमिद्री बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चे प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मोदनृणं कृणोतु। यन्मयां मनसा वाचा कृत्मेनः कदाचन। सर्वस्मात्तरमान्मेळितो मोग्धि त्वर हि वेत्थे यथात्थम्॥१०॥

वातंरशना ह वा ऋषंयः श्रमणा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभू बुस्तानृषंयो ऽर्थमां यु इस्ते निलायं मचर् इस्ते ऽनुंप्रविशुः कूश्माण्डानि ता इस्तेष्वन्वंविन्दञ्छूद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायंं चरथेति त ऋषींनब्रुवन्नमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धांमि केर्न वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत् येनारेपसं स्यामेति त पुतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळेनं यददींव्यन्नृणमहं बभूवाऽऽयुंष्टे विश्वतों दध्दित्येतैराज्यं जुहुत वैश्वानुराय् प्रतिवेदयाम इत्युपंतिष्ठत यदंर्वाचीनमेनों भ्रूणहत्याया-स्तरमान्मोक्ष्यध्व इति त पृतैरंजुहवुस्तेऽरेपसों-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुह्यात्पूतो देवलोकान्थ्समंश्रुते॥११॥

कूश्माण्डेर्जुहुयाद्योऽपूत इव मन्येत् यथाँ स्तेनो यथाँ भ्रूणहैवमेष भवति योऽयोनौ रेतः सिश्चिति यदंर्वाचीनमेनौं भ्रूणहृत्यायास्तस्मान्मुच्यते यावदेनो

दीक्षामुपैति दीक्षित एतैः संतति जुंहोति संवथ्सरं दींक्षितो भंवति संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवति यो मासः स संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुंर्वि शाति श्राती रात्रींदीक्षितो भंवति चतुंर्वि शातिरर्धमासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रींदीक्षितो भंवति द्वादेश मासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते षड़ात्रींदीक्षितो भंवति षड्वा ऋतवंः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीिक्षेतो भंवति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया एवाऽऽत्मानं पुनीते न मा र समंश्रीयात्र स्त्रियमुपेयात्रोपर्यासीत जुगुंफ्सेतानृंतात्पयौं ब्राह्मणस्यं व्रतं यंवागू राजन्यंस्यामिक्षा वैश्यस्याथीं सौम्येप्यंध्वर एतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्येतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तूं घृतमित्यनुंब्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

अजान् ह् वै पृश्नी ईस्तप्स्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्भ्वंभ्यानंर्ष्त्त ऋषंयोऽभवन्तदधीणामृषित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकामास्त एतं ब्रह्मयज्ञमंपश्यन्तमाहंर्न्तेनांयजन्त यद्द्योऽध्यगीषत् ताः पर्यआहृतयो देवानांमभवन् यद्यजूर्षेषि घृताहुंतयो यथ्सामानि सोमाहृतयो यदर्थवीङ्गिरसो मध्वाहृतयो यद्वाँह्यणानीतिह्यसान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराश्र्रसीर्मेदाहृतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मान्म-पाँघ्रत्रपंहतपाप्मानो देवाः स्वर्गं लोकमायन् ब्रह्मणः सायुंज्यमृषंयोऽगच्छन्॥१३॥

पश्च वा एते मंहायज्ञाः संतति प्रतांयन्ते सतित सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यदग्नौ जुहोत्यपि सुमिधं तद्देवयुज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा क्रोत्यप्यपस्तिपंतृयुज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यो बलि १ हरित् तद्भूतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्ग्रौह्मणेभ्योऽन्नं ददाति तन्मनुष्ययज्ञः सन्तिष्ठते यथ्स्वाध्यायमधीयीतैकामप्यृचं यजुः साम वा तद्भंह्मयज्ञः सन्तिष्ठते यदचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजू ईषि घृतस्यं कूल्या यथ्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवीङ्गिरसो मधौः कूल्या यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराशुर्सीर्मेदंसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यदचोऽधींते पयंआहुतिभिरेव तद्देवा इस्तंपयित यद्यजू ईषि घृताहुंतिभियंथ्सामानि सोमांहुतिभियंदथंवाङ्गिरसो मध्वां-हुतिभिर्यद्वाह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथां नाराशृ रसीर्में दाहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयित त एनं तृप्ता आयुंषा तेजंसा वर्चंसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्यंन च तर्पयन्ति॥१४॥

ब्रह्मयज्ञेनं यक्ष्यमाणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्दर्श उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये देक्षिणत उंपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्दिः पंरिमृज्यं सकृदुंपस्पृश्य शिरश्चक्षुंषी नासिंके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यत्रिराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्दिः पंरिमृजंति तेन यजू रेषि यथ्सकृदुंपस्पृशंति तेन सामांनि यथ्सव्यं पाणिं पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनाथंवाङ्गिरसौं ब्राह्मणानीतिहासान् पुंराणानि कल्पान्गाथां नाराश १ सी: प्रींणाति दर्भांणां महदुंपस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषधीना र रसो यह्रमीः सर्ग्सम्व ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सप्वित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यज्रंश्वयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्पर्ममक्षरं तदेतद्वाऽभ्यंक्तमृचो अक्षरं पर्मे व्योम्न् यस्मिन्देवा अधि विश्वं निषेद्र्यस्तन्न वेद किमृचा कंरिष्यति य इत्तद्विद्सत इमे समांसत् इति त्रीनेव प्रायंङ्कः भूर्भुवः स्वंरित्याहैतद्वै वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थं सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पृच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान संविता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्रोत्यथौं प्रज्ञातंयैव प्रतिपदा छन्दा स्से प्रतिपद्यते॥१५॥

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आँह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंत्रुत व्रजन्तुताऽऽसीन उत शयांनोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य पुवं विद्वान्थ्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमो अस्त्वग्रये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहुते कंरोमि॥१६॥

मध्यन्दिने प्रबलमधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो

यद्ग्राँह्मणस्तस्मात्तर्ह् तेऽक्ष्णिष्ठं तपित् तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनींकं चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्ष्यः सूर्य आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतायते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिणा॥१७॥

[१३]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघो हिवधानं विद्युदग्निर्वर्षः

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघो हिवधिनं विद्युदिग्निर्वर्षः हिवः स्तंनियृत्वंषद्वारो यदंवस्फूर्जिति सोऽनुंवषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जिति पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपो हि स्वाध्याय इत्युत्तमं नाकः रोहत्युत्तमः संमानानां भवित यावंन्तः ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंथ्स्वर्गं लोकं जंयित तावंन्तं लोकं जंयित भूयाः सं चाक्ष्ययं चापं पुनर्मृत्यं जंयित ब्रह्मंणः सायुंज्यं गच्छित॥१८॥

-[88]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽशुचियंद्देशः समृद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्महारात्र उषस्युदिते व्रज्ञ इस्तिष्ठन्नासीनः श्रायानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसई स्वाध्यायमधीते सर्वां लोका अयित सर्वां लोका नेनृणोऽनु-सश्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनृणा अस्मिन्नेनृणाः परंस्मि -स्तृतीयें लोके अंनुणाः स्याम। ये देवयानां उत पिंतुयाणाः सर्वांन्यथो अनृणा आक्षीयमेत्यग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह् तं देवा आहुंतीभिः पाप्मानुमपाँघ्रन्नाहुंतीनां युज्ञेनं युज्ञस्य दक्षिणाभिदिक्षिणानां ब्राह्मणेनं ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्दंसा इ स्वाध्यायेनापहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूँथ्सृजत्यभांगो वाचि भंवत्यभांगो नाके तदेषाऽभ्यंक्ता। यस्तित्याजं सिख्विद् सर्खायं न तस्यं वाच्यपिं भागो अंस्ति। यदी 🕹 शृणोत्यलक 🕹 शृणोति न हि प्रवेद सुकृतस्य पन्थामिति तस्मांथ्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यग्नेर्वायोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अर्वाङ्कत वा पुराणे वेदं विद्वा १ संम्भिती वदन्त्यादित्यमेव ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च हर्समिति यावंतीर्वे देवतास्ताः सर्वा वेदविदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माँद्वाह्मणेभ्यों वेद्विद्धों दिवे दिवे नर्मस्कुर्यान्नाश्चीलं कीर्तयेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिंच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णाति याजयित्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्वित्रः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयित वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२०॥

दुहे हु वा एष छन्दा रेसि यो याजयंति स येनं यज्ञऋतुनां याजयेथ्सोऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानम्प्सद् आसंन र सुत्या वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्धुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्युः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनेन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

कृतिधावंकीणीं प्रविशतिं चतुर्धेत्यांहुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतः प्राणैरिन्द्रं बलेन बृह्स्पतिं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवेतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो ब्रह्मचार्यविकरेदमावास्याया ५ रात्र्यामुग्निं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम् कामाय स्वाहा कामाभिद्रुग्धोऽस्म्यभिद्रुग्धोऽस्मि काम कामांय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंममृतंमेवाऽऽत्मन्धंते हुत्वा प्रयंताञ्ज्विः कर्वातिर्यङ्काग्निम्भिनेत्रयेत सं मांऽऽसिश्चन्तु मरुतः समिन्द्रः सं बृहस्पतिः। सं माऽयमग्निः सिश्चत्वायुंषा च बलेन चाऽऽयुंष्मन्तं करोत मेति प्रति हास्मै मुरुतः प्राणान्दंधित प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहस्पतिं ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितरथ्सर्व सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरिति त्रिरभिमंत्रयेत त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्येत स इत्थं जुंह्यादित्थम्भिमंत्रयेत पुनीत एवाऽऽत्मानमायुरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरेणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वर्रः॥२२॥

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वः प्रपंद्ये भूर्भुवः स्वः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्मकोशं प्रपंद्येऽमृतं प्रपंद्येऽमृतकोशं प्रपंद्ये चतुर्जालं ब्रह्मकोशं यं मृत्युर्नावपश्यति तं प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं

प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणा ८हं तेजंसा कश्यंपस्य यस्मै नमुस्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तंरा हर्नुर्यज्ञोऽधंरा विष्णुर्हृदेय संवथ्सरः प्रजनंनमृश्विनौ पूर्वपादांवित्रिर्मध्यं मित्रावर्रुणावपरपादावग्निः पुच्छ्रस्य प्रथमं काण्डं तत इन्द्रस्ततंः प्रजापंतिरभंयं चतुर्थः स वा एष दिव्यः शांकरः शिशुंमार्स्त १ ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्युं जयित जयित स्वर्गं लोकं नाध्वनि प्रमीयते नाफ्सु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नानुपत्यंः प्रमीयते लुघ्वान्नो भवति ध्रुवस्त्वमंसि ध्रुवस्य क्षिंतमसि त्वं भूतानामधिपतिरसि त्वं भूताना ॥ श्रेष्ठों ऽसि त्वां भूतान्युपं पूर्यावंर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिश्कुमाराय नमं:॥२३॥

नमः प्राच्यै दिशे याश्चं देवतां पृतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणायै दिशे याश्चं देवतां पृतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्यै दिशे याश्चं देवतां पृतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम् उदींच्यै दिशे याश्चं देवतां पृतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंरायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽवान्तरायै दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्म्धि नमो गङ्गायमुनयोर्म्पियश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्म्पिनेभ्यश्च नमः॥२४॥

————————[२०] ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते करोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

चित्तः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं ब्र्हिः। केतो अग्निः। विज्ञांतम्ग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो हृविः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मास्ं नृम्णन्धाथ्स्वाहां॥१॥

अध्वर्यः पश्चं च॥——[१]

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रोंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवृक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजमानाय वार्यम्। आसुवस्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

पृथिकी होता दर्श। ————[२] अग्निर्होता। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुकः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्र सोमाः। वातांपेर्हवनृश्रुतः स्वाहा॥३॥

अभिर्होत्। उद्यो निव्धः वार्तं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरैः। वार्चस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा।

अच्छिंद्रया जुह्नाँ। दिवि देवावृध् होत्रा मेर्यस्व स्वाहाँ॥४॥

महाहंविरहोतां। स्त्यहंविरध्वर्युः। अच्युंतपाजा अग्नीत्। अच्युंतमना उपवक्ता। अनाधृष्यश्चांप्रतिधृष्यश्चं यज्ञस्यांभिग्रौ। अयास्यं उद्ग्ता। वाचस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमंमपात्। मा दैव्यस्तन्तुश्छेदि मा मनुष्यंः। नमों दिवे। नमंः पृथिव्ये स्वाहां॥५॥

वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीं। वातों ऽध्वर्युः। आपोऽभिग्रः। मनों ह्विः। तपंसि जुहोमि। भूर्भ्वः सुवंः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥ वाग्घोता नवं॥______

ब्राह्मण एकंहोता। स युज्ञः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। युज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूर्ता। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। भूर्ता चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। प्रतिष्ठा चे मे भूयात्। अन्तिरक्षं चतुरहोता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां प्रशून्पृष्टिं यर्शः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां पशून्पृष्टिं यर्शः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढोता। स ऋतून्कंल्पयाति। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। ऋतवंश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौर्ष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवंहोता। स तेंज्स्वी। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। तेज्स्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इदः सर्वम्। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥ प्रतिष्ठा प्राणश्चं मे भूयादनाधृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥———[७] अग्निर्यजुंभिः। सविता स्तोमैंः। इन्द्रं उक्थाम्दैः। मित्रावर्रुणावाशिषां। अङ्गिरसो धिष्णियर्ग्निभिः। मुरुतंः सदोहविर्धानाभ्यांम्। आपः प्रोक्षणीभिः। ओषंधयो ब्र्हिषां। अदितिर्वेद्यां। सोमो दीक्षयां॥११॥

त्वष्टेध्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वे देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयां॥१२॥

दीक्षया पात्रैरेकं च॥-----[८]

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतैः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जर्गती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराट्। यज्ञस्यं पृङ्किः। प्रजापंतेरनुंमितः। मित्रस्यं श्रद्धा। स्वितुः प्रसूंतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषीणामरुन्धती। पूर्जन्यस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिद्शाः। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विष्श्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

अनुष्टुरिवशः षद्वं॥——[९]
देवस्यं त्वा सवितुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो

हस्तौभ्यां प्रतिगृह्णामि। राजौ त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्नये हिर्रण्यम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामो दाता॥१५॥

कार्मः प्रतिग्रहीता। कामर्रं समुद्रमाविश। कार्मन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तै। एषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वौङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोर्माय वार्सः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनेवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋत्या अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हुस्तिनम्। गुन्धर्वाफ्स्राभ्यंः स्नगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओद्नम्। स्मुद्रायापंः॥१७॥

उत्तानायाँक्गिर्सायानंः। वैश्वान्राय रथम्। वैश्वान्रः

प्रत्नथा नाकमार्रुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्चनयंञ्चन्तवे धनम्। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजां त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वानराय रथम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। काम समुद्रमा विंश। कामेंन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्तें। पृषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांङ्गीरसः प्रतिगृह्णातु॥१९॥

दाता पुरुषमपंः प्रतिग्रहीत्रे नवं च॥-----[१०]

सुवर्णं घुमं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्यात्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्द्दशंहोतार्मर्णे। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। श्तर शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतांरो यत्रैकं भवंन्ति। समानसीन आत्मा जनानाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनानाः सर्वात्मा। सर्वाः प्रजा यत्रेकं भवंन्ति। चतुंरहोतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति

देवैः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रंमृग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान सिवतारं बृह्स्पतिम्। चतुंर्होतारं प्रदिशोऽनुं क्रुप्तम्। वाचो वीर्यं तपसाऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। त्वष्टांर स्पाणि विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिक्युः। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। देवानां बन्धु निहितं गुहांसु। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निचिक्युः। श्वतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववारः। विश्वमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्यात्मा निहितः पश्चंहोता। अमृतं देवानामायुः प्रजानांम्॥२२॥

इन्द्रभ् राजांनभ् सिवतारंमेतम्। वायोरात्मानं क्वयो निर्चिक्यः। रिष्टमभ् रंश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्भिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याण्डकोशभ शुष्मंमाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोश्भ रजंसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥ अमृतंस्य पूर्णान्ताम् कलां विचंक्षते। पाद् पहुांतुर्न किलांविविथ्से। येन्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षङ्घा मन्सोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढांतारमृतुभिः कल्पंमानम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपांन्ति। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनंसा चरंन्तम्। सहैव सन्तं न विजानन्ति देवाः। इन्द्रंस्यात्मान शत्धा चरंन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रृप्तः। परेण तन्तुं परिष्चियमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना ह हदंयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मेतद्वह्मंण उज्जेभार। अर्क इ श्रोतंन्त सरिरस्य मध्यें। आ यस्मिन्थ्सप्त पेरवः। मेहन्ति बहुला इश्रियम्। बह्वश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अच्युंतां बहुला १ श्रियम्। स हिर्रवस्वित्तंमः। पेरुरिन्द्रांय पिन्वते। बहुश्वामिन्द्र गोमंतीम्। अच्युंतां बहुला १ श्रियम्। मह्मिन्द्रो नियंच्छत्। शृत १ शृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रश्मिरिन्द्रः। प्रमश्हंमाणो बहुला १ श्रियम्। रश्मिरिन्द्रः सिवृता मे नियंच्छतु॥२६॥

घृतं तेजो मध्मदिन्द्रियम्। मय्ययम् ग्निर्दंधातु। हरिः पत्ङ्गः

पंट्री सुंपूर्णः। दिविक्षयो नर्भसा य एति। स न इन्द्रेः कामव्रं देदातु। पश्चारं चक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सरि्रस्य मध्यै। अजंस्रं ज्योतिर्नभंसा सपंदेति। स न इन्द्रेः कामव्रं देदातु। सप्त युंअन्ति रथमेकंचक्रम्॥२७॥

एको अश्वो वहित सप्तनामा। त्रिनाभि च्क्रम्जर्मनंवम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थः। भुद्रं पश्यन्त उपसेदुरग्रैं। तपो दीक्षामृषयः सुवर्विदः। ततः क्षत्रं बलमोर्जश्च जातम्। तदस्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिश्मं बोभुज्यमानम्। अपा नेतारं भुवनस्य गोपाम्। इन्द्रं निचिक्युः पर्मे व्योमन्॥२८॥

रोहिंणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। शत स्महस्राणि प्रयुतानि नाव्यानाम्। अयं यः श्वेतो रिश्मः। परि सर्वमिदं जगत्। प्रजां प्रशून्धनानि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रिश्मः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पृशून् विश्वरूपान्। पृतङ्गमक्तमसुंरस्य माययां॥२९॥

हुदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो विचेक्षते। मरीचीनां पदिमिच्छन्ति वेधसंः। पृतङ्गो वाचं मनंसा बिभर्ति। तां गंन्धवींऽवदद्गर्भे अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपाँन्ति। ये ग्राम्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मासु नियंच्छतम्। प्र प्रं युज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः प्शवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तों बहुधैकंरूपाः। तेषा ५ सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आर्ण्याः पशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। वायुस्ता अग्रे प्रमुंमोक्त देवः। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। इडांये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्द्नगुहां हितम्। य आर्ण्याः पृशवों विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। तेषा ५ सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥

आत्मा जर्नानां विकुर्वन्तं विपृश्चिं प्रजानां वसुधानीं विराज्ञं चरन्तुं गोर्मतीं मे नियंच्छुत्वेकंचऋं

व्योमन्माययां देव एकंरूपा अष्टौ चं॥_____[११]

स्हस्रंशीर्षा पुर्रुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतो वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष पुवेद॰ सर्वम्। यद्भूतं यच् भव्यम्। उतामृत्त्वस्येशांनः। यदन्नेनातिरोहंति। एतावांनस्य महिमा। अतो ज्यायार्श्र्य पूरुंषः॥३२॥

पादौँऽस्य विश्वां भूतानि। त्रिपादंस्यामृतं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः। पादौँऽस्येहाभंवात्पुनः। ततो विष्वृङ्क्ष्रांक्रामत्। साशनान्शने अभि। तस्मौद्धिराङंजायत। विराजो अधि पूरुषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्चाद्भूमिमथो पुरः॥३३॥ यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वसन्तो अस्यासीदाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः। सप्तास्यांसन्परि-धयः। त्रिः सप्त समिधंः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंध्रन्पुरुषं पृशुम्। तं यृज्ञं बर्र्हिष् प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥

तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्यज्ञाथ्सं वृंहुतंः सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेक्रे वायव्यान्। आरुण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्माँ द्यज्ञाथ्सं वृंहुतंः। ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा इसि जज्ञिरे तस्माँ त्। यजुस्तस्मां दजायत॥ ३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोंभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेर्

तस्मौत्। तस्मौज्ञाता अजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौऽस्य मुखंमासीत्। बाहू राजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तर्दस्य यद्वैश्यः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रेश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णो द्यौः समेवर्तत। पुद्धां भूमिदिशः श्रोत्रात्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंस्स्तु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरेः। नामानि कृत्वाऽभिवद्न् यदास्ते। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्ञहारं। शक्तः प्रविद्वान्प्रदिशश्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भविति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते हु नाकं महिमानः सचन्ते। यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥

पूर्रेषः पुरौंऽग्रुतोंऽजायत कृतोंऽकल्पयन्नासं द्वे चं (ज्यायानिधे पूर्रेषः। अन्यत्र पुर्रेषः॥)॥[१२] अन्यः सम्भूतः पृथिव्ये रसाँच। विश्वकर्मणः

समंवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुंषस्य विश्वमाजांनमग्रें। वेदाहमेतं पुरुंषं महान्तम्ं। आदित्यवंण्ं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भंवति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरित गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानित् योनिम्। मरीचीनां प्दिमिच्छिन्ति वेधसः। यो देवेभ्य आतंपित। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रुवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्नवशें। हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्र्यौं। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्ं। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

भूतां सन्भियमांणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तंमेति। तमेव मृत्युम्मृतं तमांहुः। तं भूतारं तम् गोप्तारमाहुः। स भूतो भ्रियमांणो बिभर्ति। य एनं वेदं सत्येन भर्तुम्। सुद्यो जातमुत जहात्येषः। उतो जर्रन्तं न जहात्येकम्॥४१॥

उतो बहूनेकमहंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद् यतं आब्भूवं। सन्धां च या र सन्द्धे ब्रह्मंणैषः। रमंते तस्मिन्नुत जीर्णे शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वांश्चरन्ति जानृतीः। वथ्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्निर हंव्यवाहर् समिन्थ्से। त्वं भूर्ता मांत्रिश्वां प्रजानांम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमंस्ते अस्तु सुहवो म एधि। नमो वामस्तु शृणुत हवं मे। प्राणापानावजिर स्थारंन्तौ। ह्यांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जहितं युवाना। प्राणापानौ संविदानौ जहितम्। अमुष्यासुनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानौ। वधार्यं दत्तं तमहरू हंनामि। असंज्ञजान सृत आबंभूव। यं यं जुजान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। पुरास्यं भारं पुन्रस्तंमेति। तहै त्वं प्राणो अभवः। मृहान्भोगः प्रजापंतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

एकं प्रजानांङ्गसाथां नवं॥——[१४]

हिर् हर्गन्तमनुयन्ति देवाः। विश्वस्येशांनं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सर्रूपमनुमेदमागांत्। अयंनं मा विविधीर्विक्रंमस्व। मा छिदो मृत्यो मा वंधीः। मा मे बलं विवृहो मा प्रमोषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवं॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनः। कामेन मे काम् आगाँत्। हृदंयाद्धृदंयं मृत्योः। यद्मीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाँम्। यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्व्यं मनसा वन्दंमानः। नार्थमानो वृष्मं चर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेकराण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यजे प्रथम्जामृतस्यं॥४६॥

त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि

रोचनम्। उपयामगृंहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते

योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

-[१६] आ प्यायस्व मदिन्तम सोम विश्वांभिरूतिभिः। भवां नः

सप्रथंस्तमः॥४८॥

ईयुष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषसं मर्त्यासः। अस्माभिरू नु प्रतिचक्ष्यांऽभूदो ते यन्ति ये अंपुरीषु पश्यान्॥४९॥

ज्योतिंष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतंं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वंतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां

संयासाय स्वाहो द्यासाय स्वाहो ऽवयासाय स्वाहो शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां ब्रह्महत्यायै स्वाहा सर्वस्मै स्वाहाँ॥५१॥

चित्त संन्तानेनं भवं यक्ना रुद्रन्तनिंम्ना पशुपति ई स्थूलहृदयेनाग्नि १ हृदयेन रुद्रं लोहितेन शर्वं मर्तस्नाभ्यां

महादेवमन्तः पार्श्वेनौषिष्ठहन रेशिङ्गीनिकोश्याभ्याम्॥५२॥

तच्छं योरावृंणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवींः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मत्रकृद्धो मत्रंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतों मत्रुपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतों मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जर्गत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापृती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये स्तयं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पशूनां भूयादुप्स्तरंणमृहं प्रजायै पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मध्रं जनिष्ये मध्रं वक्ष्यामि मध्रं विदष्यामि मध्रंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास १ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मत्रुकृद्धो मत्रंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रुकृतों मत्रुपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रुकृतो मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचमुद्यास शिवामदंस्तां जुर्हां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये स्तयं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पश्नां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजायै पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वार्चमुद्यास १ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायैं पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

युअते मर्न उत युंअते धियः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विपश्चितः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सिवृतः परिष्टुतिः। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अश्विरिस् नारिरिसः। अध्वरकृद्देवेभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु म्रुतः सुदानंवः। इन्द्रं

प्राशूर्भवा सर्चां। प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः। प्र देव्येतु सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधसम्। देवा यज्ञं नयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥३॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इयत्यग्रं आसीः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवीवंग्रीर्स्य भूतस्यं प्रथमजा ऋतावरीः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥४॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजींऽसि। ऋद्यासंम्द्य। म्खस्य शिरंः। म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा असि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंम्द्य। म्खस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला करोतु। मुखस्य शिरोऽसि॥६॥ यज्ञस्यं पदे स्थंः। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टुंभेन

त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मुखस्य रास्नांऽसि। अदितिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्कंन छन्दंसा। सूर्यस्य हरसा श्राय। मखोंऽसि॥७॥

प्ते शिरं ऋतावरीर्ऋखासंमुद्य मुखस्य शिरः शिरः शिरांऽसि नवं च॥——[२] वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रुणस्त्वा धृतव्रंत् आधूंपयतु। मित्रावर्रुणयोर्ध्रुवेण धर्मणा। अर्चिषे त्वा। शोचिषे त्वा।

ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं मंहिना दिवम्। मित्रो बंभूव सुप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणीधृतंः। श्रवो देवस्यं सान्सिम्। द्युम्नं चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यै त्वा। देवस्त्वां सिव्तोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्ग्रिरः। सुबाहुरुत शक्त्याः। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश आ पृंण। उत्तिष्ठ बृहन्भंव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवै त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्ये त्वा। इदमहम्मुमां-मुष्यायणं विशा पृश्वभिष्ठह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रेणं त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणिद्म। त्रेष्टुंभेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणिद्म। जागंतेन त्वा छन्द्साऽऽच्छृंणिद्म। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तु

त्वोर्क्। छृणत्तुं त्वा ह्विः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि ह्विः। देवं पुरश्चर सुग्ध्यासं त्वा॥१०॥

पृथिकां भंव वाख्यद्वं प्रवर्ग्यणं प्रचिरिष्यामः। होतेर्घ्मम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिणौ पुरोडाशावधिश्रय। प्रतिप्रस्थात्रविहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुर्युक्त्र सामिभ्राक्तंखन्त्वा। विश्वैद्वैरनुंमतं मुरुद्भिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियृष्णुम्। स्तुभौ वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचंरत॥११॥

अहंणीयमानो हे चं॥——[४] ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामः। होतेर्घुर्मम्भिष्टुंहि। युमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरसे त्वा। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय

म्खाय त्वा। सूर्यस्य हरसे त्वा। प्राणाय स्वाहा व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहां। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहां। मनंसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्यै स्वाहां। दक्षांय स्वाहा ऋतंवे स्वाहां। ओजंसे स्वाहा बलांय स्वाहां। देवस्त्वां सिवता मध्वांऽनक्तु॥१२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिरसि

तपोऽसि। स॰सीदस्व महा॰ असि। शोचेस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वृपावेन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुमी अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती

दक्षिणतः। इन्द्रस्याधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सिवृत्राधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तरतः॥१४॥ मित्रावरुणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृंतिरुपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षृत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्ने अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परंस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि तें तिष्ठन्तामुजरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां म्रुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥

स्म्मा अंसि। विमा अंसि। उन्मा अंसि। अन्तरिक्षस्यान्तर्धि-

रेसि। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्। आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजािसं। भूयिष्ठभाजो अर्ध ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरंस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्तं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्ज्ञंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रेष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधुं॥१८॥

अनुक्सावीदुत्तः पांहि प्रतिमा असि यज्ञतन्ते अन्यज्ञागंतम्स्येकं चा----[५]
दश् प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं
भास्युदींचीः। दशोध्वां भांसि सुमन्स्यमानः। स नो
रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसुंभिः पुरस्ताँद्रोचयतु
गाय्त्रेण् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। इन्द्रंस्त्वा
रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो
रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्लाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स
मां रुचितो रोचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्वानुष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मंनुष्येषु। सम्राह्मम रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चस्यंसि। रुचितोऽहं मंनुष्येष्वायुष्माइस्तेज्ञस्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगंसि। रुचं मियं धेहि॥२०॥

मियं रुक्। दशं पुरस्ताँद्रोचसे। दशं दिक्षणा। दशं प्रत्यङ्कः। दशोदर्ङ्कः। दशोध्वी भासि सुमन्स्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो घर्मी रुचीय॥२१॥

रोच्य धेहि नवं च॥——[६]

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वींभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। सम्प्रिर्ग्निनां गत। सं देवनं सिवता। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाहा समग्निस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवता। सः

सूर्येणारोचिष्ट। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः। पृथिव्या धूर्ता। उरोर्न्तिरक्षस्य धूर्ता। धूर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनंसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

ऊर्ध्वमिममध्वरं कृधि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवश्रस्त्वं देव धर्म देवान्पांहि। तुपोजां वाचंम्स्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानाम्। पिता मंतीनाम्। पितः प्रजानाम्। मितः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। सः सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं धर्म वर्चोदा असि। पिता नोऽसि पिता नो बोध। आयुर्धास्तेनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। शृतं पूर्भिर्यविष्ठ पाह्यश्हंसः। समेद्धार्श्रं शृतश् हिमाः। तुन्द्राविण्रं हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टींमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विदेय तर्व सन्दर्शि। माऽह र रायस्पोर्षण वि योषम्॥२६॥

रोच्ते सूर्याय त्वा देवायुवं द्रविणोदा दर्धाना द्वे चं॥———[७]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्तौभ्यामादेवे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहिं। अदित एहिं। सर्रस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमिस। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदापय। यस्ते स्तनंः शश्यो यो मयोभूः। येन् विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्रुधा वंसुविद्यः सुदर्त्रः। सरंस्वति तिमेह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिरंष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घुर्मायं शिश्ष। बृह्स्पतिस्त्वोपंसीदत्। दानंवः स्थ् पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहितेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रोंऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमसि। सहोर्जो भागेनोपुमेहिं। इन्द्रांश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घुमं पांत वसवो यर्जता वट्। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्श्मये वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्याँ त्वा परिगृह्णामि॥३०॥

अन्तिरिक्षेण त्वोपयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु र शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हिरसीः। अन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिरसीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिरसीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिरसीः। सुवंरिस सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

एहिं पाहि पिन्वस्व गृह्णाम् नवं च॥_____[८]

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सिल्लायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। उवस्यवें त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिंद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नयें त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहाँ। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहाँ। युमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहाँ। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घूर्मस्यं। मधौः पिबतमिश्वना। स्वाहाऽग्नयं युज्ञियांय। शं यजुंभिः। अश्विना घूर्मं पांतश्हार्दिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिंरूतिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्साताम्। स्वाहेन्द्रांय। स्वाहेन्द्रावट्। घूर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिंरूतिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमर्साताम्। तं प्रार्व्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धंर्मपान्गंच्छ। पितृन्धंर्मपान्गंच्छ॥३५॥

आदित्यवंते स्वाहां हार्दिवानं पृथिव्या अष्टौ चं॥———[९]

ड्रषे पीपिहि। ऊर्जे पीपिहि। ब्रह्मणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अन्धः पीपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वनस्पितंभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्यैष्ठ्यांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा।

द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्माऽसि सुधर्मा में न्यस्मे। ब्रह्माणि धारय। क्षुत्राणिं धारय। विशं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयात्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निर्धं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहाँ। ग्रावंभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहाँ। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहाँ॥३८॥

अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा् क्ष् स्वाहाँ। रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा् क्ष् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाहि। पृषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंमें दाः। वर्चसा माञ्जीः। अपीपरो मा रात्रिया अह्यो मा पाहि॥३९॥

पुषा ते अग्ने स्मित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुतः ह्विः। मधुं ह्विः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवघर्म।

मधुंमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्यः॥४१॥

ब्रह्मवर्चसार्यं पीपिहि स्कृन्दयाँद्रुद्रायं रुद्रहोँत्रे स्वाहाऽह्रों मा पाह्यग्नौ सप्त चं॥——[१०]

घर्म् या ते दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हंविधीनें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरिक्षे शुक्। या त्रेष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्रींधे। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

धर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागते छन्देसि। या वैश्यै। या सदेसि। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य तनुवंः

पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्षत्रस्यं तुनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायै। चक्षुंषस्तुनुवंः

पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। वयमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे।

वृत्गुरंसि शुं युधायाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च विश्वायुः शर्म सप्रथाः। अप द्वेषो अप ह्वरंः। अन्यद्वंतस्य सिश्वम। धर्मेतत्तेऽन्नमेतत्पुरीषम्। तेन् वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वर्धिषीमिहं च व्यम्। आचं प्यासिषीमिहं॥४५॥

रन्तिर्नामांसि दिव्यो गन्धर्वः। तस्यं ते पद्वद्वंविर्धानम्।

अग्निरध्यंक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। सम्हमायुषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥ व्यंसौ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। अचिंऋदद्वृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावा। हिरंण्यपक्षः शकुनो

भुंरण्यः। महान्थ्स्थस्थै ध्रुव आनिषंतः॥४७॥
नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंम्।
आपों ददृश्षीः। तदृतेनाव्यायन्। तद्नववैत्। इन्द्रों रारहाण
आंसाम्। परि सूर्यस्य परिधीश रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नों
गृणातु। दिव्यो गंन्ध्वों रजंसो विमानः। यद्वां घा सत्यमुत
यन्न विद्या ४८॥

धियो हिन्वानो धिय इन्नो अव्यात्। सिम्नेमिवन्द् चरणे नदीनाम्। अपावृणोद्द्रो अश्मेत्रजानाम्। प्रासान्गन्ध्वी अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानाद्हीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपागाः। इदमहं मेनुष्यो मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥

दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यम्स्मभ्यः सनिम्। गायत्रं नवीयाःसम्। अग्ने देवेषु प्रवोचः॥५०॥

याऽऽग्रीं घ्रे तान्तं एतेनावं यजे स्वाहा धर्मणा शं युधांयाः प्यासिषीमहि पोषेण निषंत्तो विद्य

संन्त्<u>व</u>ष्टो॥———[११]

महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि वनस्पतीनामोषंधीना रसंः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्धं मनंः सुवर्गम्॥५१॥

————[१२] अस्कान्द्यौः पृंथिवीम्। अस्कानृषभो युवागाः। स्कन्नेमा

अस्कान्द्याः पृथिवाम्। अस्कानृष्मा युवागाः। स्कन्नमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजीने प्राजीने। आ स्कुन्नाज्ञांयते वृषां। स्कुन्नात् प्रजंनिषीमहि॥५२॥

या पुरस्तांद्विद्युदापंतत्। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। या देक्षिणतः। या पृश्चात्। योत्तंरुतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥

प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहां ऽपानाय स्वाहां। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहां। मनंसे स्वाहां वाचे सरंस्वत्ये स्वाहां॥५४॥

पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरसे स्वाहां। पूष्णे प्रप्तथ्यांय स्वाहां पूष्णे नुरन्धिषाय स्वाहाँ। पूष्णेऽङ्गंणये स्वाहां पूष्णे नुरुणांय स्वाहाँ। पूष्णे सांकेताय स्वाहाँ॥५५॥

-----[१६]

उदंस्य शुष्मौद्भानुर्नात् बिर्मिति। भारं पृथिवी न भूमं। प्र शुक्रैतुं देवी मनीषा। अस्मथ्सुतंष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके महि साममन्वत। तेनु सूर्यमधारयन्। तेनु सूर्यमरोचयन्। घृर्मः शिर्स्तद्यमृग्निः। पुरीषमस् सं प्रियं प्रजयां पृश्भिभ्वत्। प्रजापतिंस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥५६॥

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुंलायिनीः। ये तें अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवत्याऽङ्गिरस्वद्भवा

सींद॥५७॥

अग्निरंसि वैश्वान्तेंऽसि। संवथ्सरोंऽसि परिवथ्सरोंऽसि। इद्वाव्य्यतेंऽसीद्वथ्यतेंऽसि। इद्वथ्यतेंऽसि वथ्यतेंऽसि। तस्यं ते वस्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्ं। श्रारदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्ं। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपुरुपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवथ्यरस्ते कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। पृजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भवः

सींद॥५८॥

चित्रंयो नवं च॥——[१९]

भूर्भृवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वो नंः पाह्यश्हंसः। विधुन्दंद्राणश् समेने बहूनाम्। युवानुश् सन्तंं पितृतो जंगार। देवस्यं पश्य काव्यं मिहृत्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यदृते चिंदिभिश्रेषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सन्धिं मघवां पुरोवसुंः॥५९॥

निष्कंर्ता विह्नुंतं पुनंः। पुनंक्र्जा सह रय्या। मा नों घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधंरं मा रजोऽनैः। मोष्वंस्मा स्तमंस्यन्त्रा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिरहीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नों रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा चावांपृथिवी हींडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परि णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने। त्वमंग्ने अ्यासिं। उद्वयं तमस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। वयः सुपूर्णाः॥६१॥

पूरोवसंरहीडिषातार सुपूर्णाः।——[२०]

भूर्भुवः सुर्वः। मिय् त्यदिन्द्रियं महत्। मिय् दक्षो

मिय् ऋतुः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु

मे। आकैत्या मनमा सह। विराज्या ज्योतिषा सह।

मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजंसा सह। क्षत्रेण यशंसा सह। सत्येन तपंसा सह। तस्य दोहंमशीमहि। तस्यं सुम्नमंशीमहि। तस्यं भूक्षमंशीमहि। तस्यं त इन्द्रंण पीतस्य मधुंमतः। उपंहतस्योपंहतो भक्षयामि॥६२॥

यशंसा सह षद्वं॥————[२१]

यास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। क्षुच् तृष्णां च। अस्रुक्वानांहुतिश्च। अशन्या चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। ताभिर्मुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः॥६३॥

स्निक् स्नीहितिश्च स्निहितिश्च। उष्णा चं शीता चं। उग्रा चं भीमा चं। सदाम्नी सेदिरिनेरा। एतास्ते अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥६४॥ धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयः श्चा निक्रिम्पश्चं विक्रिम्पश्चं विक्षिपः॥६५॥

उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयईश्च। सहसहाइश्च सहमानश्च सहस्वाइश्च सहीयाइश्च। एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

———[२५] अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु।

जुहारात्र त्यादारपतान्। जुषुनासास्त्यादा जपन्तु। मासास्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवंस्त्वा पचन्तु। संवृथ्स्ररस्त्वां हन्त्वसौ॥६७॥

खट फट् जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः क्रुराणि॥६८॥

विगा इंन्द्र विचरंन्थ्स्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र

पशुमन्तिमिच्छ। वज्रेणामुं बोधय दुर्विदत्रम्। स्वपन्तामन्द्र

प्रहेर भोजनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवेदस्व। मृत्यो मृत्युना संवेदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। स्कृत्ते अग्ने नमंः। द्विस्ते नमंः। त्रिस्ते नमंः। चतुस्ते नमंः। पृश्चकृत्वंस्ते नमंः। दशकृत्वंस्ते नमंः। शृतकृत्वंस्ते नमंः। आसहस्रकृत्वंस्ते नमंः। अपरिमितकृत्वंस्ते नमंः। नमंस्ते अस्तु मा मो हिश्सीः॥६९॥

असृन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्विधांवसि।

गृध्रं सुपूर्णः कुणपं निषेवसे। यमस्यं दूतः श्रितो भ्वस्यं चोभयौः॥७०॥

यदेतहृंकसो भूत्वा। वाग्देंव्यभिरायंसि। हिषन्तं मेऽभिराय। तं मृत्यो मृत्यवे नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छतु॥७१॥

यदींषितो यदि वा स्वकामी। भ्येडंको वदिति वाचमेताम्। तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानौ। शिवामस्मभ्यं

कृणुतं गृहेषुं॥७२॥

दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणुतो वंदः। यदि दक्षिणुतो वदाँद्विषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥

इत्थादुलूंक आपंत्रत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्षंसां दूत आगंतः। तमितो नांशयाग्ने॥७४॥

यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वार्चं वृदसिं। द्विषतीं नः परांवद। तान्मृंत्यो मृत्यवे नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छंन्तु। अग्निनाऽग्निः संवंदताम्॥७५॥

_____[३४] प्रसार्य सुक्थ्यौ पतंसि। सुव्यमक्षि निपेपि च। मेहकंस्य चुनामंमत्॥७६॥

अत्रिणा त्वा क्रिमे हन्मि। कण्वेन जमदंग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् राजाः। अप्येषाः स्थपतिरहतः। अथो माताऽथो पिता। अथौ स्थूरा अथौ क्षुद्राः। अथों कृष्णा अथौं श्वेताः। अथों आ्शातिंका ह्ताः। श्वेताभिः सह सर्वे हताः॥७७॥

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तथ्मत्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फणम्रसिं॥७८॥

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपथेन शपामि। घोरेणे त्वा भृगूणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारया विद्धामि। अधरो मत्पंद्यस्वासौ॥७९॥

अधस्य त्वा धारया विद्धाामा अधरा मत्पद्यस्वासा॥७९॥
————[३८]
उत्तुंद शिमिजावरि। तल्पेंजे तल्प उत्तुंद। गिरी॰ रनु

प्रवेशय। मरीची्रुप सन्नुद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितोऽमुं नांशय। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः॥८०॥

 नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यों वायि निधाय्यों वायि निधाय्यों वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीं:॥८१॥

पृथिवी समित्। तामग्निः समिन्धे। साऽग्नि समिन्धे। तामह १ समिन्थे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन समिन्ताङ् स्वाहाँ। अन्तरिक्षः समित्॥८२॥

तां वायुः समिन्धे। सा वायु र समिन्धे। तामह र समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन समिन्ता ए स्वाहाँ। द्यौः समित्। तामांदित्यः समिन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिनंन्धे। तामह सिनंन्धे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन समिन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में स्मिदंसि सपबृक्षयंणी। भ्रातृव्यहा में ऽसि स्वाहाँ। अग्नै व्रतपते व्रतं चरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत आदित्य व्रतपते।

ब्रुतानां व्रतपते ब्रुतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्यौः समित्। तामांदित्यः समिन्धे। साऽऽदित्यः समिन्धे। तामहः समिन्धे। सा मा समिद्धा। आयुंषा तेर्जसा॥८५॥

वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन सिनंन्ता क्ष् स्वाहाँ। अन्तरिक्ष समित्। तां वायुः सिनंन्धे। सा वायु स सिन्धे। तामह सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेर्जसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिनंता क्र्याहाँ। पृथिवी समित्। ताम् ग्निः सिनंन्थे। साऽग्निः सिनंन्थे। ताम् हः सिनंन्थे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्येन सिमंन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदिसि सपत्नक्षयंणी। भ्रातृ व्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते उग्ने व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि॥८८॥

स्मिथ्सिमें-धे ब्रुतं चंरिष्याम्यायुंषा तेजंसा वर्चंसा श्रिया यशंसा ब्रह्मवर्चसेनाृष्टौ चं॥•[४१]

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः। अहांनिशं भवन्तु नः श॰ रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्युंच्छतु शमांदित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि। इडांयै वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंश्छिथ्स्मह्यवास्तुः स भूयाद्यौंऽस्मान्द्वेष्टि यं चे वयं द्विष्मः। प्रतिष्ठासिं प्रतिष्ठावंन्तो भूयासम् मा प्रतिष्ठायाँ शिख्यसमह्मप्रतिष्ठः स भूयाद्यौऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषुजं वि वांत वाहि यद्रपंः। त्व १ हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौं वातु आ सिन्धोरा पंरावतः॥८९॥ दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वातु यद्रपंः। यद्दो वांतते गृहें ऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषुजम्। ततों नो मह आवंह वात आवांतु भेषजम्। शम्भूर्मयोभूर्नो हृदे प्र णु आयू ५ेषि तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्थः। सह यन्मे अस्ति तेनं। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्भुवः

सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनौतां देवतां प्रपद्येऽश्मोनमाखणं

प्रपंद्ये प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंद्ये। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः पर्वताश्च यया वातः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणापानौ मृत्योमा पातं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मियं मेधां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मियं भाजों दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तुभिः परिपातम्स्मानिरष्टेभिरिश्वना सौभंगेभिः। तत्रो मित्रो वर्रुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कयां निश्चित्र आ भुंवदूती सदावृधः सखां। कया शिचेष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मर्रहेष्ठो मध्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वसुं। अभी षुणः सखीनामिवता जरितृणाम्। शृतं भवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेव बुद्धान्॥९१॥

शं नों देवीर्भिष्टंय आपों भवन्तु पीतयें। शुं योर्भिस्रंवन्तु नः। ईशाना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मैं भूयासुर्यौऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रस्स्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्वतीरिव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपों जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुचर् शमयत्। अन्तरिक्षर शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्त श्र्च र् शमयत्। द्योः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच ५ शमयतु। पृथिवी शान्तिंरन्तरिंक्ष्य शान्तिद्यौः शान्तिर्दिशः शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिवायुः शान्तिरादित्यः शान्तिंश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षंत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषंधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिं ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिर्मे अस्तु शान्तिः। तयाह शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिंश्च तपों मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा माु श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चैतानिं मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता । अनु। तचक्षुंर्देविहेतं पुरस्तांच्छुऋमुचरंत्। पश्यंम श्रारदः शतं जीवेम शरदेः शतं नन्दाम शरदेः शतं मोदाम शरदेः शतं भवीम शरदेः शत श्रुणवीम शरदेः शतं प्रब्रंवाम श्ररदेः श्तमजीताः स्याम श्ररदेः श्तं ज्योक्र सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाहिभ्राजंमानः सरि्रस्य मध्याथ्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मणश्चोतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवपंनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन महदन्तरिक्षं दिवं दाधार पृथिवी सदेवां यदहं वेद तदहं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविंशता समीची भूतस्य भव्यस्यावंरुध्यै सर्वमायुंरयाणि सर्वमायुंरयाणि। आभिर्गीर्भिर्यदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावादिष्म तन्नो मा हांसीत्। ॐ शान्तिः शान्तिः

शान्तिः॥९३॥

पुरावतो दधातु बुद्धां जिन्वंथ दृशे सप्त चं॥_____[४२]

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपतिभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतो मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतो मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचमुद्यास शिवामदस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जर्गत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं वंदिष्ये तस्मां अहमिदम्पस्तरंणम्पंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पशूनां भूयादुप्स्तरंणमृहं प्रजायै पशूनां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातुं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टुं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वार्चमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं नस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै स्त्रमांसत। ऋद्धिंपरिमितं यशंस्कामाः। तेंंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां नस्तथ्सहासदितिं। तेषां कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्ड्वो देक्षिणार्ध आंसीत्। तूर्प्रमृत्तरार्धः। परीणज्ञंघनार्धः। मुरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशं आर्च्छत्। तत्र्यंकामयत। तेनापात्रामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुंध्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। सृव्याद्धनुरजायत। दक्षिणादिषंवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। युज्ञजन्मा हि॥२॥

तमेक्॰ सन्तम्ं। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्व-नम्ं। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृष्णुवन्ति। सोंऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपांकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मयाका वे नामैते॥३॥

तथ्सम्याकांनाः समयाकृत्वम्। तस्माँद्दीक्षितेनांपिगृह्यं समेत्वयम्। तेजंसो धृत्यैं। स धनुः प्रतिष्कभ्यांतिष्ठत्। ता

उंपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं व इम र रंन्थयाम। यत्र क्वं च खनांम। तद्पोंऽभितृंणदामेतिं। तस्मांदुपदीका यत्र क्वं च खनंन्ति। तदपोंऽभितृंन्दन्ति॥४॥

वारेवृत् ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धर्नुर्विप्रवंमाण् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत्प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धर्मस्यं धर्मृत्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदितिं। तन्मंहावीरस्यं महावीरत्वम्॥५॥

यदस्याः समभेरन्। तथ्सम्राज्ञेः सम्राद्वम्। तङ् स्तृतं देवतां स्त्रोधा व्यंगृह्णत्। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सर्वनम्। विश्वेंदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीर्ष्णा यज्ञेन् यजमानाः। नाशिषोऽवार्रुन्थतः। न सुंवर्गं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजौ वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंब्रूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यांमेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णा यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो- ऽरुंन्थत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणित्ति। यज्ञस्यैव तच्छिरः प्रतिदधाति। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजमानः। अवाशिषों रुन्थे। अभि सुंवर्गं लोकं जयित। तस्मादेष आश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

उत्करो होते एं-दन्ति महावीर्त्वमंब्रवन्नजयन्थ्यस चं॥———[१]
सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः
प्रश्वः। पृश्ननेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशः। दिक्ष्वंव प्रतिंतिष्ठति।
छन्दा ऐसि देवेभ्योऽपाँकामन्। न वोऽभागानि ह्व्यं
वंक्ष्याम् इति। तेभ्यं पृतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै
याज्यांयै॥८॥

देवतांयै वषद्गारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा ईस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानि देवेभ्यों हृव्यं वंहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। हृविर्वै दीक्षितः। यज्जंहुयात्। हृविष्कृंतं यजंमानमुग्नौ प्रदेध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुरुन्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न ह्विष्कृतं यजमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यज्ञपुरुरुन्तरेति। गायुत्री छन्दा इंस्यत्यंमन्यत। तस्यै वषद्भारौं ऽभ्यय्य शिरौं ऽच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परांपतत्। पृथिवीमुर्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरों ऽभवत्। यः पृशून्। सों ऽजाम्। यत्खांदिर्यभिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेन यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। ऊर्जेव यज्ञस्य शिरः सम्भंरति। यद्वेणवी। तेजो वै वेणुं:॥११॥

तेजंसैव यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्थे। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्व इत्यभ्रिमादंते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्याह यत्यै। वर्ज्ञ इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस नारिर्सीत्याह शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्यांह। युज्ञो वा अध्वरः। युज्ञकृद्देवेभ्य इति वावैतदांह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मणेव युज्ञस्य शिरोऽच्छैंति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्यैव युज्ञस्य शिरोऽच्छैंति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। युज्ञो वै सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किराधस्मित्यांह॥१३॥ पाङ्गो हि युज्ञः। देवा युज्ञं नंयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञिनयः कुरुते। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो युज्ञस्य शिरः सम्भंरित। ऋद्यासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। युज्ञो वै मुखः। ऋद्यासंमुद्य युज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीष्णं इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरः सम्भरित। तूष्णीं चंतुर्थः हरित। अपिरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। मृत्खनादग्रे हरित। तस्मान्मृत्खनः करुण्यंतरः। इयत्यग्रं आसीरित्यांह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भरित। ऊर्जं वा एतः रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥

यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्थे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्र्ष्ट् ह्यंतत्पृंथिव्याः। यद्वल्मीकः। अवंधिरो भवति। य पृवं वेदं। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र प्राक्रंमत॥१६॥ तन्नाद्धियत। स पूंतीकस्तम्बे प्रांक्रमत। सौंऽद्धियत। सौंऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवन्ति। यज्ञायैवोतिं दंधति। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसः पशून्प्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भरित। यद्ग्राम्याणां पश्नां चर्मणा सम्भरेत्। ग्राम्यान्पश्र्ञ्जुचाऽर्पयेत्। कृष्णाजिनेन सम्भरित। आर्ण्यानेव पश्र्ञ्जुचार्पयित। तस्माध्समावंत्पश्नां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः पृशवः कनीया सः। शुचा ह्यृंताः। लोमतः सम्भरित। अतो ह्यस्य मेध्यम्। परिगृह्या यन्ति। रक्षंसामपंहत्ये। बहवो हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्ये। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेजं एवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह। ब्रह्मणैवास्मिन्तेजों दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कृपालैंः स॰सृजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपंयेत्। अर्मकृपालैः स॰सृजति। एतानि वा अनुपजीवनीयानिं। तान्येव शुचार्पयित। शर्कराभिः सश्मृंजित् धृत्यैं। अथो शन्त्वाये। अजलोमेः सश्मृंजिति। एषा वा अग्नेः प्रिया तृन्ः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा सश्मृंजिति। अथो तेजंसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः सश्मृंजिति। युज्ञो वै कृष्णाजिनम्। युज्ञेनैव युज्ञश् सश्मृंजिति॥२०॥

परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्नभि प्राण्यात्। यत्कुर्वन्नभि प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचार्पयेत्। अपहाय प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रंवर्ग्यं चादित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्त्राय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेणुना करोति। तेजो वै वेणुंः। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयति। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वै मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रवर्ग्यः॥२२॥

तस्मदिवमाह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्याह। यज्ञस्य ह्येते पदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्यांह। छन्दोंभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्ये। छन्दोंभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रेसि। वीर्येणैवैनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृंत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सिम्मंतम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सिम्मंतम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सिम्मंतम्। इयं तं करोति। पुतावद्वै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावं रुद्धै। पृरिग्रीवं कंरोति धृत्यै। सूर्यं स्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरे वैतत्। अश्वश्वकेनं धूपयित। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दा रंसि निष्पत्॥२५॥

छन्दोभिरेवेनं धूपयित। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं प्वास्मिन्दधाति। वारुणोऽभीद्धं। मैत्रियोपैति शान्त्यं। सिद्धे त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिवतोद्धंपत्वित्यांह। सिवितृप्रंसूत एवेनं ब्रह्मंणा देवतांभिरुद्धंपित। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश आपृणेत्यांह॥२६॥ तस्मांदिग्नः सर्वा दिशोऽनु विभाति। उत्तिष्ठ

बृहर्भवोध्वस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषौं उन्धो भवितोः। यः प्रव्ययम्नवीक्षंते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषा उन्वीक्ष इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवें त्वा साधवें त्वा सुक्षित्यै त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। इयं वा ऋजः। अन्तरिक्ष साध्। असौ सुक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिः। इमानेवास्मैं लोकान्कंल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्ये। इदमहम्मुमामुष्यायणं विशा पृश्विर्म्भवर्चसेन् पर्यूहामीत्यांह। विशेवनं पृश्विर्म्भवर्चसेन् पर्यूहति। विशेविर्मे पर्यूहति। विशेविर्मे पर्यूहति। विशेविर्मे पर्यूहति। पृश्विरिति वैश्यंस्य। पृश्विर्मेरेवैनं पर्यूहति। असुर्यं पात्रमनांच्छृण्णम्॥२८॥ आच्छृंणत्ति। देवत्राकंः। अजक्षीरेणाऽऽच्छृंणत्ति। परमं

आर्च्छृणित्ति। देवत्राकः। अज्ञक्षीरेणाऽऽच्छृणित्ति। प्रमं वा पृतत्पयः। यदंजक्षीरम्। प्रमेणैवैनं पयसाऽऽच्छृणित्ति। यज्ञुषा व्यावृत्त्ये। छन्दोभिराच्छृणित्ति। छन्दोभिर्वा एष क्रियते। छन्दोभिरेव छन्दाङ्स्याच्छृणित्ति। छन्धि वाच्मित्याह। वाचंमेवावंरुन्धे। छुन्ध्यूर्ज्मित्याह। ऊर्जमेवावंरुन्धे। छुन्धि ह्विरित्याह। ह्विरेवाकः। देवं पुरश्चर सुघ्यासन्त्वेत्याह। यथायजुरेवैतत्॥२९॥ स्याद्यत्रंवर्ग्यश्छन्दोभिः करोति वीर्यसम्मितं छन्दार्शसे निष्यत्पृणेत्यांह सुक्षितिरनाँच्छृण्णञ्छन्दार्स्या-

च्छृंणत्यृष्टौ चं॥_____[३]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतेर्घमम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्ह् बृह्स्पतिः। यद्व्रह्मा। तस्मां एव प्रंतिप्रोच्य प्रचेरति। आत्मनोऽनांत्ये। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन् समंध्यति। मदन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपंहत्ये। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्ये। त्रिष्टुभंः सतीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। सन्तंतमन्वांह। प्राणानांमन्नाद्यंस्य सन्तंत्ये। अथो रक्षंसामपंहत्ये। यत्परिंमिता अनुब्रूयात्। परिंमित्मवंरुन्धीत। अपंरिमिता अन्वांह। अपंरिमित्स्यावंरुद्धे। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं॥३२॥

यत्प्रवर्ग्यः। ऊर्ङ्गुआः। यन्मौुओ वेदो भवंति।

ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः समेर्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजमाने दधाति। सप्त जुंहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सविता मध्वाऽनिक्कित्यांह॥३३॥

तेजंसैवैनंमनिक्त। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपाँ-स्यति। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रवर्ग्यः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपाँस्यति। देवतांस्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अप्रतिशीणांग्रं भवति। एतद्वर्रहिर्ह्येषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेजं पुवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं देधाति। स॰सीदस्व महा॰ असीत्यांह। महान् ह्येषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। एते वाव त ऋत्विजंः। ये देर्शपूर्णमासयौंः। अथं कथा होता यजंमानायाऽऽशिषो नाशौस्त इति। पुरस्तादाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपिरष्टादाशीर्न्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजूङ्ष्याहं। शीर्षत एव यज्ञस्य यजंमान आशिषोऽवंरुन्धे। आर्युः पुरस्तांदाह। प्रजां देक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रंमुत्तर्तः। विधृंतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्में समीचों दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिंपुत्रेतीमाम्भिमृंशति। इयं वै मनोरश्वा भूरिंपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुंन्मादाय। सूपसदां मे भूया मा मां हि रसीरित्याहाहि रंसायै। चितः स्थ परिचित इत्याह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रवर्ग्यः। तस्यं मुरुतों रुश्मयंः॥३७॥ स्वाहां मरुद्भिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्य १ रश्मिभः पर्यूहति। तस्मांदसावांदित्यों उमुष्मिं ह्लोके रश्मिभः पर्यूढः। तस्माद्राजां विशा पर्यूढः। तस्माद्भामणीः संजातेः पर्यूढः। अुग्नेः सृष्टस्यं युतः। विकंङ्कत्ं भा आँच्छित्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवंन्ति। भा पुवावंरुन्धे। द्वादंश भवन्ति॥३८॥

द्वार्दश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावंरुन्धे। अस्ति त्रयोदशो मास् इत्याहः। यत्रयोदशः परिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोदशं मासमवंरुन्धे। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिरसीत्यांह व्यावृंत्यै। दिवं तपंसस्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमिधे निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथों आभ्यामेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। अर्हंन् बिभर्षि सायंकानि धन्वेत्यांह॥३९॥

स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रेष्टुंभमसि जागंतम्सीतिं ध्वित्राण्यादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनान्यादंत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यजमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घुर्मस्यं प्रियां तनुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भंवति। एष ह् वा अस्य प्रियां तनुवमाक्रांमति। यित्रिः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता १ ह् वा अस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां उभवत्। तस्मात्रिः प्रीत्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रृष्ट्यैं। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वेंव प्रतितिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य सम्प्रिः। सर्वतों धून्वन्ति। तस्मांद्यः सर्वतंः

पवते॥४२॥

अग्निश्च वसुंभिः पुरस्ताँद्रोचयत् गायत्रेण् छन्द्सेत्यांह। अग्निर्वेवनं वसुंभिः पुरस्ताँद्रोचयति गायत्रेण् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दंसत्यांह। इन्द्रं एवैन र् रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयत् त्रेष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। वरुणस्त्वाऽऽदित्यैः पश्चाद्रोचयत् जागंतेन् छन्दंसत्यांह। वरुण एवैनंमादित्यैः पश्चाद्रोचयति जागंतेन छन्दंसा॥४३॥

स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिंरुत्तर्तो रोंचयत्वानुंष्टुभेन् छन्दसेत्यांह। द्युतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिंरुत्तर्तो रोंचयत्यानुंष्टुभेन् छन्दसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामाशाँस्ते। बृहुस्पतिंस्त्वा विश्वैद्वैरुपरिंष्टा-द्रोचयत् पाङ्केन् छन्दसेत्यांह। बृहुस्पतिंरेवैनं विश्वैद्वै-

रुपरिष्टाद्रोचयित पाङ्केन छन्दंसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शास्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्याह। रोचितो ह्यंष देवेषुं। रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्याह। रोचंत एवैष मंनुष्येषु। सम्राह्मर् रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्ते जस्वी ब्रह्मवर्चस्यंसीत्यांह। रुचितो ह्यंष देवेष्वायुंष्मा इस्तेजस्वी ब्रह्मवर्चसी। रुचितों ऽहं मंनुष्येष्वायुष्मा इस्ते जस्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासमित्याह। रुचित एवैष मंनुष्येष्वायुष्माङ्स्तेजस्वी ब्रंह्मवर्चसी भंवति। रुगंसि रुचं मिये धेहि मिय रुगित्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। तं यदेतैर्यजुंर्भिररोंचयित्वा। रुचितो धर्म इतिं प्रब्रूयात्। अरोचुकोऽध्वर्युः स्यात्। अरोचुको यर्जमानः। अथ यदेनमेतैर्यजुंभी रोचयित्वा। रुचितो घर्म इति प्राहं। रोचुंकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजंमानः॥४५॥

पृश्चाद्रोंचयित जागंतेन छन्दंसा पाङ्केन छन्दंसा स मां रुचितो रोंच्येत्यांहाशिषंमेवैतामाशाँस्ते

शास्तेऽष्टौ चं॥_____[५]

शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रवग्र्यः। ग्रीवा उपसदः। पुरस्तांदुपसदां प्रवग्र्यं प्रवृणिक्ति। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। त्रिः प्रवृंणक्ति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं पुव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिक्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। चतुंविंश्शितः सम्पंद्यन्ते। चतुंविंश्शितर्धमासाः। अर्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एकश् हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। पृतावान् वै यज्ञः। यावांनग्निष्टोमः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिदधाति। नोक्थ्ये प्रवृंज्यात्। प्रजा वै पृशवं उक्थानि। यदुक्थ्ये प्रवृज्यात्। प्रजां पृशूनंस्य निर्दहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्ठे प्रवृंणिक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अच्युंतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अच्युंतं च्यावयित्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायितं। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिपद्यमान्मित्यांह॥४९॥ न ह्यंष निपद्यंते। आ च पर्रा च पृथिभिश्चरंन्त्रमित्यांह। आ च ह्यंष पर्रा च पृथिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसान इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वींभ्यां मधु माध्वींभ्यां मियां मधु माध्वींभ्यां मित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। सम्ग्रिर्ग्निनां गृतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मांवेवास्मां ऋतू केल्पयति। समृग्निर्ग्निनां गृतेत्यांह। अग्निर्ह्यंवैषोंऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा समृग्निस्तपंसा गृतेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। धूर्ता दिवो विभासि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारदावेवास्मां ऋतू कंल्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां यच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ ह्योकान्थ्सन्दं-धाति। विश्वासां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। देवश्रस्त्वं देव धर्म देवान्याहीत्यांह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। तृपोजां वाचंमस्मे नियंच्छ देवायुवमित्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवावंरुन्धे॥५२॥ गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्यंष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयंः। तासांमेष एव पिता। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमांह। पितः प्रजानामित्यांह। पितहींष प्रजानांम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

मित्रह्यंष कंवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवता यंतिष्ट सर् सूर्यणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रविग्यं च सर्शांस्ति। आयुर्दास्त्वम्स्मर्भ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। पिता नोऽसि पिता नो बोधेत्यांह। बोधयंत्येवैनम्। न वै तेऽवकाशा भवन्ति। पित्रिये दश्मः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यजमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। यज्ञस्य शिरोंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति॥५५॥

रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजाना १ सृष्ट्रौं। रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वै पर्जन्यों वर्षति। वर्षुंकः पूर्जन्यों भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवेंक्षन्ते। रुचितं वै ब्रह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चसिनों भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवेंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिर्स्कृत्य यर्जुर्वाचयित। प्रजांयते। नास्यैं प्रजां निर्दहित। त्वष्टींमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥

ऋतवो हि शिर्ः सर्वपृष्ठे प्रवृंण्क्यनिंपद्यमान्मित्यांह गृतेत्यांह शार्दावेवास्मां ऋतू कंल्पयित रुन्धे कवीनामित्यांह प्राणाः प्रतिंदधाति भवन्ति वाचयित चृत्वारिं च॥———[ξ]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रंस्व इति रश्नामादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आद्देऽदित्यै रास्नाऽसीत्यांह यजुंष्कृत्यै। इड एह्यदित एहि सरंस्वत्येहीत्यांह। एतानि वा अंस्यै देवनामानि। देवनामेरेवैनामाह्वंयित। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अंस्यै मनुष्यनामानि॥५८॥

म्नुष्यनामेरेवैनामाह्वयिति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षङ्घा ऋतवंः।

ऋतुभिरेवेनामाह्वयिति। अदित्या उष्णीषंमसीत्यांह। यथायजुरेवेतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वे वथ्सः। पूषा त्वोपावंसृजुत्वित्यांह। पौष्णा वे देवत्या पृशवंः॥५९॥

स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजित। अश्विभ्यां प्रदांपयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। यस्ते स्तनः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्मः शिर्षोस्रं घर्मं पाहि घर्मायं शिर्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। ताहगेव तत्। बृहुस्पितस्त्वोपं सीदित्वत्याह॥६०॥

दहीति। ताहग्व तत्। बृह्स्पतिस्त्वीप सीदित्वत्याह॥६०॥ ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणेवैनामुपंसीदित। दानंवः स्थ पेरंव इत्यांह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्वुग्वृतो लोहितेनेत्यांह व्यावृत्त्ये। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरंस्वत्ये पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रमेव भाग्धेयेन समर्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥ तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोऽसि

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्टभाक्तंमः। गायत्रोंऽसि त्रैष्टंभोऽसि जागंतम्सीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभि-रेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वाभ्यां वर्षद्भियाता इति। इन्द्राश्विना मधुनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वाभ्यां वर्षद्भरोति। अथों अश्विनांवेव भागधेयेन समर्धयति॥६२॥

घुमं पात वसवो यजंता विहत्यांह। वसूनेव भागधेयेन समर्धयित। यद्वंषद्भुर्यात्। यातयांमाऽस्य वषद्भारः स्यांत्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षार्थसे यज्ञर हंन्युः। विहत्यांह। प्रोक्षंमेव वषद्भरोति। नास्यं यातयांमा वषद्भारो भवंति। न यज्ञर रक्षार्थसे प्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्ष्मयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अस्य पुण्यां र्ष्मिः। स वृष्टिवनिः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं ह्विर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। सूर्यस्य तपंस्त्पेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवेनं परिगृह्णाति॥६४॥ अन्तरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तरिक्षेणैवैनमुपंयच्छति।

न वा एतं मनुष्यों भर्तुमर्हति। देवानां त्वा पितृणामनुमतो

भर्तु १ शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरन्ंमत् आदंत्ते। वि वा एनमेतदर्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्वंति। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरन्तिरक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै॥६५॥

सुवंरिम् सुवंर्मे यच्छु दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रतिदधाति। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। पश्चांह॥६६॥

पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिदधाति। अग्नये त्वा वसुमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आदित्यों ऽग्निर्वसुं-मान्। तस्मां पुवैनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमों रुद्रवान्। तस्मां पुवैनं जुहोति। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अपसु वै वर्रुण आदित्यवान्। तस्मां पृवैनं जुहोति। बृहुस्पतंये त्वा विश्वदैव्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै

स्वाहेत्यांह पितृमानेंति चुत्वारिं च॥=

देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनं जुहोति। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवृथ्सरो वै संवितर्भुमान् विभुमान्प्रंभुमान् वाजंवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। युमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै युमोऽङ्गिरस्वान्यितृमान्॥६८॥

तस्मां एवेनं जुहोति। एताभ्यं एवेनं देवताभयो जुहोति। दश सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। रौहिणाभ्यां वै देवाः सुंवुर्गं लोकमांयन्। तद्रौहिणयों रौहिणत्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजंमानः सुवर्गं लोकमेति। अहर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिज्यीतिषा स्वाहा रात्रिज्यीतिः केतुनां जुषता सुज्योतिज्योतिंषा इंस्वाहेत्यांह। आदित्य-मेव तदमुष्मिँ होके ऽह्नां परस्तौद्दाधार। रात्रिया अवस्तौत्। तस्मादसावांदित्यों ऽमुष्मिँ होकें ऽहोरात्राभ्यां धृतः॥६९॥ मनुष्यनामानिं पुशर्वः सीद्त्वित्याहेन्द्रायेत्यांहार्धयति प्रन्ति गृह्णात्यहिर्समायै पश्चांऽहाद्तित्यवंते

विश्वा आशां दक्षिण्सदित्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रींणाति।

अथो दुरिष्ट्या एवैनं पाति। विश्वां देवानंयाडिहत्यांह। विश्वांनेव देवान्भांग्धेयेन समर्धयति। स्वाहांकृतस्य घर्मस्य मधोः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भांग्धेयेन समर्धयति। स्वाहाऽग्रये यज्ञियांय शं यज्जेर्भिरित्यांह। अभ्येवैनं घारयति। अथो हिवरेवाकः॥७०॥

अश्विना घृमं पांत १ हार्दिवानमहंदिवाभिक्तिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भाग्धेयेन समर्धयित। अनुं वां द्यावांपृथिवी म १ सातामित्याहानुंमत्ये। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविडित्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घृमस्य यजेतिं। वर्षद्वते जुहोति। रक्षंसामपंहत्ये। अनुंयजित स्वगाकृंत्ये। धर्ममंपातमश्विनेत्यांह॥ ७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृंणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमश्सातामित्याहानुंमत्यै। तं प्राच्यं यथावण्णमों दिवे नमः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवैतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवैनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छेत्यांह। पृष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गच्छेत्यांह॥७२॥ दिक्ष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्म्पान्गंच्छ पितॄन्धंर्म-पान्गच्छेत्याह। उभयेंष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुकः पूर्जन्यो भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्देक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमुदंश्चं पिन्वयति। देवत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःपृरिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्सोऽस्केन्दाय। इषे पीपिह्यूर्जे पीपिहीत्यांह। इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमाशांस्ते। मह्यं ज्येष्ठ्यांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं एवेतामाशिषमाशांस्ते। त्विष्यैं त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मासि सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्मांणि धार्येत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवेनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयादिति यद्यंभिचरेत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सादयाम्यमुनां सह निर्धं गच्छेतिं ब्र्याद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन सह निर्धं र्गमयति। पूष्णे शरंसे स्वाहेत्यांह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं पृवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पृवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः इ स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं पृवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांगुधेयेंन् समर्धयति। सुर्वतः समनिक्ति। सुर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उद्रश्चं निर्रस्यति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपस्पृशति मेध्यत्वायं। नान्वींक्षेत। यदन्वीक्षेत॥७८॥

चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यः। अपींपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपींपरो मा रात्रिया अह्यो मा पाह्येषा ते अग्ने स्मित्तया समिध्यस्वाऽऽयुंर्मे दा वर्चसा माऽऽश्चीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योतिंज्योतिंरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होत्व्या(३)मितिं॥७९॥

यद्यज्ञंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहंती जुहुयात्। यत्र जुंहुयात्। अग्निः परांभवेत्। भूः स्वाहेत्येव हांत्व्यम्। यथापूर्वमाहंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवित। हुत १ हिवर्मधं हिविरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥ प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण पृवैन्मिन्द्रंतमेऽग्नी जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहि १ सायै। अश्यामं ते देव घर्म मध्मतो वार्जंवतः पितुमत इत्यांह।

अश्यामं ते देव घर्म् मध्रमतो वाजंवतः पितुमत् इत्यांह।
आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वधाविनोऽशीमिहं त्वा मा मां
हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। तेजंसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये
प्रवर्ग्येण चरन्ति। प्राश्ञंन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥
संव्थ्यरं न माश्समंश्ञीयात्। न रामामुपंयात्। न

मुन्मर्यन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज

पृव तथ्स इश्यंति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तंः। विभ्राजि सौर्ये ब्रह्मसन्त्रंदधत। यत्किं चं दिवाकी त्यंम्। तदेते नैव व्रते नांगोपायत्। तस्मादेतद्वृतं चार्यम्। ते जंसो गोपीथायं। तस्मादेतानि यजू १ विभ्राजः सौर्यस्थेत्यां हुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्य इति प्रातः सश्सादयित। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्य इति सायम्। पृता वा पृतस्यं देवताः। ताभिरेवेन समर्थयित॥८२॥

अक्रुश्चिनेत्यांह प्रदिशों गुच्छेत्यांह पितृणामंन्तःपरि्धि पिन्वयति धार्येत्यांह वाचों धर्मपास्तेभ्यं पृवैनं जुहोत्युन्वीक्षेत होत्व्या(३)मित्युग्नावित्यांह दधतेऽगोपायथ्सप्त चं॥———[८]

घर्म् या ते दिवि शुगिति तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमवं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुं-मतिरित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्याह। दिव एवेमाँ ह्योकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्याह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्रमुदंश्रमुद्वासर्यंत्। जि्ह्यं यज्ञस्य शिरों हरेत्। प्राश्चमुद्वांसयित। पुरस्तांदेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥८४॥ प्राश्चमुद्वांसयित। तस्मांदसावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शफोपयमान्धवित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मांनमेवैन् स्तांनुं करोति। सात्माऽमुष्मिं ह्लोके भंवति। य एवं वेदं। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

यज्ञ १ रक्षा १ सि जिघा १ सिन्ति। साम्रा प्रस्तोताऽन्ववैति। साम् वै रेक्षोहा। रक्षंसामपंहत्ये। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। पृभ्य पृव लोकेभ्यो रक्षा इस्यपंहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रेक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्ये॥८६॥ यत्पृंथिव्यामुंद्वासर्यंत्। पृथिवी १ शुचाऽपंयेत्। यद्यप्सु। अपः शुचापंयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽपंयेत्। यद्वनस्पतिषु। वनस्पतीं ञ्छुचापंयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयति। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं पुवैनं प्रतिष्ठापयति। वृल्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः पंरिषिञ्चन्पर्येति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावानेवाग्निः। तस्य शुचर् शमयति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचर् शमयति। चतुंः स्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

ड्यं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमाह। सदो विश्वायुरित्यांह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्यांह् भ्रातृंव्यापन्त्यै। घर्मेतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीष्मिति द्र्धा मंधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवनमन्नाद्येन समर्थयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्ध्रवं इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमान् रिन्तं बन्धुतां व्याचेष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। व्यंसौ योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिक्रदद्वृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्येषः॥९०॥

वृषा हरिः। महान्मित्रो न देर्शत इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। विश्वावंसु सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्यं ऋियमांण-स्यान्त्यंन्तिं। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वित्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धर्वो अमृतांनि वोच्दित्यांह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्मै कल्पयति। एतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगा इत्यांह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमृहं मंनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥

मृनुष्यो हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रंवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां पृश्नून्थ्योमपीथमंनूद्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्याह। प्रजामेव पृश्न्थ्योमपीथमात्मन्थंत्ते। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्त्वत्यांह। आशिषंमेवतामा शांस्ते। दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्ट्रि यं चं व्यं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। प्र वा पृषोऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रंवर्ग्यमुद्वासयतिं। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुन्रेत्य

गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वै लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा आंदित्यः सुंवर्गो लोकः। यथ्सौरी भवंतः। तेनैव सुंवर्गालोकान्नेति॥९३॥

ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पाया इत्यांह दधात्यन्वित्यं रक्षस्वी रक्षंसामपंहत्ये वै हिरंण्यमाहार्धयित ह्यंप

गृण्यात्वत्यांह मनुष्यांनित्यांहास्येषाँऽष्टे च॥——[९]
प्रजापंतिं वै देवाः शुक्रं पयोऽदुह्नन्। तदैंभ्यो न व्यंभवत्।
तदिग्नर्व्यंकरोत्। तानि श्कियाणि सामान्यभवन्। तेषां

तदाश्रव्यकरात्। तान् शुक्रियाण् सामान्यमवन्। तप्। यो रसोऽत्यक्षरत्। तानि शुक्रयज्ञूङ्ष्यंभवन्। शुक्तियाणां वा पृतानि शुक्तियाणि। सामप्यसं वा पृतयोर्न्यत्। देवानामन्यत्पर्यः। यद्गोः पर्यः॥९४॥

तथ्साम्नः पर्यः। यद्जायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुंर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्यंन समर्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यतें। उत्तर्वेद्यामुद्धांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयित। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुखंमुत्तरवेदिः। शीष्णैव मुख्रु सन्देधात्यन्नाद्याय। अन्नाद एव भविति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्श्स पूर्यासंते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्स्यासते॥९६॥

तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा पृतज्ञ्योतिरुदेति। तत्पृश्चान्निम्रोचिति। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा पृतन्मध्याज्ञ्योतिरजायत। ज्योतिः प्रवर्ग्यः। स्वयैवैनं योनौ प्रतिष्ठापयित॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्र स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निर्वेश्वानुरः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवेनं वैश्वानुरेणाभि

प्रवंतियति। औदुंम्बर्या<u>ः</u> शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। अन्नं प्राणः। शुर्घ्मः॥९८॥

इदम्हम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमि दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमि दहित। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्यः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामनूज्झावंर्यो नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदींरयित। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥

गोः पर्यं उत्तरवेदिरांसते स्थापयित घुर्मो यंन्ति॥———[१०]

प्रजापंतिः सिम्भ्यमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घृमः प्रवृंक्तः। महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावैष आदित्यः। यत्प्रवृंग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदे। विदुरेनं नाम्ना। ब्रह्मवादिनों वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया १ सं यथाना ममुंपूचरित। पुण्यां तिं वै स तस्मैं कामयते। पुण्यां तिं मस्मे कामयन्ते। य एवं वेदे। तस्मादेवं विद्वान्। घुर्म इति दिवाऽऽचंक्षीत। सम्माडिति नक्तम्। एते वा एतस्यं प्रिये तनुवौं। एते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवौं॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समेध्यति। कीर्तिरेस्य पूर्वागंच्छति जनतांमायतः। गायत्री देवेभ्योऽपांकामत्। तां देवाः प्रंवर्ग्यणेवानु व्यंभवन्। प्रवर्ग्यणाप्रुवन्। यचंतुर्वि शित्कृत्वंः प्रवर्ग्यं प्रवृणक्ति। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमाप्रोति। पूर्वांऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छति। वैश्वदेवः सश्संन्नः॥१०२॥ वसंवः प्रवृक्तः। सोमोऽभिकीर्यमाणः। आश्विनः

पर्यस्यानीयमाने। मारुतः क्वथन्। पौष्ण उदन्तः। सारुस्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्ह्वियमाणः। प्रजापंतिरहूयमानो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स पृतानि नामान्यकुरुत। य पृवं वेदं। विदुरेनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यन्मृन्मयमाहंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मादेषोंऽश्जुत इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येव वाचं दधाति॥१०४॥ तस्मादश्जुते। प्रजापंतिर्वा पृष द्वांदश्धा विहिंतः। यत्प्रंवर्ग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशेर्देवासुरानंसृजत। यद्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥ वद्दित् तन्त्व सर्मन्ने ह्यमाने वायुतो दधात्येषः॥———[११]

स्विता भूत्वा प्रथमेऽह्नप्रवृंज्यते। तेन् कामार् एति। यिद्विता भूत्वा प्रथमेऽह्नप्रवृंज्यते। तेन् कामार् एति। यिद्वितीयेऽहंनप्रवृज्यतें। अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंनप्रवृज्यतें। वृज्यतें। वृग्यर्भूत्वा प्राणानेति। यचंतुर्थेऽहंनप्रवृज्यतें। आदित्यो भूत्वा र्श्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंनप्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमेति। यत्पष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। धाता भूत्वा शक्वरीमेति। यथ्संप्रमेऽहंन्प्रवृज्यतें। यदंष्टमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृहस्पतिंर्भूत्वा गांयत्रीमेंति। यन्नवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ होकानंति। यद्दंशमेऽहंन्प्रवृज्यतें। वर्रुणो भूत्वा विराजमिति॥१०७॥ यदेकादशेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांदशेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तां दुपसदां प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङमूँ लोका ॥ -स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुपसदां प्रवृज्यतें। तस्मांदमुतोऽर्वा-ङिमाँ ह्लोका इस्तपंत्रेति। य एवं वेदै। ऐव तंपति॥१०८॥

नक्षंत्राण्येति विराजंमेति तपति॥----[१२]

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥



॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

परेयुवा १ सं प्रवतो महीरन् बहुभ्यः पन्थामनपस्पशानम्। वैवस्वतं र सङ्गमंनं जनानां यम र राजांन र हिवधां द्वस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागृत्रपैतदूंह यदिहाबिंभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बंह्धा विबंन्धुषु। इमौ युंनज्मि ते वही असुंनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंन सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्च्यांवयतु प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिंददात्पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रैभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मा अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥

आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तात्। यत्राऽऽसंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इद॰ ह्विः। अग्नयं रियमते स्वाहां। पुरुषस्य सयाव्यपेद्धानिं मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा जरम् आयंति। पुरुषस्य सयावरि वि तैं प्राणमंसि स्नसम्। शरीरेण महीमिहिं स्वधयेहिं पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं मा्ड् स्ता प्रियेऽहं देवी स्ती पितृलोकं यदैषिं। विश्ववारा नमसा संव्ययन्त्युभौ नों लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृथ्स्व॥२॥

इयं नारी पतिलोकं वृंणाना निपंद्यत् उपं त्वा मर्त्य प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेंहि। उदींर्ष्व नार्यभि जीवलोकमितासुंमेतमुपंशेष एहिं। हस्तुग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वमभि सम्बंभूव। सुवर्ण् हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मंणे तेजंसे बलाय। अत्रैव त्विमृह व्य र सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमांतीर्जयेम। धनुर्हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रियै क्षत्रायौजंसे बलांय। अत्रैव त्विमृह व्य र सुशेवा विश्वाः स्पृधों अभिमातीर्जयेम। मणिर हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पुष्ट्ये बलाय। अत्रैव त्विमृह व्य र सुशेवा विश्वाः स्पृधो अभिमातीर्जयेम॥३॥

ड्ममंग्ने चम्सं मा विजीहरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानाम्। एष यश्चमसो देवपानुस्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अुग्नेर्वर्म् परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोर्णुष्व मेदंसा पीवंसा च। नेत्त्वां धृष्णुर्हरंसा जर्ह्षंषाणो दधंद्विधुक्ष्यन्पर्युङ्खयांतै। मैनंमग्ने विद्हो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। यदा शृतं करवो जातवेदोऽथेमेनं प्रहिंणुतात्पितृभ्यः। शृतं यदा क्रसीं जातवेदोऽथेंमेनं परिंदत्तात्पृतृभ्यंः। युदा गच्छात्यसुनीतिमेतामथां देवानां वश्नीभंवाति। सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातमातमा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं तें शोचिस्तंपतु तं तें अर्चिः। यास्तें शिवास्तुनवों जातवेदस्ताभिविहेम स्कृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वमस्मादिध त्वमृतद्यं वै तदंस्य योनिरसि। वैश्वानुरः पुत्रः पित्रे लोंकुकुजातवेदो वहेंम र सुकृतां यत्रं लोकाः॥४॥

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तेभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथो रंक्षितार्स्तेभ्यः स्वाहा य एतस्यं पृथोभिऽरंक्षितार्स्तेभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहाऽग्नये कर्मकृते स्वाहा यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहाँ। यस्तं इध्मं जुभरंथ्सिष्विदानो मूर्धानं वात तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्माथ्सीमघायत उंरुष्यः। अस्मात्त्वमधिं जातोऽसि त्वद्यं जांयतां पुनः। अग्नये वैश्वानरायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहाँ॥५॥

य एतस्य त्वत्पञ्चं॥————[२]

प्र केतुनां बृहता भांत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप् मामुदानंडुपामुपस्थें महिषो वंवर्ध। इदं त एकं पुर ऊंत एकं तृतीयेंन ज्योतिषा संविंशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि प्रियो देवानां परमे सधस्थै। नाके सुपूर्णमुप् यत्पतंन्त हदा वेनंन्तो अभ्यचेक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भुरण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौं चतुरक्षौ शबलौं साधुनां पथा। अथां पितृन्थ्सुंविदत्राः अपींहि यमेन ये संधमादं मदंन्ति। यो ते श्वानों यमरक्षितारों चतुरक्षो पंथिरक्षीं नृचक्षंसा। ताभ्या ५ राजन्परि देह्येन इ स्वस्ति चौस्मा अनमीवं चे धेहि॥६॥

धेह्यतंरेमाष्टौ चं॥=

उरुण्सावंसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चंरतो वशा क्रमं। तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनंदत्ता वसुम् छेह भ्द्रम्। सोम् एकेंभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति ता क्षिंदेवापि गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता क्षिंदेवापि गच्छतात्। तपसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवंर्गताः। तपो ये चंकिरे महत्ता क्षिंदेवापि गच्छतात्। अश्मंन्वती रेवतीः सक्षंद्रिक्षेत्र प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम् ये असन्नशंवाः शिवान् वयम्भि वाजानुत्तरेम॥७॥

यहै देवस्यं सिवतुः पिवत्र सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनात्मात्ये तेनाहं मा स्वितंनुं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता नृपितिमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मात्रय्या वर्चसा सश्सृंजाथ। उद्वयं तमंस्स्पिर् पश्यंन्तो ज्योति्रत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंन्म ज्योतिंरुत्तमम्। धाता पुनातु सिवता पुनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यस्य वर्चसा॥८॥ यन्ते अग्निममंन्थाम वृष्भायेव पक्तेव। इमन्तर शंमयामिस क्षीरेणं चोदकेनं च। यन्त्वमंग्ने स्मदंहस्त्वमु निर्वापया पुनः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिके शीतिकावित ह्रादुंके ह्रादुंकावित। मृण्डूक्यां सुसङ्गमयेम स्वंग्निर श्वमयं। शं ते धन्वन्या आपः शम्ं ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शम्ं ते सन्त्व वर्ष्याः। शं ते स्रवन्तीस्तन्वे शम्ं ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शम् पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥

अवं सृज पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंत्श्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातु शेष् सङ्गंच्छतां तन्वां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः सिमेष्टापूर्तेनं पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्यै वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्तं कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीतः सर्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमंश्च यो ब्रांह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तनुव सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्ये वृणसे तत्रं गच्छ तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। इदं त एकं प्र ऊत् एकं त्वा

तृतीयेंन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशंनस्तनुवै चार्ररिध प्रियो देवानां पर्मे स्थर्थं। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व पर्मे व्योमन्। यमेन त्वं यम्यां संविदानोत्तमं नाक्मिधं रोहेमम्। अश्मन्वती रेवतीयद्वै देवस्यं सिवतः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्पिरं धाता पुनात्। अस्मात्त्वमिधं जातोंऽस्ययं त्वदिधंजायताम्। अग्नयं वैश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥१०॥

अवंशीयतार स्धस्थे पश्चं च॥_____[४]

आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हेवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता सप्रयतेंह ब्रहिष्यूर्जाय जात्यै ममं शत्रुहत्यैं। यमे इंव यतमाने यदैतं प्रवाम्भरन्मानुषा देवयन्तः। आसींदत् स्वमुं लोकं विदाने स्वास्स्थे भंवत्मिन्दंवे नः। यमाय सोम स्मृत यमायं जुहुता ह्विः। यम हं यज्ञो गंच्छत्यग्निद्तेतो अर्रङ्कृतः। यमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नो देवेष्वायंमदीर्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मधुमत्तम् राज्ञे ह्व्यं जुहोतन। इदं नम् ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पिथकृद्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जगंतः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। यमं भं श्लाश्रवो गांय यो राजांनपरोध्यः। यमङ्गार्य भङ्गाश्रवो यो राजांनपरोध्यः। येनापो नद्यो धन्वांनि येन द्यौः पृथिवी दृढा। हिर्ण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिर्ण्याक्षानयः शफान्। अश्वांननश्यंतो दानं यमो राजाभि तिष्ठंति। यमो दांधार पृथिवीं यमो विश्वंमिदं जगंत्। यमाय सर्वमित्रंस्थे यत्प्राणद्वायुरिक्षेतम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दृशर्षयः। यमं यो विद्याथ्स ब्रूंयाद्यथैक ऋषिर्विजानते॥१२॥

त्रिकंद्रकेभिः पतंति षडुर्वीरेक्मिद्धृहत्। गायत्री त्रिष्ठुप्छन्दार्रस् सर्वा ता यम आहिता। अहंरहर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृंप्यति पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते राजित्रिह विविंच्यन्तेऽथा यंन्ति त्वामुपं। देवाङ्श्च ये नंमस्यन्ति ब्राह्मणाङ्श्चापचित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुंपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पतिः पिता पुंराणा अनुवेनित॥१३॥ प्रिकृत्यो विज्ञान्तेऽन् वेनित॥

वैश्वान्रे ह्विरिदं जुंहोमि साहुस्रमुथ्सई श्वतधारमेतम्।

तस्मिन्नेष पितरं पितामहं प्रपितामहं बिभर्त्पन्वंमाने। द्रुपसश्चंस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः। तृतीयं योनिमनुं स्रश्चरंन्तं द्रुपसं जुंहोम्यनुं स्प्त होत्राः। इम संमुद्र शृतधारमुथ्सं व्यच्यमानं भुवंनस्य मध्ये। घृतं दुहानामिदितिं जनायाग्ने मा हि सीः पर्मे व्योमन्। अपेत वीत वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानमस्म। स्विततानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तिभिर्युज्यन्तामिन्नयाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गंलम्। शुनं वर्त्रा बंध्यन्ता शुनमष्ट्रामुदिंङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मासुं धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंऋथुः पयः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाचीं सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। सुवितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भव। विमुंच्यध्वमिष्ट्रया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम् सुवंरगन्म॥१५॥ प्र वाता वान्तिं प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वंते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी १ रेत्साऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चं मानवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूर्रयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरों देवतां। प्रजापंतिवः सादयतु तयां देवतंया। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

अृष्टिया अंगन्म सप्त चं॥———[६]

उत्तें तभ्रोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहर रिषम्। एता स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रां युमः सादनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातरं भूमिमेतामुरुव्यचंसं पातु निर्ऋत्या उपस्थैं। उङ्गेश्चस्व पृथिवि मा विबांधिथाः सूपायनासमें भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथांसिचाभ्येंनं भूमि वृणु। उङ्गर्श्वमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासों मधुश्रुतो विश्वाहाँस्मै शरुणाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीरर्जुनीः सन्तु धेनवंः। तिलंबथ्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पुषा ते यमसादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम ब्रहिर्देवेभ्यो जीवन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बंधिष्टां मा माता पृंथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमराज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बंधिथां मा माता पृंथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यमराज्ये विराजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विंहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तर् प्रत्रोत्तर॥१८॥

स्वितेतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भंव। षड्ढांता सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छत् वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतंरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मानः प्रजा रीरिषो मोत वीरान्। शं वातः शर हि ते घृणिः शर्मु ते सन्त्वोषंधीः। कल्पंन्तां मे दिशः शृग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सादयाम्यमुष्य शर्मांस पितरो देवता। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवत्या। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा

नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्र्ध्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरों देवता। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥ अपूपवाँन्घृतवा ५ श्वरुरह सींदतूत्तभ्रुवन् पृंथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतंः पथिकृतंः सपर्यत ये देवानां घृतभागा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहें उसौ। दशाँक्षरा ता रंक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्यितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधवान्मधुंमा इश्वरुरेह सींदतूत्तभुवन् पृथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतंः पथिकृतंः सपर्यतं ये देवाना ई श्तमांगाः क्षीरभांगा दिधेभागा मधुंभागा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहें उसौ। श्वताक्षंरा सहस्रौक्षरायुतौक्षराऽच्युंताक्षरा ता र रेक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवता। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥

अनंपस्फुरन्ती्रुत्तंर देवतंया हे चं॥———[७] पुतास्ते स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः पंरिकिराम्यत्रं। तास्ते युमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनः कामदुर्धाः करोत्। त्वामर्जुनौषंधीनां पयों ब्रह्माण् इद्विदः। तासां त्वा मध्यादादंदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाः स्तम्बमाहंरैतां प्रियतंमां ममं। इमां दिशं मनुष्यांणां भूयिष्ठानु वि रोहत्। काशांनाः स्तम्बमाहंर् रक्षंसामपंहत्ये। य एतस्यै दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्युनंः। दर्भाणाः स्तम्बमाहंर पितृणामोषंधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृंण ता अस्य सूदंदोहसः। शं वातः शक् हि ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषंधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंगमार्तिमाराम् काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण वर्रणेन च। वर्णो वारयादिदं देवो वनस्पतिः। आर्र्ये निर्ऋत्ये द्वेषांच वनस्पतिः। विधृंतिरिस् विधारयासमद्घा द्वेषार्थसे श्रामि श्रमयास्मद्घा द्वेषार्थसे यव यवयासमद्घा द्वेषार्थसे। पृथिवीं गच्छान्तरिक्षं गच्छ दिवं गच्छ दिशों गच्छ सुवंगच्छ सुवंगच्छ दिशों गच्छ पृथिवीं गच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु

प्रतितिष्ठा शरींरैः। अश्मंन्वती रेवतीर्यद्वै देवस्यं सवितुः पवित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्परि धाता पुनातु॥२२॥

पा राष्ट्रात्पत्रादृष्ट्वय तमस्स्पार याता पुनातु॥ रर॥

आ रोह्ताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतंमाना यितृष्ट। इह त्वष्टां सुजिनमा सुरत्नों दीर्घमायुः करतु जीवसे वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथ्रतवं ऋतुभिर्यन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपेरो जहाँत्येवा धांत्रायू धि कल्पयैषाम्। न हिं ते अग्ने तनुवैं कूरं चकार् मर्त्यः। कृपिर्बंभिस्ति तेजेनं पुनेर्ज्रायु गौरिव। अपं नः शोश्चंद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोश्चंद्घं मृत्यवे स्वाहाँ। अनुङ्वाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयै। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो विह्रंः सम्पारंणो भव॥२३॥

ड्मे जीवा विं मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहूंतिं नो अद्य। प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रत्रां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयंन्तो यदैम् द्राघीय आयुः प्रत्रां दर्धानाः। आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। श्रतं जीवन्तु श्रदः पुरूचीस्त्रिरो मृत्युं दंद्महे पर्वतेन। भुव जम्भयामुसि त्रीणि च।

इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सपिषा सम्मृंशन्ताम्। अनुश्रवो अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रै। यदाञ्जनं त्रैककुदं जातः हिमवंतस्परि। तेनामृतंस्य मूलेनारातीर्जम्भयामिस। यथा त्वमुंद्भिनथ्स्योषधे पृथिव्या अधि। एविम्म उद्भिन्दन्तु कीर्त्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेन। अजौऽस्यजास्मद्घा द्वेषाः सि युवोऽसि युवयास्मद्घा द्वेषाः सि॥२४॥

अपं नः शोशुंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशुंचद्घम्। सुक्षेत्रिया सुंगातुया वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोशुंचद्घम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूरयः।

अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्ग्नेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूरयः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयत्तें अग्ने सूरयो जायेमिह् प्रतें वयम्। अपं नः शोशंचद्घम्॥२५॥

त्वः हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसिं। अपं नः शोशुंचद्घम्। द्विषों नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोशुंचद्घम्। स नः सिन्धुंमिव नावयातिं पर्षा स्वस्तयैं। अपं नः शोशुंचद्घम्। अ्घम्घं चुत्वारि च॥

आपंः प्रवणादिंव युतीरपास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। उद्घनादंदकानीवापास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। आन्नन्दायं प्रमोदाय पुनरागा्ड् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। न व तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः पृशुः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियते परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोशंचद्घम्॥२६॥

अपंश्याम युवृतिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्थेन या तमसा प्रावृंताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्ठौ। मयेतां माङ्स्तां भ्रियमाणा देवी सती पितृलोकं यदैषि। विश्ववांरा नमसा संव्यंयन्त्युभौ नो लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियष्ठामृग्निं मध्मन्तमूर्मिणमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप सश्संदेम। स॰ रय्या समु वर्चसा सचंस्वा नः स्वस्तयै। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यों घृतस्यं

धारियतुं मध्धारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दिह्तिता वसूना् इ स्वसांऽऽदित्यानांममृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनाय मागामनांगामिदंतिं विधिष्ट। पिबंतूदकं तृणांन्यत्तु। ओमुथ्मृजत॥२७॥

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः

शान्तिः शान्तिः॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमा संमेत पश्यंत। सौभाँग्यम्स्ये द्त्त्वायाथास्तं वि परेतन। इमां त्विमेन्द्र मीद्वः सुपुत्रा स्मुभगाँ कुरु। दशाँस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृषि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरमात्मनंः। वासा सि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं विदिष्यामि। ऋतं विदिष्यामि। स्त्यं विदिष्यामि। तन्मामंवतु। तह्क्तारंमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥१॥ स्त्यं विदिष्यामि पश्चं च॥———[१]

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

शीक्षां पञ्चं॥_____[२]

सह नौ यशः। सह नौ ब्रंह्मवर्चसम्। अथातः स॰हिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महास॰हिता इंत्याचृक्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सुन्धिः॥३॥

वार्युः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्विरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विद्या सुन्धिः। प्रवचन रे सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूर्वरूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सुन्धिः। प्रजनन रे सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंररूपम्। वाख्सन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा महास्रहिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजंया पृश्भिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

सन्धिरावार्यः पूर्वरूपमित्यध्रिप्रजं लोकेन॥———[3]

यश्छन्दंसामृष्मो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृतांध्सम्बभूवं। स मेन्द्रो मेधयां स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णाभ्यां भूरि विश्वंवम्। ब्रह्मणः कोशोऽसि मेधयाऽपिंहितः। श्रुतं में गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोमशां पृश्भिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमांयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमांयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥

यशो जनेंऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भग प्रविंशानि स्वाहाँ। स मां भग प्रविंश स्वाहाँ। तस्मिन्थ्सहस्रंशाखे। निभंगाहं त्वियं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जुरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धात्रायंन्तु सूर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोंऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

भूर्भुवः सुवृरिति वा एतास्तिस्रो व्याहृतयः। तासामहस्मै तां चतुर्थीम्। माहाचमस्यः प्रवेदयते। मह् इतिं। तद्वह्मं। स आत्मा। अङ्गान्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुवृरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह इत्यांदित्यः। आदित्येन वाव सर्वे लोका महीयन्ते।

असौ लोको यजूर्षि वेद द्वे चं॥—

भूरिति वा अग्निः। भुव इतिं वायः। सुव्रित्यांदित्यः।
मह् इतिं चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती रेषि
महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुव्रिति
यजूरेषि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुव्रितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा प्रताश्चंतस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहृंतयः। ता यो वेदं। स वेंद् ब्रह्मं। सर्वेंऽस्मै देवा बुलिमावंहन्ति॥१२॥

स य एषौं ऽन्तर्हृंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः। अमृंतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य एष स्तनं इवावलम्बंते। सैन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्यग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इतिं

वायौ॥१३॥

सर्वास्त्रांदिस्ये। मह दवि बहाणि। आगोवि स्वायौन्यम्।

सुव्रित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मणि। आप्नोति स्वारांज्यम्। आप्नोति मनसस्पतिम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पतिः। श्रोत्रंपतिर्वि- ज्ञानंपितः। एतत्ततों भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। सत्यात्मंप्राणारामं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धमृमृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

वायाव्मृत्मेकं च॥——[६]

पृथिव्यंन्तिरक्षं द्यौर्दिशोऽवान्तरिद्याः। अग्निर्वायुरादित्य-श्चन्द्रमा नक्षेत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोऽपान उदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्तक्। चर्म मार्स्स स्नावास्थि मुज्जा। पृतदिधि विधायर्षिरवोचत्। पाङ्कं वा इदर् सर्वम्। पाङ्कंनैव पाङ्कः स्पृणोतीति॥१५॥

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीद सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामांनि गायन्ति। ओश्शोमितिं शुस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिगरं प्रतिंगुणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौंति।

सर्वमेकं च॥____

ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिग्रं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौंति। ओमित्यंग्निहोत्रमनुंजानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवृक्ष्यन्नांह् ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

ओन्दर्श॥———[८]

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्नरश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च षद्वं॥_____[\S]

अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदांनुव्चनम्॥१८॥

अह^१ षद॥——[१०]

वेदमनूच्याऽऽचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायाँन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यंवच्छ्रेथ्सीः। सत्यान्न प्रमंदित्व्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्ये न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदितव्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिंदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेविंतव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माक स्मंरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया स्मो ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकिथ्सा वा वृत्तविचिकिंथ्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्यः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैत्रंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यात्र प्रमंदित्व्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्थसप्त चं॥——[११]

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावांदिषम्। ऋतमेवादिषम्। सत्यमेवादिषम्। तन्मामावीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवींद्वकारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥

॥ अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्। तदेषाभ्यंक्ता। सृत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहितं गुहांयां पर्मे व्योमन्। सौंऽश्जृते सर्वान्कामाँन्थ्सह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा पृतस्मांदात्मनं आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापंः। अन्द्वः पृथिवी। पृथिव्या ओषंधयः।

ओषंधीभ्योऽन्नम्। अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तंरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥१॥

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवी श्रिताः। अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैनदिपं यन्त्यन्ततः। अन्न ५ हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्माध्सर्वीषधमुंच्यते। सर्वं वै तेऽन्नमापुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासंते। अन्न हे हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्माँथ्सर्वोष्धमुंच्यते। अन्नाँद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राणुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकाश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥२॥ प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामार्युः। तस्माध्मर्वायुषम्चयते। सर्वमेव त

हि भूतानामार्युः। तस्मांध्सर्वायुषमुंच्यते। सर्वमेव त आयुर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतांनामायुः। तस्माथ्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मात् प्राण्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यज्ञंरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पृक्षः। सामोत्तरः पृक्षः। आदेश आत्मा। अथविङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥३॥

यतो वाचो निर्वर्तन्ते। अप्राँप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माँन्मनोमयात्। अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञानमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रंद्धैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पृक्षः। सत्यमुत्तरः पृक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भ्वति॥४॥

विज्ञानं यज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपिं च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ठमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरे पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्थ्समध्जेत पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पक्षः। प्रमोद उत्तरः पक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥५॥ असंन्नेव सं भवति। असद्भृह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारींर आत्मा। यंः पूर्वस्य। अथातोऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानमुं लोकं प्रेर्त्य। कश्चन गंच्छती(३)॥ आहों विद्वानमुँह्लोकं

इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा

एतस्माद्विज्ञानमयात्। अन्योऽन्तर आत्माऽऽनन्दमयः। तेनैष

प्रेत्यं। कश्चिथ्समंश्जुता(३) उ। सोंऽकामयत। बहु स्यां प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तुःखा। इदः सर्वमसृजत। यदिदं किं चं। तथ्सृष्ट्वा। तदेवानु प्राविंशत्। तदंनुप्रविश्यं। सच त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिंरुक्तं च। निलयनं चानिलयनं च। विज्ञानं चाविज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यमभवत्। यदिदं किं च। तथ्सत्यमित्याचक्षते। तदप्येष श्लोंको भवति॥६॥ असद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वै सदंजायत।

तदात्मान इस्वयंमकुरुत। तस्मात्तथ्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वै तथ्सुकृतम्। रंसो वै सः। रस इह्येवायं लब्ध्वाऽऽनंन्दी भ्वति। को ह्येवान्यांत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भ्वति। यदा ह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भ्वति। यदा ह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्ते। अथ तस्य भयं भ्वति। तत्त्वेव भयं विदुषोऽमंन्वानस्य। तदप्येष श्लोको भ्वति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदंति सूर्यः। भीषाऽस्मादग्निं-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावति पश्चंम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमार्रसा भवति। युवा स्याथ्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिढष्ठों बल्रिष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आन्नदः। ते ये शतं मानुषां आन्नदाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमान्नदः। श्लोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एको

देवगन्धर्वाणांमान्नन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य। ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एकः पितृणां

त य शत दवगन्धवाणामान्-दाः। स एकः ।पतृणा चिरलोकलोकानामान्-दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य। ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकानांमानुन्दाः। स एक आजानजानां देवानांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य।

ते ये शतमाजानजानां देवानामानुन्दाः। स एकः कर्मदेवानां देवानामानुन्दः। ये कर्मणा देवानिपयन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामहत्स्य।

ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमान्न्दाः। स एको देवानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं देवानांमान्नदाः। स एक इन्द्रंस्यान्नदः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतमिन्द्रंस्याऽऽन्न्दाः। स एको बृहस्पतेंरान्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहत्स्य।

ते ये शतं बृहस्पर्तेरानुन्दाः। स एकः प्रजापर्तेरानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतुस्य।

ते ये शतं प्रजापतेरान्न्दाः। स एको ब्रह्मणे आन्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

स यश्चीयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामित।

एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्ग्रामित। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्ग्रामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्ग्रामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोंको भवति॥८॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्रौप्य मनसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एतः ह वावं न तपति। किमहः साधुं नाक्रवम्। किमहं पापमकरंविम्ति। स य एवं विद्वानेते आत्मांनः स्पृणुते। उभे ह्यंवैष् एते आत्मांनः स्पृणुते। उभे ह्यंवैष् एते आत्मांनः स्पृणुते। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥९॥

सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वरुणं पितंरुमुपंससार। अधींहि

भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां पृतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाच्मितिं। त होवाच। यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते। येन जातानि जीवन्ति। यत्प्रयन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मोतिं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तृस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुखा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। प्राणेन जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिह्वज्ञायं। पुनरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खल्विमानि

भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीति। तद्विज्ञायं। पुनरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तर होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञाना्द्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। विज्ञानंन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीतिं। तद्विज्ञायं। पुनर्वे वर्रणं पितंरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तर होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥५॥

आन्नन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दा् छोवं खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। आन्नन्देन जातांनि जीवंन्ति। आन्नन्दं प्रयंन्त्यमि संविंशन्तीति। सेषा भाग्वी वांरुणी विद्या। प्रमे व्योमन् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां प्रशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥६॥ अन्नं न निन्द्यात्। तद्वतम्। प्राणो वा अन्नम्॥ शरीरमन्नादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिचक्षीत। तद्वृतम्। आपो वा अन्नम्। ज्योतिरन्नादम्। अपसु ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवित प्रजयां पृशुभिर्न्नह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अन्नं बहु कुंवीत। तद्वतम्। पृथिवी वा अन्नम्। आकाशौँऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भवित प्रजयां पृश्भिन्नंह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वृतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याच्क्षते। एतद्वै मुखतौंऽन्न॰ राद्धम्। मुखतोऽस्मा अन्न॰ राध्यते। एतद्वै मध्यतौंऽन्न॰ राद्धम्। मध्यतोऽस्मा अन्न॰ राध्यते। एतद्वा अन्तर्तो ऽन्न र गुद्धम्। अन्तर्तो ऽस्मा अन्न र गुध्यते। य एवं वेद। क्षेम इंति वाचि। योगक्षेम इति प्राणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिंति वृष्टौ। बलिमंति विद्युति। यश इंति पशुषु। ज्योतिरिति नेक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्वमिंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्युंपासीत। नम्यन्तें ऽस्मै कामाः। तद्वह्मेत्युंपासीत। ब्रह्मवान्भवति। तद्भह्मणः परिमर इत्युपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तंः सपत्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ होकान्कामान्नी कामरूप्यंनु-स्थरन्। एतथ्साम गांयन्नास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)- ऽहमन्नादः। अह ॥ श्लोककृदह ॥ श्लोककृदह ॥ श्लोककृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नमदन्तमा(३) द्यि। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभवाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥१०॥

सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥अम्भस्य पारे॥

अम्भंस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकंस्य पृष्ठे मंहतो महीयान्। शुक्रेण ज्योती ५ षि समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरित गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। तदेव भूतं तदु भव्यंमा इदं तदक्षरे पर्मे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवंं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेर्जसा भाजसा च। यमन्तः संमुद्रे कवयो वयंन्ति यदक्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता ज्गतः प्रसूती तोयेन जीवान् व्यसंसर्ज भूम्यांम्। यदोषंधीभिः पुरुषांन्पशू ॥ विवेश भूतानि चराचराणि॥ अतः परं नान्यदणीयस १ हि परौत्परं यन्महंतो महान्तम्। यदेकमव्यक्तमनंन्तरूपं विश्वं पुराणं तमंसः परंस्तात्॥१॥ तदेवर्तं तदं सत्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्।

इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायमानं विश्वं बिंभर्ति भुवनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तथ्सूर्यस्तदं चुन्द्रमाः। तदेव शुक्रमुमृतुं तद्बह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा ज्जिरे विद्युतः पुरुषादिधे। कुला मुहूर्ताः काष्टाश्चाहोरात्राश्च सर्वशः॥ अर्धमासा मासां ऋतवंः संवथ्सरश्चं कल्पन्ताम्। स आपंः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवंः॥ नैनंमूर्ध्वं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येंशे कश्चन तस्यं नाम महद्यशं:॥२॥

न सन्दर्शे तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यति कश्चनैनम्। हदा मंनीषा मनसाऽभिक्रं प्रो व एनं विदुरमृतास्ते भवन्ति॥ अद्धः सम्भूतो हिरण्यगुर्भ इत्यृष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गखाँस्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नमंति सं पतंत्रैर्घावांपृथिवी जनयंन्देव एकंः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवंनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निद र सं च विचैक र स ओतः

प्रोतंश्च विभुः प्रजासुं। प्र तद्वोंचे अमृतं नु विद्वान्गंन्ध्वों नाम निहितं गुहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिता गृहांसु यस्तद्वेदं सिवृतः पिताऽसंत्। स नो बन्धंर्जनिता स विधाता धामांनि वेद भुवंनानि विश्वां। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्येरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासं। प्रीत्यं लोकान्परीत्यं भूतानि प्रीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्याऽऽत्मनाऽऽत्मानंमभिसम्बंभूव। सदंसस्पित्मद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सिनं मेधामंयासिषम्। उद्दींप्यस्व जातवेदोऽपघ्रित्रर्र्ऋतिं ममं॥४॥

पृश्र्श्र्यं मह्यमावंह् जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हि॰सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जर्गत्। अबिंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिपातय।

॥ गायत्रीमन्त्राः॥

पुरुंषस्य विद्म सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों

रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें वऋतुण्डायं धीमहि। तन्नों दन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें चऋतुण्डायं धीमहि॥ धीमहि॥ ५॥

तन्नों नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्महें महासेनायं धीमहि। तन्नंः षण्मुखः प्रचोदयांत्। तत्पुरुंषाय विद्महें सुवर्णपक्षायं धीमहि। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विदाहें हिरण्यगर्भायं धीमहि। तन्नौं ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्महें वासुदेवायं धीमहि। तन्नों विष्णुः प्रचोदयाँत्। वुजनुखायं विदाहं तीक्ष्णदः ष्ट्रायं धीमहि॥६॥ तन्नों नारसि १ हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विदाहें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्महं कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरमा देवी शतमूला शताङ्करा। सर्वर् हरतुं मे पापं

दूर्वा दुःस्वप्ननाशंनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती परुषः परुषः परि॥७॥

पुवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रंण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रंण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वंकान्ते रंथकान्ते विष्णुक्रांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारियष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिके हनं मे पापं यन्मया दुंष्कृतं कृतम्। मृत्तिके ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमत्रिता। मृत्तिके देहिं मे पुष्टिं त्विय संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिकै प्रतिष्ठिते सुर्वं तुन्मे निर्णुद मृत्तिके। तयां हुतेनं पापेन गुच्छामि पंरमां गतिम्।

॥ रात्रुजयमन्त्राः॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृधि। मघंवन्छ्ग्धि तव तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिहा स्वस्तिदा विशस्पतिंर्वृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नुस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिंर्दधातु। आपौन्तमन्युस्तृपलंप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छरंमा । ऋजीषी। सोमो विश्वान्यत्सावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥ ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुची वेन आवः। सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः स्तश्च योनिमसंतश्च विवंः। स्योना पृथिवि भवां ऽनृक्षरा निवेशंनी। यच्छांनः शर्मं सप्रथाः। गुन्धुद्वारां दुराधुर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरी ५ सर्वभूतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भुजतु। अलक्ष्मीमें न्श्यतु। विष्णुंमुखा वै देवाश्छन्दोभिरिमाँ श्लोकानंनप-ज्य्यम्भ्यंजयन्। मृहा इन्द्रो वज्रबाहुः षोडुशी शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रेह्मणस्पते। कृक्षीवंन्तुं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तस्मिन्थ्सीदतु योंऽस्मान् द्वेष्टिं। चरंणं पवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं पवित्रंण शुद्धेनं पूता अतिं पाप्मान्मरांतिं विद्वान्। जिहि शत्रूष्ट्रं रप् मृधी नुद्स्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो नः। सुमित्रा न आप् ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुर्योऽस्मान् द्वेष्ट्रि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

तरेम। सुजोषां इन्द्र सर्गणो मुरुद्धिः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर

महेरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपो जनयंथा च नः।

॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। युन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रणो बृह्स्पतिः सिवता चं पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्रयेंऽपसुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रणाय नमो वारुण्ये नमोऽग्रयः॥१२॥

यद्पां ऋूरं यदमेध्यं यदशान्तं तदपंगच्छतात्। अत्याशनादतीपानाद्यच उग्रात् प्रतिग्रहात्। तन्नो वर्रणो राजा पाणिनां ह्यवमर्शतु। सोऽहमपापो विरजो निर्मुक्तो मुंक्तिकित्विषः। नार्कस्य पृष्ठमारुं गच्छेद्वह्मंसलोकताम्। यश्चापस् वरुंणः स पुनात्वंघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वित शुतुंद्रि स्तोम स्मवता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वृधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ऋतं चं सत्यं चाभीद्वात्तप्सोऽध्यंजायत। ततो रात्रिरजायत ततः समुद्रो अर्ण्वः॥१३॥

समुद्रादंर्ण्वादिधं संवथ्सरो अंजायत। अहोरात्राणिं विद्धिद्विश्वंस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यंथापूर्वमंकल्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवंः। यत्पृथिव्या र रजः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाइस्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुष भूतस्य मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्णमय स्वर्धाः। १४॥

स नः सुवः स॰शिंशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिंर्हमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रह्महमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोमि स्वाहाँ। अकार्यकार्यवकीणीं स्तेनो भ्रूंणहा गुंरुत्त्पगः। वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्मौत्पापात् प्रमुंच्यते। रजो भूमिस्त्वमाः रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीरौः। आक्रौन्थ्समुद्रः प्रथमे विधमा जनयंन्प्रजा भुवंनस्य राजाः। वृषां प्वित्रे अधि सानो अव्ये बृहथ्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेंदसे सुनवाम सोमंमरातीयतो निजंहाति वेदः। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः। तामुग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कंर्मफलेषु जुष्टांम्। दुर्गां देवी र शरणमहं प्रपेद्ये सुतर्रसि तरसे नर्मः। अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्थ्स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्व पृथ्वी बंहुला नं उुवीं भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वानि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिं पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानौं ऽस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पृतनाजित् र सहंमानमग्निमुग्र र हुंवेम परमाथ्सधस्थांत्। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा क्षामद्वेवो अति दुरिताऽत्यग्निः।

प्रत्नोषि कमीड्यो अध्वरेषुं स्नाच् होता नव्यंश्च सिथ्सं। स्वाश्चांग्ने त्नुवंं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टंमयुजो निषिक्तं तवेन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकंस्य पृष्ठम्भि संवसानो वैष्णंवीं लोक इह मादयन्ताम्॥१६॥

॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रंमग्रये पृथिव्यै स्वाहा भुवोऽत्रं वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवरत्रंमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवरत्रं चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरत्रमोम्॥१७॥

भूरग्नयं पृथिव्यै स्वाहा भुवां वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरग्न ओम्॥१८॥

भूरग्नयें च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च मह्ते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे

-[५]

-[り]

चं मह्ते च स्वाहा भूर्भुवः सुवंश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं मह्ते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवर्मह्रोम्॥१९॥

॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः ॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतर्ऋतो स्वाहा॥२०॥

पाहि नों अग्र एकंया। पाह्यंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तुस्भिवसो स्वाहाँ॥२१॥

॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

॥वद्।वस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृष्मो विश्वरूपृश्छन्दोंभ्यश्छन्दा ईस्याविवेशं। सता १ शिक्यः पुरोवाचोंपिन्षिदिन्द्रों ज्येष्ठ इंन्द्रियाय ऋषिंभ्यो नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥

——[१०]

नमो ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयासं कर्णयोः श्रुतं मा च्योंबुं ममामुष्य ओम्॥२३॥

॥तपः प्रशंसा॥

ऋतं तपंः स्तयं तपंः श्रुतं तपंः शान्तं तपो दम्स्तपः शम्स्तपो दानं तपो यज्ञं तपो भूर्भुवः सुवर्ष्रह्मैतदुपाँस्यैतत्तपंः॥२४॥

॥ विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्धो वाँत्येवं पुण्यंस्य कुर्मणों दूराद्गन्धो वांति यथांऽसिधारां कुर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्वयिष्यामि कुर्तं पंतिष्यामीत्येवम्नृतांदात्मानं जुगुफ्सेंत्॥२५॥

[११]

॥ दहरविद्या॥

अणोरणीयान्मह्तो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य

जन्तोः। तमंऋतुं पश्यति वीतशोको धातुः प्रसादौन्महिमानं-मीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवंन्ति तस्मां ध्यप्तार्चिषंः समिधंः सप्त जिह्नाः। सप्त इमे लोका येषु चरन्ति प्राणा गुहाशयां निहिताः सप्त सप्त। अतः समुद्रा गिरयश्च सर्वेऽस्माथ्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैंष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानाँ पद्वीः कंवीनामृषिर्विप्रांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्रांणा इ स्वधितिर्वनांना इ सोमः पवित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्रकृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्ती ५ सरूपाम्। अजो ह्येकों जुषमांणोऽनुशेते जहाँत्येनां भुक्तभौगामजौऽन्यः॥२६॥ हर्सः शुंचिषद्वसुंरन्तरिक्षसद्धोतां वेदिषदतिंथिर्दुरोणसत्। नृषद्वंरसदंतसद्योमसदजा गोजा ऋंतजा अंद्रिजा ऋतं

नृषद्वंर्सहंत्सद्योम्सद्जा गोजा ऋत्जा अंद्रिजा ऋतं बृहत्। घृतं मिंमिक्षिरे घृतमंस्य योनिंधृते श्रितो घृतम्ंवस्य धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं वृषभ विक्षे ह्व्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधुंमा उदांरदुपा शुना सममृत्तत्वमांनद्। घृतस्य नाम गृह्यं यदस्ति जिह्ना देवानांममृतंस्य नाभिः। वयं नाम प्रब्नंवामा घृतेनास्मिन्

युज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृंणवच्छ्रस्यमानं चतुः शृङ्गोऽवमीद्गौर एतत्। चृत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बृद्धो वृष्भो रोरवीति महो देवो मर्त्या आविवेश॥२७॥

त्रिधां हितं पुणिभिर्गृह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो मृहर्षिः। हिरुण्युगुर्भं पंश्यत जायंमानः स नो देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्ता। यस्मात्परं नापर्मस्त किश्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायों ऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धर्नेन त्यार्गेनैके अमृतत्वमानशुः। परेण नाकं निहितं गुहांयां विभाजंते यद्यतंयो विशन्तिं। वेदान्तविज्ञान्सुनिश्चितार्थाः सन्यासयोगाद्यतयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु परान्तकाले परामृतात्परिमुच्यन्ति सर्वे। दहं विपापं प्रमेशमभूतं यत्पुण्डरीकं पुरमध्यस् इस्थम्। तत्रापि दहं गगनं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपांसितव्यम्।

यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्तं च प्रतिष्ठिंतः। तस्यं प्रकृतिंलीनुस्य यः परंः स मुहेश्वंरः॥२८॥

-----[१२]

॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायणं देवमक्षरं पर्मं प्रम्। विश्वतः पर्रमान्नित्यं विश्वं नारायणः हिरम्। विश्वमेवदं पुरुषस्तिद्वश्वमुपंजीवति। पितं विश्वंस्याऽऽत्मेश्वंर् शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मांनं प्रायणम्। नारायणपरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायण परः। नारायणः परः। यचं किश्चित्रंगथ्मवं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तंर्बृह्मं तथ्मवं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनेन्त्मव्यंयं क्विश् संमुद्रेऽन्तंं विश्वशंम्भुवम्। पद्मकोश प्रतीकाशुर् हृदयंं चाप्यधोमुंखम्। अधों निष्ठा वितस्त्यान्ते नाभ्यामुंपरि तिष्ठंति। ज्वालमालाकुंलं भाती विश्वस्यांऽऽयत्नं महत्। सन्तंतर शिलाभिंस्तु- लम्बत्याकोश्चसन्निभम्। तस्यान्ते सुष्टिर सूक्ष्मं तस्मिन्थ्सुर्वं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानिभ्निर्विश्वाचिर्विश्वतोमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहारमजरः कविः। तिर्यगूर्ध्वमंधः शायी रश्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापौदतल-मस्तंकः। तस्य मध्ये वहिंशिखा अणीयौर्ध्वा व्यवस्थितः। नीलतोयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठेखेव भास्वरा। नीवारशूकंवत्तन्वी पीता भाँस्वत्यणूपंमा। तस्याः शिखाया मध्ये परमातमा व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हरिः सेन्द्रः सोऽक्षंरः परमः स्वराट्॥३०॥ नारायुणः स्थितो व्यवस्थितश्चत्वारिं च॥—

॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तदचा मण्डल स ऋचां लोकोऽथ य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिदीप्यते तानि सामानि स साम्रां मण्डल स साम्नां लोको ऽथ य एष एतस्मिन्मण्डले ऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजूरेषि स यजुंषा मण्डलर स यजुंषां लोकः सैषा त्रुय्येवं विद्या तंपति य एषों ऽन्तरांदित्ये हिंरण्मयः पुरुषः॥३१॥

——[१५]

॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज् ओजो बलं यश्श्रक्षः श्रोत्रंमात्मा मनों मन्युर्मनुंमृत्यः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोंकपालः कः किं कं तथ्सत्यमन्नंममृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वंयम्भु ब्रह्मैतदमृंत एष पुरुष एष भूतानामिधंपति ब्रह्मंणः सायुंज्यः सलोकतांमाप्रोत्येतासांमेव देवतांनाः सायुंज्यः समानलोकतांमाप्रोति य एवं वेदेंत्युपनिषत्॥३२॥

॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वायं नमः। ऊर्ध्वलिङ्गायं नमः। हिरण्यायं नमः। हिरण्यलिङ्गायं नमः। स्वर्णायं नमः। दिव्यायं नमः। दिव्यायं नमः। दिव्यायं नमः। दिव्यालिङ्गायं नमः। भवायं नमः। भवलिङ्गायं नमः। श्विवलिङ्गायं नमः। श्विवलिङ्गायं नमः। श्विवलिङ्गायं नमः। श्विवलिङ्गायं नमः। ज्वलायं नमः। ज्वललिङ्गायं नमः। आत्मायं नमः। आत्मालिङ्गायं नमः। परमालिङ्गायं नमः। परमालिङ्गायं नमः। एतथ्सोमस्यं सूर्यस्यं सर्वलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमः प्रार्थिन

-[१६]

----[१७]

पवित्रम्॥ ३३॥

॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

सद्योजातं प्रंपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमंः। भवे भंवे नाति भवे भवस्व माम्। भवोद्भवाय नर्मः॥३४॥

॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमंः श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालीय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मंनाय नर्मः॥३५॥

॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

सर्वैभ्यः अघोरैंभ्योऽथ घोरैंभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वशर्वैभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥

-[१९]

-[१८]

-[२०]

——[२१]

॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुर्रुषाय विदाहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयात्॥३७॥

॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

॥ ऊध्ववऋ-प्रातपाद्क-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणी-ऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥

॥ नमस्कारमन्त्राः॥

नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतयेऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥

विरूपाक्षं विश्वरूपाय वे नमो नमः॥४०॥

सर्वो वै रुद्रस्तस्मैं रुद्राय नमों अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः

——[२५]

–[२६]

----[२७]

सन्महो नमो नमंः। विश्वं भूतं भुवंनं चित्रं बंहुधा जातं जायमानं च यत्। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४१॥

कद्रुद्राय प्रचेतसे मीढुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम शन्तंम १ हृदे। सर्वो होष रुद्रस्तस्मै रुद्राय नमो अस्तु॥४२॥

॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥

यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रत्येवास्याहुंतय-स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥

चणाच्याच्याच्या

कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥

॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

अदितिर्देवा गंन्ध्रवा मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषाः सर्वभूतानां माता मेदिनी महता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युर्वी पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंतमा का या सा

स्त्येत्यमृतेतिं वसिष्ठः॥४५॥

——[२८]

॥ सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इद॰ सर्वं विश्वां भूतान्यापंः प्राणा वा आपंः पुशव आपोऽन्नमापोऽमृंतमापंः सुम्राडापों विराडापंः स्वराडापुश्छन्दा इस्यापो ज्योती इष्यापो यजू इष्यापेः

स्त्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भुवः सुव्राप् ओम्॥४६॥

॥ सन्ध्यावन्दनमन्त्राः ॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मणस्पित्रव्रह्मपूता पुंनातु माम्। यदुच्छिष्ट्मभौज्युं यद्वां दुश्चरितं ममे। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहां॥४७॥

-[३०] अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शि्ष्ञा। अहस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरि्तं

——[३२]

मियं। इदमहं माममृतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥४८॥

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्धामुदरेण शि्ष्ञा। रात्रिस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृतयो्नौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रौं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदह्रौत्कुरुते पापं तदह्रौत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियौत्कुरुते पापं तद्रात्रियौत्प्रतिमुच्यंते। सर्वं वर्णे

-[३५]

मंहादेवि सन्ध्याविद्ये सरस्वंति॥५१॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमिस भ्राजोंऽसि देवानां धाम नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वमिस सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावांहयामि सावित्रीमावांहयामि सरस्वतीमावांह-यामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय रुद्रः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्ख्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्वि शत्यक्षरा त्रिपदां षद्भक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भुवः। ओ॰ सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओ॰ सत्यम्। ओं तथ्मंवित्वरिंण्यं भर्गों देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम्॥५२॥

-[३६]

-[ミゅ]

॥गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पंवत्मूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनु-ज्ञाता गुच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवनै द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रेह्मवर्चसं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रेह्मलोकम्॥५३॥

॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरिन्ति तद्रंसम्। सृत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भवः सुवरोम्॥५४॥

॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः ॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्ते सोम प्रजावथ्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्ते सोम प्राणाः स्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५५॥ ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सवितः प्रजावंध्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्नियः सुव। विश्वांनि देव सवितर्दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आसुंव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माध्वींर्नः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषसि मधुंमृत्पार्थिव रज्ञां। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुंमान्नो वनस्पतिर्मधुंमाः अस्तु सूर्यः। माध्वीर्गावों भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूणहृत्यां वा पृते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पङ्कः पुनन्ति। ओम्॥५६॥

ब्रह्मं मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पद्वीः कंवीनामृषिर्विप्रांणां मिह्षो मृगाणाँम्। श्येनो गृध्रांणा् इं स्विधितिर्वनांना इं सोमंः प्वित्रमत्येति रेभन्। हु सः शुंचिषद्वसुंरन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोण्सत्। नृषद्वंरसद्देतसद्धोमसद्जा गोजा ऋतंजा अद्विजा ऋतं बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा सिमथ्र्यंवन्ति स्रितो न

____[४०]

धेनाः। अन्तर्ह्दा मनंसा पूयमांनाः। घृतस्य धारां अभिचांकशीमि। हिर्ण्ययों वेत्सो मध्यं आसाम्। तिस्मन्ध्रमुप्णों मंधुकृत्कुंलायी भजंन्नास्ते मधुंदेवतांभ्यः। तस्यांसते हरंयः सप्ततीरें स्वधां दुहांना अमृतंस्य धारांम्। य इदं त्रिसुंपर्ण्मयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्ह्त्यां वा एते घ्रन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आस्हस्रात्पङ्किं पुनन्ति। ओम्॥५७॥

॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमाणा न आगाँद्विश्वाची भूद्रा सुमन्स्यमाना। त्वया जुष्टां जुषमाणा दुरुक्ताँन्बृहद्वंदेम विदथें सुवीराँ:॥ त्वया जुष्टं ऋषिर्भविति देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगृतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टंश्चित्रं विन्दते वसु सा नों जुषस्व द्रविणो न मेधे॥५८॥

मेधां म् इन्द्रों ददातु मेधां देवी सरस्वती। मेधां में अश्विनांवुभावार्धत्तां पुष्करस्रजा। अफ्सरासुं च या मेधा गंन्ध्वेषुं च यन्मनंः। देवीं मेधा सरंस्वती सा मां मेधा सुरभिर्जुषता्र् स्वाहाँ॥५९॥ ———[४२]

आ माँ मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वंमाना सा माँ मेधा सुप्रतीका जुषन्ताम्॥६०॥

मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युर्मृतंं न् आगंन्वैवस्वतो नो अभंयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिवाभिनः शीयता र्यिः स चं तान्नः शचीपतिः॥६२॥

-----[४५] परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नंः प्रजार रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

वातं प्राणं मनस्गुऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्नांयतां पात्व १ हंसो ज्योग्जीवा

जुरामंशीमहि॥६४॥ <u> —</u>[४७]

अमुत्र भूयादध् यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्ंश्रः। प्रत्यौहतामिश्वनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचींभिः॥६५॥

हरि हर्रन्तमनुयन्ति देवा विश्वस्येशानं वृषभं मंतीनाम्।

ब्रह्म सरूपमनुमेदमागादयनं मा विवंधीर्विक्रमस्व॥६६॥ **-**[88] शल्कैरग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेमहम्। उभयौर्लोकयोर्-

ऋध्वाऽतिं मृत्युं तंराम्यहम्॥६७॥ ——[५०]

—[५३]

–[५४]

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीर्मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष् आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम॥६८॥

मा नो महान्तंमुत मा नो अर्भकं मा न उक्षंन्तमुत मा नं उक्षितम्। मा नोऽवधीः पितरं मोत मातरं प्रिया मा नंस्तन्वो रुद्र रीरिषः॥६९॥

मा नंस्तोके तनंये मा न आयुंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेष रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवंधीर्ह्विष्मंन्तो नर्मसा विधेम ते॥७०॥

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयङ् स्याम् पत्यो रयीणाम्॥७१॥

–[५५]

–[५७]

-[५८]

॥ इन्द्रप्रार्थेनामन्त्रः ॥

स्वस्तिदा विशस्पतिर्वृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः॥७२॥

॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगुन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमेव

बन्धंनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतांत्॥७३॥

——[५६] ये ते सहस्रमयुतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान्

युज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

॥ पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृतस्यैनंसोऽवयजनंमसि स्वाहाँ। मनुष्यंकृतस्यैनंसो-स्वाहाँ। पितृकृंतस्यैनंसोऽवयजनंमसि ऽवयजनंमसि

स्वाहाँ। आत्मकृंतस्यैनंसोऽवयजनंमिस स्वाहाँ। अन्यकृतस्यैनंसोऽवयजनंमसि स्वाहाँ। अस्मत्कृतस्यैनंसो-. ऽवयजनमिसि स्वाहाँ। यद्दिवा च नक्तं चैनश्चकृम तस्यांवयजंनमसि स्वाहां। यथ्स्वपन्तंश्च जाग्रंतश्चेनंश्चकृम तस्यावयजनमिस् स्वाहां। यथ्सुषुप्तश्च जाग्रतश्चेनश्चकृम तस्यावयजंनमसि स्वाहां। यद्विद्वारसश्चाविद्वारसश्चेनश्चकृम तस्यांवयजंनमसि स्वाहां। एनस एनसोऽवयजनमंसि स्वाहा॥७६॥

॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्वयां गुरुमनंसो वा प्रयुंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नो अभि दुंच्छुनायते तस्मिन्तदेनों वसवो निधेतन स्वाहाँ॥७७॥

-[६०]

——[५९]

॥कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षीन्नमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कारियता नाहं

-[६२]

कार्यिता एष ते काम कार्माय स्वाहा॥७८॥

मन्युरकार्षीं त्रमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युंः कार्यिता नाहं कारियता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसा सिपष्टान् गन्धार मम चित्ते रमंन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपान सर्वेषा श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पृष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्ददांतु स्वाहा॥८०॥

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वंशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्दुरितं मंयि स्वाहा। चोर्स्यान्नं नेवश्राद्धं ब्रह्महा गुरुत्त्पगः। गोस्तेयः सुरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्तिः शमयन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्ददांतु स्वाहा॥८१॥

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो-बुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। त्वक्रर्ममा ५ सरु धिरमेदोम जास्नायवो-ऽस्थीनि में शुद्धन्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्घशिश्ञोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापियता में शुद्धन्तां ज्योतिंरहं विरजां विपाप्मा भूयासङ् स्वाहाँ॥८२॥

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अव्यक्तभावैरहिक्कार्रेज्योतिरहं विरजां

-[६६]

विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। परमात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। क्षुधे स्वाहाँ। क्षुत्पंपासाय स्वाहाँ। विविद्ये स्वाहाँ। ऋग्विधानाय स्वाहाँ। कृषोंत्काय स्वाहाँ। क्षुत्प्पासामेलं ज्येष्ठामुलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहा॥८३॥

"}

॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुविक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतिक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अन्न्यः स्वाहाँ। ओष्धिवनस्पितिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥ रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्यांभ्यः स्वाहाँ। अवसानेंभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपतिभ्यः स्वाहाँ। सूर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ। यदेजंति जगंति यच् चेष्टंति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्ये स्वाहाँ। अन्तरिक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः।
मनुष्यँभ्यो हन्ताँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ। यथा
कूपः शतधारः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा मे अस्तु धान्यः
सहस्रंधारमक्षितम्। धनंधान्यै स्वाहाँ। ये भूताः प्रचरन्ति
दिवानक्तं बिलंमिच्छन्तो वितुदंस्य प्रेष्याः। तेभ्यो बिलं
पृष्टिकामो हरामि मिय पृष्टिं पृष्टिंपतिर्दधातु स्वाहाँ॥८७॥
[६७]

ओं तद्घृह्म। ओं तद्घायुः। ओं तदात्मा। ओं तथ्मत्यम्। ओं तथ्सर्वम्। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरति भूतेषु गुहायां विश्वमूर्तिषु। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्वमिन्द्रस्त्वः रुद्रस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापतिः। त्वं तंदाप आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

——[६८]

॥ प्राणाहुतिमन्त्राः ॥

श्रद्धायां प्राणे निविंष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धायांं व्याने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धार्यामुदाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धायार्ं समाने निविंष्टोऽमृतंं जुहोमि। ब्रह्मंणि म आत्माऽमृंतत्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमसि॥ श्रद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहां॥ श्रद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। अपानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायाँ व्याने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। व्यानाय स्वाहां॥ श्रुद्धायांमुदाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। उदानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धाया ५ समाने निविष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रदाहाय। समानाय स्वाहाँ॥ ब्रह्मणि म

आत्माऽमृंतुत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥

-[६९]

॥ भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निर्विषयामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायांमपाने निर्विषयामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां व्याने निर्विषयामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायांमुदाने निर्विषयामृत हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धाया समाने निर्विषयामृत हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चं समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥

-[७१]

<u>----</u>[りo]

॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः ॥

वाङ्कं आसन्। नुसोः प्राणः। अक्ष्योश्चक्षुंः। कर्णयोः श्रोत्रम्।

-[७३]

-[り8]

-[७५]

बाहुवोर्बलम्। ऊरुवोरोजः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गांनि तुनूः। तुनुवां मे सह नर्मस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥९२॥ ————[७२]

॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषंयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बृद्धान्।

॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-यस्व॥९३॥

॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः ॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः ॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परिं। त्वं

वनेभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥९५॥

[3e

॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवनें मे सन्तिष्ठस्व स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम उपं ते नम उपं ते नमः॥९६॥

[e

॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सत्यं परं परं सत्यः सत्येन न स्वां शिकाद्यंवन्ते कदाचन सताः हि सत्यं तस्मां ध्यत्ये रंमन्ते । तप् इति तपो नानशंनात्परं यिद्धे परं तपस्तद्दर्धर्षं तद्दराधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते । दम इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते । शम इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमें रमन्ते । दानिमिति सर्वाणि भूतानि प्रशः सन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्माद्दाने रंमन्ते । धर्म इति धर्मेण सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं तस्माद्द्यमें रमन्ते । प्रजन्ते रंमन्ते । प्रजन्ते तस्माद्द्यमें रंमन्ते । प्रजन्ते तस्माद्द्यीष्ठाः प्रजनेने रमन्तेऽग्रय । इत्याह

-[७८]

तस्मांदग्नय आधांतव्या अग्निहोत्रमित्यांह् तस्मांदग्निहोत्रे रंमन्ते ॰ यज्ञ इति यज्ञो हि देवास्तस्माँ द्युज्ञे रंमन्ते ॰ मानसमिति विद्वा श्स्पस्तस्माँ द्विद्वा श्सं एव मानसे रंमन्ते ॰ न्यास इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि परा शसि न्यास एवात्यंरेचयद्य एवं वेदैत्युपनिषत्॥९७॥

॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हारुणिः सुपर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भेगवन्तः परमं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच ॰ सत्येन वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोंचते दिवि सत्यं वाचः प्रीतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माध्सत्यं पेरमं वदेन्ति 。 तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वविन्दं तपंसा सपत्नान् प्रणुंदामारांतीस्तपंसि सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः परमं वदंन्ति ॰ दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवंरगच्छन्दमो भूतानां दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद्दमेः परमं वदंन्ति 。 शमेन शान्ताः शिवमाचरंन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविन्दञ्छमो भूतानां दुराधर्षञ्छमं सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमंः परमं वदन्ति ॰ दानं यज्ञानां वरूथं दक्षिणा लोके दातार ५ सर्वभूतान्युंपजीवन्तिं दानेनारांतीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो मित्रा भेवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं पैरमं वदंन्ति ॰ धर्मो विश्वंस्य जगंतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसपिन्तिं धर्मेणं पापमंपनुदंति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं पर्मं वदन्ति 🌣 प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साध् प्रजायाँस्तन्तुं तंन्वानः पिंतृणामंनृणो भवंति तदेव तस्यानृणं तस्मौत् प्रजनेनं परमं वर्दन्त्यग्नयो वै त्रयीं विद्या ० देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रंथन्तरमंन्वाहार्यपचेनं यर्जुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तस्मादुग्नीन्पर्मं वदन्त्यग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्ट सुहुतं यंज्ञऋतूनां प्रायंण सुवृर्गस्य लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं पर्मं वदन्ति । यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवंं गता यज्ञेनासुरानपानुदन्त यज्ञेनं द्विष्नतो मित्रा भंवन्ति युज्ञे सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्यज्ञं पंरमं वदंन्ति ॰ मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनेसा साधु पंश्यति मानसा ऋषयः प्रजा अंसृजन्त मानसे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानसं पंरमं वदंन्ति ॰ न्यास इत्याहंर्मनीषिणों ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कतमः स्वंयम्भुः प्रजापितः संवथ्सर इति संवथ्सरोऽसावीदित्यो य एष अंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा ॰ याभिरादित्यस्तपंति रश्मिभस्ताभिः पर्जन्यो वर्षति पर्जन्येनौषधिवनस्पतयः प्रजांयन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा मंनीषया मनो मनंसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इ स्मृत्या स्मार् स्मारंण विज्ञानं विज्ञानंनात्मानं वेदयति तस्मादन्नं ददन्थ्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भवन्ति 。 भूतानां प्राणैर्मनो मनंसश्च विज्ञानं विज्ञानांदानन्दो ब्रंह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पंश्चात्मा येन सर्वमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरिदशाश्च स वै सर्वमिदं जगथ्म च भूत र स भव्यं जिज्ञासक्रुप्त ऋतजा रियष्ठा वर्षेष्ठा अद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वां तमेवं मनंसा हृदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मौन्यासमेषां तपंसामतिरिक्तमाहुंर्वसुरण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमसिं सन्धाता 。 ब्रह्मंन् त्वमिसं विश्वधृत्तं जोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृहीतोऽसि ब्रह्मणें त्वा ॰ महस ओमित्यात्मानं यु औतेतद्वै महोपनिषंदं देवानां गुह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्मांद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥ ९८॥

॥ ज्ञानयज्ञः॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्याऽऽत्मा यजंमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमानि बुर्हिर्वेदः शिखा हृदंयं यूपः काम आर्ज्यं मन्युः पशुस्तपोऽग्निर्दर्मः शमयिता दक्षिणा वाग्घोतां प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो ब्रह्मा ० श्रोत्रंमग्नीद्यावद्धियंते सा दीक्षा यदश्ञांति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तदुंप्सदो यथ्सश्चरंत्युप्विशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवृग्यों यन्मुखं तदाहवनीयो या व्याह्रंतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जुहोति यथ्सायं प्रातरंत्ति तथ्समिधं यत्प्रातर्मध्यं दिन सायं च तानि सर्वनानि ये अंहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ येंऽर्धमासाश्च मासाँश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवथ्सराश्चं परिवथ्सराश्च तेऽहंर्गणाः संववेदसं वा एतथ्सत्रं यन्मरंणं तदंवभृथं एतद्वे जंरामर्यमग्निहोत्र । सत्रं य एवं विद्वानुंदगयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ ॰ यो दक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गृत्वा चन्द्रमंसः सायुंज्य । सलोकतांमाप्रोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौर्महिमानौ ब्राह्मणो विद्वानभिजंयति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमाप्रोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥९९॥

ॐ सह नांववतु। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

स्ंज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुप्कल्पंमानमुपंक्रुप्तं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयथसम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्थसम्भान्। ज्योतिष्माङ्क्तेजस्वानातप्ङ्क्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचमानः शोभनः शोभमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा दर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायं स्नृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्थ्संवेशंनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवन्य्रभवंन्थ्सम्भवन्थ्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुतं विष्टुत् १ सङ्स्तुतं कल्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेजः समिद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितपृत्तपंस्वत्। स्विता प्रसविता दीप्तो दीपयन्दीप्यमानः। ज्वलंश्वित्ता तपंन्वितपंन्थ्सन्तपन्। रोचनो रोचमानः शुम्भूः शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रसुता सूयमानाऽभिषूयमाणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामदुघाँ। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽनन्दो मोदंः प्रमोदः। आसादयंन्निषा-दयैन्थ्स १ सार्दनः स १ संत्रः सन्नः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भ्वंः। पवित्रं पवियष्यन्पूतो मेध्यंः। यशो यशस्वानायुरमृतः। जीवो जीविष्यन्थ्स्वर्गो लोकः। सहंस्वान्थ्यहीयानोजंस्वान्थ्यहंमानः। जयंत्रभिजयंन्थ्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोर्दः प्रमोदः॥३॥ अरुणों ऽरुणरंजाः पुण्डरींको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वंमानोऽन्नंवान्नस्वानिरांवान्। सर्वोषधः संम्भरो महंस्वान्। एजत्का जोवत्काः। क्षुष्ठकाः शिपिविष्टकाः। स्रिस्रराः सुशेर्वः। अजिरासो गमिष्णवंः। इदानीं तदानींमेतर्हिं क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निमेषः फणो द्रवंत्रतिद्रवन्। त्वरङ्स्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्जवः। अग्निष्टोम उक्थों ऽतिरात्रो द्विंरात्रिस्निंरात्रश्चंतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्य ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवथ्सरो महान्कः॥४॥

भूरिग्नं चं पृथिवीं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। भवों वायुं चान्तिरक्षं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। स्वंरादित्यं च दिवं च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। पूर्जापितस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। भूर्भुवः स्वंश्चन्द्रमंसं च दिश्चंश्च मां चं। त्री इश्चं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥ देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

त्वमेव त्वां वैत्थ योऽिस सोऽिसं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यत्तं अग्ने न्यूनं यद् तेऽितंरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गंरस-श्चिन्वन्तु। विश्वं ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चंतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽितं च येनाऽऽयुरावृंश्चि। सर्वेषां ज्योितंषां ज्योित्यद्दावुदेतिं। तपंसो जातमिनंभृष्टमोर्जः। तत्ते

ज्योतिंरिष्टके। तेनं मे तपा तेनं मे ज्वला तेनं मे दीदिहि। यावंद्देवाः। यावदसांति सूर्यः। यावंदुतापि ब्रह्मं॥६॥

संवथ्सरोऽसि परिवथ्सरोऽसि। इदावथ्सरोऽसीद्वथ्सरो-ऽसि। इद्वथ्सरोऽसि वथ्सरोऽसि। तस्यं ते वस्नन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेम्न्तो मध्यम्। पूर्वपक्षाश्चित्यः। अपरपक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋषुभोंऽसि स्वर्गो लोकः। यस्यांं दिशि महीयंसे। ततों नो मह आवंह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश आवांहि। सर्वा दिशोऽनुविवांहि। सर्वा दिशोऽनुसंवांहि। चित्त्या चितिमापृंण। अचित्त्या चितिमापृंण। चिदंसि समुद्रयोंनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंर्ण्युः। महान्थ्स्थस्थे ध्रुव आनिषंत्तः। नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समंच। रात्र्या प्रसारय। अहा समेच। काम् प्रसारय। काम् समेच॥९॥

भूर्भवः स्वंः। ओजो बलम्ँ। ब्रह्मं क्ष्रत्रम्। यशो महत्। सत्यं तपो नामं। रूपममृतम्ँ। चक्षुः श्रोत्रम्ँ। मन् आयुंः। विश्वं यशो महः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकम्। ऊर्जं पुष्टिं दर्दद्भ्यावंवृथ्स्व॥१०॥

राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिंः। विश्वे देवा भुवंनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥

असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुंवे स्वाहा विवंस्वते स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिंपतये स्वाहाँ। दिवां पतंये स्वाहाऽ५ंहस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ ज्योतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सम्राज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। शूषांय स्वाहा सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहाँ। स्रथ्सर्पाय स्वाहां कल्याणांय स्वाहाँ। अर्जुनाय स्वाहाँ॥१२॥

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मही न धाराऽत्यन्धीं अर्षित। अहिंर्ह जीणीमितंसपिति त्वचम्। अत्यो न क्रीडंन्नसरृद्धृषा हिरः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिर्मृत्यवे त्वा। अपमृत्युमपृक्षुधम्। अपेतः शप्यं जिह। अधा नो अग्र आवंह। रायस्पोष सहस्रिणम्॥१३॥

ये ते सहस्रम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यांय हन्तंवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवंयजामहे। भृक्षाःऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मधुंमतः। उपहूत्तस्योपहूतो भक्षयामि। मृन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावहिं॥१४॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आँकन्दियतरपान। असावेहिं। अहुस्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मनंः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥ सुह्रस्तः सुंवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदं। असावेहिं। अग्निर्में वाचि श्रितः। वाग्वृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। वायुर्में प्राणे श्रितः॥१६॥ प्राणो हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्हृदंये। हृदंयं मियं। अहममृतें।

अमृतं ब्रह्मणि। चन्द्रमां मे मनंसि श्रितः॥१७॥ मनो हृदये। हृदयं मिये। अहममृते अमृतं ब्रह्मणि। दिशो

मे श्रोत्रे श्रिताः। श्रोत्र हदये। हदयं मियं। अहम्मृते अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥

रेतो हृदये। हृदयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर्॰ हृदये। हृदयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयों मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥

अमृत ब्रह्माणा आषाध्वनस्पतया म् लामस् ।श्रताः॥१९॥ लोमानि हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतैं। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बल् हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतैं। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्धि श्रितः॥२०॥

मूर्धा हृदेये। हृदेयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। ईशानो मे मृन्यौ श्रितः। मृन्युर्हृदेये। हृदेयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मं आत्मनिं श्रितः॥२१॥

आत्मा हृदंये। हृदंयं मियं। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मंणि। पुनेर्म आत्मा पुनरायुरागाँत्। पुनेः प्राणः पुनराकूंतमागाँत्। वैश्वानरो रश्मिभैर्वावृधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्मौद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृंश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नुंतः। वि चं हैवास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मीमा १ सा ५ ग्रिहोत्र एव संम्पन्ना। अथो आहः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। होष्यंत्रप उपंस्पृशेत्। विद्युंदसि विद्यं मे पाप्मान्मितिं। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरस् वृश्चं मे पाप्मानमितिं। यक्ष्यमांणो वेष्ट्वा वां। वि चं हैवास्यैते देवतें पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्यु इहो हाऽऽर्रुणिः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्य प्रजिघाय। परेहि। प्रक्षं दय्यांम्पातिं पृच्छ। वेत्थे सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। स होवाच वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित इति। प्रोरंज्यसीति। कस्तद्यत्परोरंजा इति। एष वाव स प्रोरंजा इति होवाच। य एष तपंति। एषोंऽर्वाग्रंजा इति। स कस्मिन्त्वेष इति। सृत्य इति। किं तथ्मत्यमिति। तप इति॥२६॥

कस्मिन्नु तप् इतिं। बलु इतिं। किं तद्वल्मितिं। प्राण इतिं। मा स्मं प्राणमितिपृच्छ् इतिं माऽऽचार्यौऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रक्षो दय्यौम्पातिः। यद्वै ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तंत आचार्याच्छ्रेयौन्भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवादिष्टेतिं॥२७॥

तस्माँथ्सावित्रे न संवंदेत। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे संवदंते। सहाँस्मिञ्छ्रियं दधाति। अनुं हु वा अस्मा असौ तप्ञ्छियं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वंस्मै बलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेति। एष एव तत्॥२८॥ अथ यदाहं। प्रस्तुंतं विष्टुंत स्नुता सुंन्वतीतिं। एष एव

तत्। एष ह्येव तान्यहांनि। एष रात्रेयः। अथ यदाहं। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसविताऽभिंशास्ताऽनुंमन्तेतिं। एष पुव तत्। पुष ह्यंव तेऽह्नों मुहूर्ताः। पुष रात्रेः॥२९॥

अथ यदाहं। पवित्रं पवियष्यन्थ्सहंस्वान्थ्सहीयानरुणीं-ऽरुणरंजा इतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तैंऽर्धमासाः। एष मासाः। अथ यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्यौऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इति। एष एव तत्। एष ह्येव ते यंज्ञऋतवंः। एष ऋतवंः॥३०॥

पुष संवथ्सरः। अथु यदाहं। इदानीं तदानीमितिं। एष पुव तत्। पुष ह्येव ते मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। जुनुको हु वैदेहः। अहोरात्रेः सुमार्जगाम। त॰ होंचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहंत्पाप्मानंमेति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं ह्लोके-उन्नं क्षीयत् इति। विजहंद्ध् वै पाप्मानंमेति। सर्वमायुरित। अभि स्वर्गं लोकं जंयति। नास्यामुष्मिं लोके ऽन्नं क्षीयते। य

पुवं वेदे। अहींना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥ स हं हुर्सो हिंरुण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिर्मियाय। आदित्यस्य सायंज्यम्। हुर्सो हु वै हिंरुण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेंति। आदित्यस्य सायंज्यम्। य एवं वेदे। देवभागो हं श्रौतर्षः। सावित्रं विदां चंकार। तर हु वागदंश्यमानाऽभ्यंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौत्मो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वाग्सीतिं। अयमहर सांवित्रः। देवानांमृत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिभ्रदितिं। एतावंति ह गौत्मः। युज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीर्गोतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के चे सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो हू वै सावित्रस्याष्टाक्षेरं पदः श्रियाऽभिषिक्तं वेदे। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

एतद्वे सांवित्रस्याष्टाक्षेरं पदङ् श्रियाऽभिषिक्तम्। य एवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिंच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरें पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। यस्तं न वेद् किमृचा केरिष्यति। य इत्तद्विदुस्त इमे समासत् इतिं। न ह वा एतस्यूर्चा न यजुंषा न साम्नाऽर्थौऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंरि यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एति। विज्ञहृद्धिश्वां भूतानिं सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह वै पिन्वंमानः। स्वर्गे लोक एति। विज्ञहृन्विश्वां भूतानिं सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह वै वार्ष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्यौऽग्निः पारियृष्णुरमृताथ्सम्भूत इति। एष वाव स सावित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इतिं हैवेनं तद्वाच॥३७॥

ड्यं वाव स्रघाँ। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रंयः। ता मधुकृतंः। यान्यहांनि। ते मधुवृषाः। स यो हु वा एता मधुकृतंश्च मधुवृषा इश्च वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्येष्टापूर्तं धंयन्ति। अथ् यो न वेदं॥३८॥ न हाँस्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति। धयंन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणां नामधेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। पृतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यां-होरात्राणां नामधेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टुंतः सुता सुन्वतीतिं। पृतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नामधेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नामधेयांनि वदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुं-मन्तेतिं। एतंऽनुवाका मुंहूर्तानां नामधेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि वदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। पवित्रं पवियष्यन्थ्सहं-स्वान्थ्सहीयानरुणोऽरुणरंजा इतिं। एतंऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै यंज्ञऋतूनां चंतूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि वेदं। न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इतिं। एतेऽनुवाका यज्ञऋतूनां चेतूनां चे संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि॥४१॥ न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै मुंहूर्तानां मुहूर्तान् वेदं। न मुंहूर्तानां मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। इदानीं तदानीमिति। एते वै मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। न मुहूर्तानां मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदे। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमत्तिं। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुप्रविश्यान्नमिति। स पुतेषांमेव संलोकता ५ सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जंयति। य एवं वेदं॥४२॥

किश्चेंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं। कश्चिथ्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्रंग्धो हैव धूमतान्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अथ् यो हैवेतमृग्नि॰ सांवित्रं वेदं। स पुवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं॥४३॥ स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तथ्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रैर्वा इद॰ स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरिति। तानिहानेवं विदुषंः। अमुष्मिं लोके शेव्धिं धंयन्ति। धीत॰ हैव स शेव्धिमनु परैति। अथ यो हैवैत्मग्नि॰ सांवित्रं वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहोरात्राणिं। अमुष्मिं छोके शेंवधिं न धंयन्ति। अधीत हैव स शेंवधिमनु परैति। भ्रद्धांजो ह त्रिभिरायुंभिं ब्रह्मचर्यमुवास। त ह जीर्णि क्र् स्थविंर क्ष्यांनम्। इन्द्रं उपव्रज्योवाच। भरंद्वाज। यत्ते चतुर्थमायुंर्द्धाम्। किमेनेन कुर्या इति। ब्रह्मचर्यमेवैनेन चरेयमितिं होवाच॥४५॥

तर हु त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्श्यां चंकार। तेषार् हैकैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामन्त्र्यं। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदाः। एतद्वा एतैस्त्रिभिरायुंर्भिरन्वं-वोचथाः। अर्थ त इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अ्यं वै सर्वविद्येति॥४६॥ तस्मैं हैतम्ग्निश्च सांवित्रमुंवाच। त॰ स विदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदे। एषो एव त्रयी विद्या॥४७॥

यावन्तर हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जंयित। तावन्तं लोकं जंयित। य एवं वेदं। अग्नेर्वा एतानिं नामधेयांनि। अग्नेर्व सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोवां एतानिं नामधेयांनि। वायोर्व सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानिं नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। बृह्स्पतेर्व एतानिं नामधेयांनि। बृह्स्पतेरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। प्रजापंतेर्व एतानिं नामधेयांनि। प्रजापंतेरेव सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। ब्रह्मणो वा एतानिं नामधेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्य सलोकतांमाप्रोति। य एवं वेदं। स वा एषोंऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरेव। तस्याग्निर्मुखम्ं। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तथ्मर्वरं सीव्यति। तस्मांथ्सावित्रः॥४९॥

[११]**-**宋恕:

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोंऽसि स्वर्गोंऽसि। अनुन्तोंऽस्यपारोंऽसि। अक्षितो-ऽस्यक्षय्योंऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१॥

तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयितृ। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२॥

तेजों ऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयित्। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥३॥

स्मुद्रोऽस् तेजंसि श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मृतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रंतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्रों विश्वंस्य जनियृत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यपम् श्रिता। अग्नेः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥६॥

अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्ता विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥७॥

अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनयित्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥८॥

वायुरंस्यन्तरिक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥११॥

चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानि। संव्थ्सरस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतॄंणि विश्वंस्य जनियृतॄणि। तानिं व उपंदधे कामृदुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१३॥

संवथ्सरोऽसि नक्षंत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१४॥

ऋतवंः स्थ संवथ्सरे श्रिताः। मासांनां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनियतारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१५॥

मासौः स्थतंषुं श्रिताः। अर्धमासानौं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१६॥

अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयोः प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे कामदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तया देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१७॥

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य

प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्रौं विश्वंस्य जनियत्रौं। ते वामुपंदधे काम्दुधे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्यां। अन्नादाः स्थांन्नद्घो युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्त्यो विश्वंस्य जनियुत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥१९॥

राडंसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२०॥

ओजोऽसि सहोऽसि। बलंमसि भ्राजोऽसि। देवानां धामामृतम्। अमेर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरुस्वद्भवा सींद॥२१॥

त्वमंग्ने रुद्रो असुरो महो दिवः। त्वः शर्धो मारुतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्ग्यः। त्वं पूषा विधतः पांसि नु त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्थाः पश्चमेषुं श्रयध्वम्। पश्चमाः षष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। सप्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा नंवमेषुं श्रयध्वम्। नवमा दंशमेषुं श्रयध्वम्। दशमा एंकादशेषुं श्रयध्वम्। एकादशा द्वांदशेषुं श्रयध्वम्। द्वादशास्त्रंयोदशेषुं श्रयध्वम्। त्रयोदशाश्चंतुर्दशेषुं श्रयध्वम्। चतुर्दशाः पंश्चदशेषुं श्रयध्वम्। चतुर्दशाः पंश्चदशेषुं श्रयध्वम्। पृश्चदशाः षोंडशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥

षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अंष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शा एंकान्नविश्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नविश्शा विश्शेषुं श्रयध्वम्। विश्शा एंकविश्शेषुं श्रयध्वम्। एकविश्शा द्वांविश्शेषुं श्रयध्वम्। द्वाविश्शास्त्रंयोविश्शेषु द्वितीयः प्रश्नः (कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्) 828

श्रयध्वम्। त्रयोवि रशाश्चेतुर्वि रशेषु श्रयध्वम्। चतुर्वि रशाः पंञ्जवि १ शेषुं श्रयध्वम्। पृञ्जवि १ शाः षं द्वि १ शेषुं श्रयध्वम्॥ २४॥

षड्वि १ शाः संप्तवि १ शेषुं श्रयध्वम्। सप्तवि १ शा अष्टावि रशेष् श्रयध्वम्। अष्टाविरशा एकान्नि रशेषु श्रयध्वम्। एकान्नत्रि १शास्त्रि १ शेषुं श्रयध्वम्। त्रि १ शा एंकत्रि १ शेषुं श्रयध्वम्। एकत्रि १ शा द्वांत्रि १ शेषुं श्रयध्वम्। द्वात्रि शास्त्रं यस्त्रि शर्षे श्रयध्वम्। देवास्त्रिरेकादशास्त्रिस्त्रंय-स्त्रि १ शाः। उत्तरे भवत। उत्तरवर्त्मान उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोमिं। तन्मे समृध्यताम्। वयः स्यांम पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥२५॥

-----[२] अग्नांविष्णू सजोषंसा। इमा वंर्धन्तु वां गिरंः। द्युम्नैर्वाजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सुम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृहस्पर्तिः। विश्वे देवा भ्वंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वय इस्यांम पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वंः स्वाहां॥२६॥

अन्नप्तेऽन्नंस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणंः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्ने पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वर्रण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौंजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोचेऽह स्वयम्। रुचा रुचे रोचंमानः। अतीत्यादः स्वराभरेह। तस्मिन् योनौं प्रजनौ प्रजायेय। वय स्याम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भवः स्वः स्वाहां॥२८॥

स्प्त ते अग्ने स्मिधं स्प्त जिह्नाः। स्प्तर्षयः स्प्त धामं प्रियाणि। स्प्त होत्रां अनुविद्वान्। स्प्त योनीरापृणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निश् स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा

दिक्। इन्द्रों देवता॥२९॥ इन्द्रभ् स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोमभ स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यैं दिशोंऽभिदासंति।

उदींची दिक्। मित्रावर्रणौ देवतां। मित्रावर्रणौ स दिशां

देवौ देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशों ऽभिदासंति॥३०॥
ऊर्ध्वा दिक्। बृह्स्पतिर्देवतां। बृह्स्पतिर् स दिशां देवं
देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशों ऽभिदासंति। इयं दिक्।
अदितिर्देवतां। अदितिर स दिशां देवीं देवतांनामृच्छत्।
यो मैतस्यै दिशों ऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे
कामान्थ्समंध्यतु॥३१॥
अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधर आंक्रन्दियतरपान।

असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोऽशीय। वय स्यांम पतंयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥३२॥——[५]

यत्तेऽचितं यदं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरसिश्चन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चितश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयांङ्श्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृण। अथो सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृह्स्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥ तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। ता अस्य सूदंदोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। अग्ने देवार इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनसा यविष्ठम्॥३४॥

यो दीदाय सिमंद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसाधंनम्। अग्निश् होतांरं परिभूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य हुविषंः समानमित्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधीमहि। मृनुष्वथ्समिधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंजा अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष स्तोतृभ्य आभंर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृंथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविंवेश। वैश्वानुरः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

अयं वाव यः पर्वते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पर्वते।

तदंस्य शिरंः। अथ् यद्दंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङ्ं। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥

अथ यथ्संवाति। तदंस्य समर्श्वनं च प्रसारंणं च। अथों सम्पदेवास्य सा। स॰ ह् वा अस्मै स कामः पद्यते। यत्कामो यजेते। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो ह् वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतेनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतेनवान्भवति। गच्छेति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरं वेदं। सशरीर एव स्वर्गं लोकमेति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सशरीर एव स्वर्गं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तंप्तो भाय्यात्॥३९॥

एवमेव स तेर्जमा यशंसा। अस्मिश्श्चं लोकेंऽमुष्मिंश्श्च भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैते वरीयाश्सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्तश् हु वा एष क्षय्यं लोकं जंयति। योऽवंरेणाऽऽदित्यम्। अर्थ हैषोऽन्न्तर्मपारमेक्षय्यं लोकं जंयति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अनुन्त १ हु वा अपारमं क्षय्यं लोकं जंयित। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपें क्षते। एवमहोरात्रे प्रत्यपें क्षते। नास्यांहोरात्रे लोकमां प्रतः। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥४१॥

उशन् हु वै वांजश्रव्सः संविवद्सं दंदौ। तस्यं हु निर्विकेता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमांनासु श्रृद्धाऽऽविवेश। स होवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयं तृतीयम्। त॰ हु परीत उवाच। मृत्यवें त्वा ददामीति। त॰ हु स्मोत्थितं वागुभिवंदति॥४२॥

गौतंम कुमारमितिं। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वे त्वांऽदामितिं। तं वे प्रवसंन्तं गुन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदिं त्वा पृच्छेत्। कुमांर् कित् रात्रीरवाथ्सीरितिं। तिस्र इति प्रतिंब्रूतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इतिं॥४३॥

प्रजां त इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृशू इस्त इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त इतिं। तं वै प्रवसन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमांर कित रात्रीरवाथ्सीरिति। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥

किं प्रंथमा रात्रिमाश्रा इति। प्रजां त इति। किं द्वितीयामिति। प्रशू इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। नमंस्ते अस्तु भगव इति होवाच। वरं वृणीष्वेति। पितरमेव जीवंत्रयानीति। द्वितीयं वृणीष्वेति॥४५॥

ड्ष्णपूर्तयोर्मेऽक्षितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्ंवाच। ततो वै तस्येष्टापूर्ते ना क्षींयेते। नास्येष्टापूर्ते क्षींयेते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतमृग्निं नांचिकेतम्ंवाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदे। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिरण्यमुदाँस्यत्। तद्ग्रौ प्रास्यंत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तद्वितीयं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्येंऽग्नौ वैश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युजः हि। स वै तमेव नाविन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ताः स्वायैव हस्तांयु दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दक्षिणां प्रतिगृह्णामीति। सोऽदक्षत दक्षिणां प्रतिगृह्णं। दक्षेते हु वै दक्षिणां प्रतिगृह्णं। य एवं वेदे। एतद्धे स्म वै तद्धिद्वा १ सो वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दक्षिणां प्रतिगृह्णान्ति। उभयेन व्यं दिक्षिष्यामह एव दक्षिणां प्रतिगृह्णाते। तेऽदक्षन्त दक्षिणां प्रतिगृह्णां। दक्षेते हु वै दक्षिणां प्रतिगृह्णां। य एवं वेदे। प्र हान्यं क्षीनाति॥४९॥

तः हैतमेके पशुबन्ध एवोत्तंरवेद्यां चिंन्वते। उत्तरवेदिसंम्मित एषोंऽग्निरिति वदंन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतम्भिं कामेन् व्यर्धयेत्। स एनं कामेन् व्यृंद्धः। कामेन् व्यर्धयेत्। सौम्ये वावैनमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्। एतम्भिं कामेन् समर्धयति। स एनं कामेन् समृद्धः॥५०॥

कामेन समर्धयति। अथं हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव सन्नियंमचिन्वत। ततो वै तेऽविन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जंयति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अथं हैनं वायुर्ऋद्धिकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्भ्रोत्। यामिदं वायुर्ऋद्धः। एतामृद्धिंमृभ्रोति। यामिदं वायुर्ऋद्धः। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं गोब्लो वार्ष्णः पृशुकांमः। पाङ्कंमेव चिंक्ये। पश्चं पुरस्तांत्॥५२॥

पश्चं दक्षिण्तः। पश्चं पृश्चात्। पश्चौत्तर्तः। एकां मध्यै।
ततो वै स सहस्रं पृश्चन्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्चनौप्नोति।
यौंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं
प्रजापतिज्येष्ठ्यंकामो यशंस्कामः प्रजननकामः। त्रिवृतंमेव

चिंक्ये॥५३॥

स्प्त पुरस्तांत्। तिस्रो दंक्षिणतः। स्प्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वे स प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोत्। पृतां प्रजांतिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्धे ज्यैष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठ्यंमाप्नोति। एतां प्रजातिं प्रजायते। यामिदं प्रजाः प्रजायन्ते। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठ्यंकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठ्यंमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठमं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचीरेवोपंदधे। ततो वै सोऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंशस्वी ब्रंह्मवर्चसी स्यामितिं। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुथ्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणींतु। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्च्सनेतिं। तेज्रस्येव यंश्स्वी ब्रंह्मवर्च्सी भंवति। अथ यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरितिं। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेति स्रुवेणोपहत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्॥५७॥

भूयिष्ठमेवास्मै श्रहंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं। चितिक्कृप्तिभिरिभृश्यं। अग्निं प्रणीयोप-समाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंन्नहोमः। सप्त ते अग्ने स्मिधंः सप्त जिह्वा इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

यां प्रथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ लोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां द्वितीयांमुप्दधांति। अन्तरिक्षलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तरिक्षलोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्रोति। यां तृतीयांमुप्दधांति। अमुं तयां लोकम्भिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिँ होके देवताँः। तासा स् सायुंज्य स् सलोकतां माप्नोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादंश। य एवामी उरवंश्च वरीं या स्मश्च लोकाः। तानेव ताभिंरभिजंयति॥ कामचारों ह् वा अंस्योरुषुं च वरीं यः सु च लोकेषुं भवति। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिंनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धारां। यथा व पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयंति। एवमेव स तस्य सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयति। योऽग्निं नाचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्रद्त्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपुरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौंऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयो ह वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

·[\$0]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीय काठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कार्ममग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। कामो भूतस्य कामस्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यं भरन्ति यो देह्यः। पूर्वं देवा अपंरेण प्राणापानो। हृव्यवाह् स्विष्टम्॥१॥

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरो ऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरो ऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्गन्वेविन्दत्। तमिष्टिभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिभिरन्वेविन्दत्। तदिष्टीनामिष्टि-त्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षेप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँ ऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँ ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशं मृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशाये चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं स्त्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमं विन्दत्। सत्या हु वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृ विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहाऽऽशाये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगांयं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥३॥

तं कामों ऽब्रवीत्। प्रजापते कामेन वै श्राम्यिस। अहमु वै कामों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सृत्यः कामों भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामाय पुरोडाशं मृष्टाकं पालं निर्ग्वपत्। कामाय चुरुम्। अनुं मत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यः कामों ऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमं विन्दत्। सृत्यो हु वा अंस्य कामों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृ विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामाय स्वाहा कामांय स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥४॥

तं ब्रह्मां ऽब्रवीत्। प्रजापते ब्रह्मणा वे श्राम्यसि। अहमु वै ब्रह्मांऽस्मि। मां नु यर्जस्व। अर्थ ते ब्रह्मण्वान् यज्ञो भंविष्यति। अन् स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमग्रये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मंणे चरुम्। अनुंमत्यै चरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् यज्ञों ऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् ह वा अस्य यज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहा ब्रह्मणे स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गाये लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥५॥

तं युज्ञों ऽब्रवीत्। प्रजांपते युज्ञेन वै श्रांम्यसि। अहमु वै युज्ञों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यो युज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निरंवपत्। युज्ञायं चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यो युज्ञोऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यो हु वा अस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दिति। य एतेनं हिविषा यजिते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥६॥

तमापों ऽब्रुवन्। प्रजापते ऽफ्सु वै सर्वे कामाः श्रिताः। वयमु वा आपंः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथ त्विय सर्वे कार्माः श्रयिष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स पुतम् अये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। अद्मश्चरुम्। अनुमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्मिन्थ्सर्वे कार्मा अश्रयन्त। अर्नु स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वे ह वा अंस्मिन्कार्माः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कार्माय स्वाहाऽद्धः स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥७॥

तम्ग्निर्बिल्मानंब्रवीत्। प्रजांपतेऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बलि॰ हंरन्ति। अहमु वा अग्निर्बिलमानंस्मि। मां

नु यंजस्व। अर्थ ते सर्वाणि भूतानि बलि॰ हंरिष्यन्ति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्म्रये कामाय पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नयं बलिमते चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्मै सर्वाणि भूतानि बुलिमंहरन्। अर्नु स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि ह वा अस्मै भूतानि बलि॰ हंरन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कार्माय स्वाहाऽग्रये बलिमते स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥८॥ तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वर्गं वै लोकमनुंविविथ्ससि। अहमु वा अनुंवित्तिरस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमग्नये कार्माय पुरोडाशंमष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्यै

एतम् ग्रये कामाय पुरोडाशंम् ष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्ये चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्यानुंवित्तिर्भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽनुंवित्त्यै स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥९॥

ता वा पृताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारेः। दिवःश्येन्योऽनुंवित्तयो नामं। आशाँ प्रथमा रक्षित। कामौं द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बलिमान्थ्वष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं व स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोकं भवति। य पृताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उ चैना पृवं वेदं। तास्वन्विष्ट। पृष्ठौहीव्रां दद्यात्कुर्सं चं। स्त्रियै चाऽऽभार र समृंद्धै॥१०॥

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तप्सर्षयः स्वरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्प्रणुंदामारांतीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव हिवषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥ सा नो जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। कामंवथ्साऽमृतं दुहांना। श्रृद्धा देवी प्रथम्जा ऋतस्यं। विश्वंस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ता श्रृद्धा १ ह्विषां यजामहे। सा नो लोकम्मृतं दधातु। ईशांना देवी भुवंनस्याधिपत्नी। आगाँथ्मृत्य १ ह्विरिदं जुषाणम्। यस्माँद्देवा जिज्ञेर भुवंनं च विश्वे। तस्मै विधेम ह्विषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संधुमादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तिरिक्षम्। यस्माँद्वेवा जंजिरे भुवंनं च सर्वे। तथ्सत्यमर्चदुपं यज्ञं न आगात्। ब्रह्माऽऽहुंतीरुपमोदंमानम्। मनसो वशे सर्विमृदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मिन्वंयाय। भीष्मो हि देवः सहंसः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागात्। आकूंतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पजूतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजानिम्ह वर्धयंन्तः। उपहुर्वेऽस्य सुमृतौ स्याम। चरणं पवित्रं वितेतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं पवित्रंण शुद्धेनं पूताः। अति पाप्मान्मरांतिं तरेम। लोकस्य द्वारंमर्चिमत्पवित्रम्ं। ज्योतिंष्मद्भाजनानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा

दोहंमानम्। चरंणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूर्धा भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरन्विदंनुमते त्वम्। हृव्यवाहुङ् स्विष्टम्॥१४॥

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोंऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोंऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमिष्टिभि-रन्वैच्छत्। तिमिष्टिभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥१५॥

तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं तपों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। तपंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं तपोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य ह वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां।

स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेति॥१६॥

त इश्रद्धा ऽब्रंवीत्। प्रजांपते श्रद्धया वै श्रांम्यसि। अहमु वै श्रद्धाऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्या श्रद्धा भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। श्रद्धायें चरुम्। अनुमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सत्या श्रद्धाऽभंवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या ह वा अस्य श्रद्धा भवति। अनु स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन हविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहाँ श्रुद्धायै स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१७॥ तः सत्यमंब्रवीत्। प्रजांपते सत्येन वै श्रांम्यसि।

स्वगाय लाकाय स्वाहाउभ्रय स्विष्टकृत स्वाहात॥१७॥
त॰ स्त्यमंब्रवीत्। प्रजांपते स्त्येन वै श्रांम्यसि।
अहमु वे स्त्यमंस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्य॰ स्त्यं भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स् एतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। स्त्यायं च्रम्। अनुंमत्ये च्रम्। ततो वे तस्यं स्त्य॰ स्त्यमंभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्य॰ हु वा अस्य स्त्यं भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हुविषा यज्ते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां स्त्याय स्वाहां। अनुंमत्ये

स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयेँ स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१८॥

तं मनों ऽब्रवीत्। प्रजापते मनंसा वै श्राम्यसि। अहमु वै मनों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं मनों भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं निरंवपत्। मनसे चुरुम्। अनुमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं स्तयं मनोऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। स्तय ह वा अस्य मनो भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हिवषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा मनसे स्वाहाँ। अनुमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१९॥ तं चरणमब्रवीत्। प्रजापते चरणेन वै श्राम्यसि। अहमु वै चरणमस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यं चरणं भविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमष्टाकपालं

त चरणमश्रवात्। प्रजापत् चरणन् व त्राम्यासा अहम् व चरणमस्मि। मां न यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं चरणं भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। चरणाय चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं चरणमभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमविन्दत्। सृत्य ह् वा अस्य चरणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरंणाय स्वाहाँ। अनुंमत्यै स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयेँ स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥

ता वा एताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुंवित्तयो नामं। तपंः प्रथमा रक्षिति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनश्चतुर्थीम्। चरणं पश्चमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भंवित। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदं। तास्वन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां दंद्यात्कर्सं चं। स्त्रियै चाऽऽभार समृंद्धौ॥२१॥

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधियज्ञो निर्मितः। नैन १ श्वप्तम्। नाभिचंरित्मागंच्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दशंहोतॄणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतृणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चेहोतॄणाम्। वाग्घोता षङ्कोतॄणाम्। महाहंविर्होतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वे चतुर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चेहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशंः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविवद्या। एतद्भेषजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

पुतान् योऽध्यैत्यछंदिर्द्र्शे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अन्पृब्रवः सर्वमायुंरेति। विन्दते प्रजाम्। रायस्पोषं गौपृत्यम्। ब्रह्मवर्चसी भंवति। पुतान् योऽध्यैतिं। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। पुतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥

पुतैरंधिवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययौ। पुतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरेति। पुतैर्ग्निं चिन्वीत स्वर्गकांमः। पुतैरायुंष्कामः। प्रजापशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दशंहोतार्म्दंश्चम्पंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यजुंषी पत्यौं च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुर्होतारम्। पृश्चादुदंश्चं पश्चंहोतारम्। उत्तरतः प्राश्चन् षङ्कोतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चन्ं सप्तहोतारम्। हृदंयं यजून्ंषि पत्यश्च। यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्रोंकं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥ सदेवम्गिं चिन्ते। रथसंम्मितश्चेत्व्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणेव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेत्व्यः। एतावान् वै रथः। यावंत्पृक्षः। रथसंम्मितमेव चिन्ते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सवाँ ह्रोकानंहीनेनं। अथो स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर एपणोति। आत्मा हि वरेः। एकंवि शित्रिद्धिणा ददाति। एक्वि श्रो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्र स्वर्गं लोकमाँ प्रोति॥२८॥

असार्वादित्य एंकविश्वाः। अमुमेवाऽऽदित्यमाँप्रोति। शृतं दर्दाति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतितिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसम्मितः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। अन्विष्ट्कं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वयार्शसा २९॥

सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदि न विन्देतं। मन्थानेतावतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामायाग्निश्चीयतेँ। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वयार्शस। सर्वस्याऽऽस्यैं। सर्वस्यावंरुद्धै॥३०॥ हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेंति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमृग्निं चिनुते। तदेतत्पंशुब्न्धे ब्राह्मंणं ब्रूयात्। नेतरेषु युज्ञेषुं। यो ह वै चतुरहोतॄननुसव्नं तंपीयत्व्यान्ं वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन सोमपीथो नमिति। पृते वै चतुंर्होतारोऽनुसवनं तेपियत्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृञ्जीरन्। तेभ्यो यथाश्रुद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवैतित्क्रियते। नास्याग्निं वृञ्जते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भंवति। यावंदुत्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञप्रुष्ण् सम्मितम्। तेजो हिर्ण्यम्। यदि हिर्ण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौत्रामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण् वा एष व्यृध्यते। योऽग्निं चिनुते॥३३॥ यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतामाप्नोति। एतासामेव देवतानाश् सायुंज्यम्। सार्ष्टिता रे समानलोकर्तामाप्नोति। य पृतमृग्निं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। पृतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथो नाचिकेते॥३४॥

यचामृतं यच् मर्त्यम्। यच् प्राणिति यच् न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्युर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पार्सवो

भूमैं:॥३५॥

सङ्ख्यांता देवमाययाँ। सर्वास्ताः। यावंन्त ऊषाँः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिंरिह्ताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अपस्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्करा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामधि॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः॥३७॥ यावंन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामिधं। सर्वास्ताः। यावंन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वै। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरसपिंणः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंत्कृष्णायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंश्लोहायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सीस् सर्वं त्रपुं। देवत्रा यर्च मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वे १ हिरेण्य १ रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वे १ सुर्वर्णे १ हिरेतम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४०॥

सर्वा दिशों दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अन्तरिक्षं च् केवंलम्। यचास्मिन्नंन्त्राहितम्। सर्वास्ताः। आन्त्रिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥ गुन्धर्वापस्रसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिललान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सेलिलान्। स्थावराः प्रोष्याश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धृनिष्ट् सर्वान्थ्वष्ट्रसान्। हिमो यचे शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरीचीन् वितंतान्। नीहारो यर्च शीयतैं। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वान्थ्स्तनियृत्न्। ह्रादुनीर्यर्च शीयतैं। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमपसुचरं च यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्वन्तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षंन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वयार्रस् सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निः सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वर्रणं भगम्। सर्वास्ताः। सत्यः श्रद्धां तपो दमम्। नामं रूपं च भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्धुवा सींद॥४५॥

सर्वान्दिव सर्वान्देवान्दिव। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्।

-[७]

सर्वास्ता इष्टेकाः कृत्वा। उपं कामदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूर्षेष् सामांनि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चे। सर्पदेवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चे लोका ये चोलोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्बृह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्च केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्थ्सर्वान्मासान्। संवथ्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत्र सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुषां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्वद्भुवा सीद॥४८॥ ऋचां प्राचीं महती दिगुंच्यते। दक्षिणामाहुर्यजुंषामपाराम्।

अर्थर्वणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते।

ऋग्भिः पूर्वाह्ने दिवि देव ईयते। युजुर्वेदे तिष्ठति मध्ये

अहं। सामुवेदेनां ऽस्तम्ये महीयते। वेदैरशूंन्यस्त्रिभिरेति

सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता सर्विशो मूर्तिमाहः। सर्वा गतियां जुषी हैव शश्वत्॥४९॥

सर्वं ते जाः सामरूप्य स् हं शश्वत्। सर्व हेदं ब्रह्मणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहः। यजुर्वेदं क्षेत्रियस्यां ऽऽहुर्योनिम्। सामवेदो ब्राह्मणानां प्रसूतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूचः। आदुर्शमृग्निं चिन्वानाः।

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवथ्स्वयम्। स्त्यः ह् होतैषामासीत्। यद्विश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवथ्सरान्। भूतः हं प्रस्तोतैषामासीत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इदः सर्वः

पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वंर्षसहस्राणि। दीक्षिताः

सत्रमांसत॥५०॥

सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासाश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्चरंसद्वह्मणस्तेजः। अच्छावाकोऽभवद्यशः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजांनमुदंवहत्। ध्रुवगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-द्वाव्यणंः। यद्विश्वसृज् आसंत्। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्तिषिः। आग्नींद्वाद्विदुषीं सृत्यम्। श्रद्धा हैवायंज्ञथ्स्वयम्। इरा पत्नीं विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन-हृविः॥५३॥

ड्ध्म १ ह् क्षुचैंभ्य उग्ने। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागंषा १ सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजान्ती। कुल्पृतृत्राणिं तन्वानाऽहंः। सुङ्स्थाश्चं सर्वृशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्रो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। स्हस्रंसम् प्रस्तेन्

यन्तंः। ततों ह जज्ञे भुवंनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शुकुनिर्ब्रह्म नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनौ। नावंदिविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान र सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिस्र्वृतः संवथ्सराः। पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतः पश्चंपश्चाशतं एकविश्वाः। विश्वसृजारं सहस्रंसंवथ्सरम्। एतेन् वै विश्वसृजं इदं विश्वंमसृजन्त। यद्विश्वमसृंजन्त। तस्माद्विश्वसृजंः। विश्वंमेनाननु प्रजायते। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतां यन्ति। एतासामेव देवतानाश् सायुंज्यम्। सार्थितारं समानलोकतां यन्ति। य एतद्ंप्यन्तिं। ये चैन्त्प्राहुंः। येभ्यंश्चेन्त्प्राहुंः॥५६॥ ॐ॥

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥